मास्टर ऑफ आर्ट्स (संस्कृत)

Master of Arts (Sanskrit)

चतुर्थ सेमेस्टर - एम0ए0एस0एल – 610

संस्कृत साहित्य की आधुनिक प्रतिभाएं : भाग-02

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,हल्द्वानी-263139

Toll Free : 1800 180 4025
Operator : 05946-286000
Admissions : 05946-286002
Book Distribution Unit : 05946-286001
Exam Section : 05946-286022
Fax : 05946-264232
Website : http://uou.ac.in

पाठ्यक्रम समिति

कुलपति (अध्यक्ष)
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी
प्रोफे0 ब्रजेश कुमार पाण्डेय,
संस्कृत एवं प्राच्य विद्या अध्ययन संस्थान,
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
प्रोफे0 रमाकान्त पाण्डेय,
राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान जयपुर परिसर,राजस्थान
प्रोफे0 कौस्तुभानन्द पाण्डेय,
संस्कृत विभाग, अल्मोड़ा परिसर,
कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल

प्रो0 एच0 पी0 शुक्ल-(संयोजक)
निदेशक, मानविकी विद्याशाखा
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी
डॉ0 देवेश कुमार मिश्र,
सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी
डॉ0 नीरज कुमार जोशी,
असिस्टेन्ट प्रोफेसर-ए.सी.,संस्कृत विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

पाठ्यक्रम समन्वयक एवं सम्पादन

डॉ0 नीरज कुमार जोशी
असिस्टेन्ट प्रोफेसर-ए.सी.,संस्कृत विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

इकाई लेखन	खण्ड एवं इकाई संख्या
डॉ0 योगेन्द्र कुमार असिस्टेन्ट प्रोफेसर,नेशनल पी0जी0 कालेज, बड़हलगंज,गोरखपुर	**खण्ड 1 (इकाई 1 से 3)**
डॉ0 नीरज कुमार जोशी असिस्टेन्ट प्रोफेसर-ए.सी.,संस्कृत विभाग, उ0 मु0 वि0 वि0, हल्द्वानी	**खण्ड 1 (इकाई 4)**
डॉ0 कंचन तिवारी असिस्टेन्ट प्रोफेसर, उत्तराखण्ड संस्कृत विश्वविद्यालय, हरिद्वार	**खण्ड 1 (इकाई 5)** **खण्ड 2 (इकाई 1 से 4)**

प्रकाशक: (उ0 मु0 वि0, हल्द्वानी)263139
कॉपीराइट @ उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
पुस्तक का शीर्षक - संस्कृत साहित्य की आधुनिक प्रतिभाएं : भाग-02
प्रकाशन वर्ष : 2022
ISBN No.978-93-84632-29-8
मुद्रक:

नोट- यह पुस्तक छात्र हित में शीघ्रता के कारण, प्रकाशित की गयी है। संशोधित व परिवर्द्धित संस्करण का प्रकाशन पाठ्यक्रम के पूर्ण लेखन व सम्पादन के पश्चात् किया जायेगा। इसका उपयोग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय की लिखितअनुमति के बिना अन्यत्र किसी भी रूप में नहीं किया जा सकता।

अनुक्रम

खण्ड-01 गीतिकाव्य एवं उपन्यास पृष्ठ संख्या 1-4

इकाई -01 उन्नीसवीं शताब्दी के संस्कृत गीतिकाव्य की प्रमुख प्रवृत्तियां कवि एवं उनके काव्य **04-30**

इकाई -02 बीसवीं शताब्दी के संस्कृत गीतिकाव्य की प्रमुख प्रवृत्तियां कवि एवं उनके काव्य **31-59**

इकाई -03 आधुनिक संस्कृत उपन्यासों का परिचय (19 वीं से 20 वीं शताब्दी के संस्कृत उपन्यास) **60-88**

इकाई-04 आधुनिक संस्कृत लघुकथाकार-गिरधर शर्मा चतुर्वेदी, भट्ट मथुरा नाथ शास्त्री, देवर्षि कलानाथ शास्त्री, बिन्देश्वरी प्रसाद मिश्र, अभिराज राजेन्द्र, प्रभु नाथ द्विवेदी, राधावल्लभ त्रिपाठी, इच्छा राम द्विवेदी, अन्य प्रमुख **89-102**

इकाई-05 संस्कृत साहित्य की आधुनिक विधाएं-गजल, आधुनिक छन्द, सानेट, हाईको, लोकगीत, युगबोधपरक कविताएं, रेडियो रूपक **103-117**

खण्ड-02 संस्कृत काव्य के आधुनिक सिद्धान्त पृष्ठ संख्या 118

इकाई -01 सौन्दर्य एवं रस सिद्धान्त- गोविन्द चन्द्र पाण्डेय, चन्द्रमौली द्विवेदी, गिरधारीलाल शर्मा **119-132**

इकाई -02 अलंकार एवं चतुर्धाम सिद्धान्त- रेवा प्रसाद द्विवेदी, राधावल्लभ त्रिपाठी **133-145**

इकाई-03 काव्य में सत्यता का सिद्धान्त- ब्रह्मानन्द शर्मा **146-159**

इकाई-04 अन्य आधुनिक काव्यशास्त्री- छज्जू राम शर्मा, रामप्रताप वैदिक, रहस बिहारी द्विवेदी, अन्य प्रमुख **160-175**

चतुर्थ सेमेस्टर/SEMESTER-IV

खण्ड–प्रथम

गीतिकाव्य एवं उपन्यास

खण्ड–प्रथम, इकाई- 01

उन्नीसवीं शताब्दी के संस्कृत गीतकाव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

कवि एवं उनके काव्य

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 गीतिकाव्य का स्वरूप

1.4 गीतिकाव्य के भेद

- 1.4.1 पारम्परिक विधाश्रित गीतिकाव्य
- 1.4.2 नूतन विधाश्रित गीतिकाव्य
- 1.4.3 सामाजिक चेतनापरक गीतिकाव्य
- 1.4.4 प्रशस्तिपरक गीतिकाव्य
- 1.4.5 पुनरूत्थानवादी गीतिकाव्यं
- 1.4.6 शास्त्रपरक गीतिकाव्य

1.5 उन्नीसवीं शताब्दी के प्रमुख कवि एवं उनके काव्य

1.6 सारांश

1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1.9 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई का शीर्षक है 19 वीं शताब्दी के संस्कृति गीतिकाव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ कवि एवं उनके काव्य। इसमें गीतिकाव्य का स्वरूप भेद 19 वीं शताब्दी के प्रमुख कवि एवं उनके काव्य पर विचार किया गया है। गीति शब्द गै धातु से क्तिन प्रत्यय जोड़कर बनता है। साम को ही बाद में गीति के नाम से अभिहीन किया गया। गीति के गुणों से युक्त खण्डकाव्य को ही गीतिकाव्य कहते हैं। डा0 कपिलदेव द्विवेदी, आचार्यराधा बल्लभ त्रिपाठी, डा0 जगन्नाथ पाठक और प्रोफेसर राजेन्द्र मिश्र ने गीति के स्वरूप पर जो विचार व्यक्त किया है उसे यहाँ प्रस्तुत किया गया है। गीति काव्य की प्रवृत्तिया, आयाम या भेद समानार्थी हैं। प्रवृत्ति शब्द के स्थान पर यहाँ भेद शब्द को ही अपनाया गया है। 19वीं शताब्दी में लिखी गयी गीतियों को छः भेदों में रखा गया है। 1. पारम्परिक विधाश्रित गीतिकाव्य, 2. नूतन विधाश्रित गीतिकाव्य, 3. सामाजिक चेतना परक गीतिकाव्य, 4. प्रशस्तिपरक गीतिकाव्य, 5. पुनरूत्थानवादी गीतिकाव्य, 6. शास्त्रपरक गीतिकाव्य। 19 वीं शताब्दी के कवि एवं उनके काव्य के अन्तर्गत लल्ला दीक्षित, श्रीधरनम्बी, विश्वनाथ आदि महाकवियों के जीवन परिचय एवं उनकी रचनाओं को प्रस्तुत किया गया है।

उपर्युक्त विषयवस्तु से सम्बन्धित अभ्यास प्रश्न भी दिये गये हैं। इकाई का सारांश भी प्रस्तुत किया गया है। सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री, सन्दर्भ ग्रन्थ सूची व निबन्धात्मक प्रश्न भी इस इकाई के गौरव को बढ़ाते हैं।

1.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप—

- ❖ गीतिकाव्य के स्वरूप से परिचित हो सकेंगे।
- ❖ 19 वीं शताब्दी में लिखी गयी गीतियों के प्रमुख भेद से परिचित हो सकेंगे।
- ❖ प्रमुख गीति कवि एवं उनकी रचनाओं से परिचित हो सकेंगे।
- ❖ तत्कालीन समाज की दशा एवं दिशा को रेखांकित करने में समर्थ हो सकेंगे।
- ❖ सांस्कृति निरन्तर जीवित प्रवाहमान है, इसका सम्यग ज्ञान प्राप्त करेंगे।

1.3 गीतिकाव्य का स्वरूप

गीति, गीत, गेय और ज्ञान- ये सब परस्पर सदृश हैं। प्रत्यय की भिन्नता के कारण इन शब्दों के आकार में भेद है। धातु की दृष्टि से ये चारो शब्द गै धातु से ही निष्पन्न हैं। गै धातु में क्तिन प्रत्यय जोड़ने से गीति शब्द बनता है और क्त प्रत्यय जोड़ने से गीत। उसी धातु में यत् प्रत्यय जोड़ने गेय तथा ल्युट प्रत्यय जोड़ने से गान शब्द बनता है। इस प्रकार गीति, गीत, गेय, गान परस्पर एकार्थक प्रतीत होते हैं। गीतियों की साम संज्ञा है। गीतियाँ लयों तथा मूर्च्छनाओं से देवता, मनुष्य, पशु, पक्षी, हाथी, मृग, सर्प आदि का भी हृदय आकृष्ट करने वाली होती हैं। गीति के दस गुणों एवं दस दोषों का उल्लेख नारद पुराण

में हुआ है। गीति के दस गुण हैं- रक्त, पूर्ण, अलंकृत, प्रसन्न, व्यक्त, विक्रुष्ट, श्लक्ष्ण, सम, सुकुमार तथा मधुर। इसके दस दोष हैं- शंकित, भीषण, भीत, उद्धुष्ट, अनुनासिक, काकस्वर, मूर्धगीत, स्थानविवर्जित, विस्वर, विरस, विश्लिष्ट, विषमाहत, व्याकुल तथा तालहीन।

शास्त्रीय दृष्टि से गीतिकाव्य को खण्डकाव्य कहा जाता है। क्योंकि इसमें महाकाव्य के पूरे गुण नहीं होते। (खण्डकाव्यं भवेत् काव्यस्यैकदेशानुसारि च) .....वेदों से लेकर आज तक निरन्तर गीतियों की रचनायें हो रही हैं। डा0 कपिलदेव द्विवेदी ने गीतकाव्य के स्वरूप पर विचार करते हुए अपना अभिमत दिया है गीतिकाव्य काव्य का वह स्वरूप है जिसमें काव्य तत्व के साथ संगीतात्मकता होती है इन पद्यों को वाद्यों के साथ गाया जा सकता है.....गीतिकाव्य भाव प्रधान होते हैं। इनमें अन्तरात्मा की ध्वनि होती है। जीवन का कोई एक पक्ष वर्णित होता है।

डा0 राधावल्लभ त्रिपाठी के अनुसार- 'आजकल कभी मुक्तक को तथा कभी राग काव्य को गीति काव्य कहा जाता है। आधुनिक समीक्षा में मुक्तक या गीतिकाव्य ये दोनों शब्द अंग्रेजी के लिरिक शब्द के अनुवाद के रूप में प्रयुक्त होने लगे हैं। लिरिक अपने में पूर्ण कवि के अन्तरंग मनोभावनाओं को व्यक्त करने वाला एक गेय छन्द या पद्य है। डा0 जगन्नाथ पाठक का विचार है- **'यदा कश्चिद् रचनाकार: प्रकृते:रम्यत्वं निरीक्ष्य, प्रियाया विरहेण, ईश्वरप्रेम्णा राष्टप्रेम्णा कमपि भावोच्छवसितां स्वानुभूतिक्षणसंवलितां भावस्थितिमभिव्यनक्ति तदा गीतिकाव्यं सृष्टं भवति।**

डा0 अभिराजराजेन्द्र मिश्र ने संस्कृत का अर्वाचीन समीक्षात्मक काव्यशास्त्र में दो स्थलों पर गीतकाव्य के स्वरूप पर प्रकाश डाला है- 1. किसी पुरूषार्थ (धर्म अर्थ अथवा काम) को जो आंशिक (असांगोपांग) वर्णन होता है अथवा नायक के आद्यन्त जीवन का जो खण्डवर्णन होता है उसे खण्ड काव्य कहते हैं। यही खण्डकाव्य अपने इतिवृत्त के अनुरोधवश पृथक अर्थ वाले विविध नामों (संज्ञाओं को धारण करता है).....उसी को गीतिकाव्य कहते हैं। गीतितत्व का प्रयोग होने के कारण- पेज 359, दो अभिराजयशोभूषणं के गीति स्वरूप को बतलाने वाले लक्षण को उद्धृत करने वाले श्री मिश्र जी कहते हैं- घाम में जले भूने बटोही को व्यंजनों (पकवानों) से भी वैसी तृप्ति नहीं प्राप्त होती है जैसी कि एक गिलास पानी से, ठीक उसी प्रकार सहृदय पाठक को भी वृहद् कलेवर महाकाव्य के अनुशीलन से वैसी आनन्दानुभूति नहीं होती जैसी कि तत्क्षण गीतश्रवण से। इस लिए अलंकार, रस, औचित्य, ध्वनि, वक्रोक्ति एवं रीति की चर्चा व्यर्थ है। क्योंकि यह निश्चित है गीत ही काव्य की आत्मा है।

गीतिकाव्य शास्त्रीय दृष्टि से खण्डकाव्य है। इसे लिरिककाव्य के अनुवाद के रूप में देखा जाता है। गीतकाव्य राग का परिवाह करने वाला और श्रोता के चित्त को बरबस आकृष्ट करने की क्षमता वाला और सद्यः आनन्दानुभूति कराने वाला तत्व है।

1.4 गीतिकाव्य के भेद

गीतियाँ चित्त को आकृष्ट करने वाली राग परिवाहिनी होती हैं। उन्नीसवीं शती में जो गीतियाँ प्रकाश में आयीं उन्हें कई भेदों में रखा जा सकता है। 1. पारम्परिक विधाश्रित गीतिकाव्य, 2. नूतनविधाश्रित

गीतिकाव्य, 3. सामाजिक चेतनापरक गीतिकाव्य, 4 प्रशस्तिपरक गीतिकाव्य, 5. पुनरूत्थानवादी गीतिकाव्य, 6. शास्त्रीय गीतिकाव्य।

1.4.1 पारम्परिक विधाश्रित गीतिकाव्य

उन्नीसवीं शताब्दी में पहले से प्रचलित विधाओं में गीतियों का लेखन सतत् चलता रहा है। श्रृंगार प्रधान ऋतु वर्णनपरक दूतकाव्य, स्तोत्रकाव्य, रागात्मक गीतकाव्य, लहरीकाव्य, समस्या पूर्ति एवं श्लेषकाव्य निरन्तर लिखे जाते रहे हैं। श्रृंगार प्रधानपरक जो गीतिकाव्य मेघदूतम् से प्रारम्भ हुआ वह लेखन निरन्तरता बनाये हुए है। इस तरह की रचनाओं में विधुशेखर भट्टाचार्य का 'यौवनविलास' व ताराचरण तर्करत्न का काननशतकम् उल्लेखनीय है। सबसे पहले ऋतुओं का वर्णन करने वाला गीतिकाव्य महाकवि कालीदास ने लिखा जो ऋतुसंहार के नाम से प्रसिद्ध है। उस तरह की रचनायें उन्नसवीं शती में भी दिखाई पड़ती हैं। प्रमथनाथ का वसन्ताष्टक, अन्नदाचरण का ऋतुचित्रम्, कृष्णभट्ट की मुक्तकमुक्तावली इस कोटि के ग्रन्थों में आते हैं। दूतकाव्य की परम्परा मेघदूतं से जो शुरू हुई थी उस विधा में इस शती में भी निरन्तर रचना होती रही है। इस दृष्टि से त्रिलोचन शर्मा का तुलसीदूतम्, राजवल्लभ मिश्र का उद्धवदूतम, कृष्णनाथ न्यायपंचानन का वात्दूतम्, गौरगोपाल का काकदूतम्, हरिहर का कोकिलदूतम्, रामगोपाल का कीरदूतम् उल्लेखनीय रचनायें हैं। स्तोत्रकाव्यों की रचना भी निरन्तर होती रही है। इस दृष्टि से रामप्रसाद का रमास्तवः, केशवसूरि का केशवस्तोत्र आदि महत्वपूर्ण रचनायें हैं। रागात्मक गीतकाव्य का लेखन गीतगोविन्दम् से प्रारम्भ हुआ। उस शिल्प का आश्रय लेकर रामवर्मा कुलशेखर ने कुचेलोपाख्यानम् तथा अजामिलोपाख्यानम् का प्रणयन किये। राजा विश्वनाथ सिंह ने संगीतरघुनन्दन लिखा। रागात्मक गीतकाव्यों में भक्तिभावना समर्पण सरस पदावली में कथा का निर्वाह मिलता है। संगीत रघुनन्दन का वसन्त वर्णन हृदयहारी है जो गीतगोविन्दम् से प्रभावित है-

विहरति रघुपतिरिह ऋतुराजे।
किसलयकुसुमसमाकुलतरुकुलकोकिलकीरसमाजे।
विकसितमञ्जुलवञ्जुलपुञ्जनिकुञ्जनिकुञ्जमहोज्ज्वलभासे।
विकसितसारससङ्गतरुणलतिकाततिलीलासुखदसमीरे।
तरुपरिरम्भणवलितलतावलिवनविकलीकृतधीरे।

समस्यापूर्ति एवं श्लेषकाव्य भी निरन्तर रचे गये। श्रीरामशास्त्री भागवताचार्य की समस्यापूर्ति- पिपीलिका चुम्बति चन्द्रबिम्बम् या इन्हीं कामशकगलरन्ध्रे हस्तियूथं प्रतिष्टम् कल्पनाओं की मञ्जुलता एवं मनोरंजन की विषयवस्तु के कारण बहुत लोकप्रिय हुई और विद्वानों को इस तरह की सर्जना के लिए प्रेरित करने वाली भी बनी। श्लेषकाव्यों की कोटि में पंचानन तर्करत्न का सर्वमंगलोदयम् उल्लेखनीय है। इस काल खण्ड में लहरीकाव्य भी प्रभूत मात्रा में रचे गये।

1.4.2 नूतन विधाश्रित गीतिकाव्य-

इस काव्य में पारम्परिक रचनाओं के साथ-साथ नई विधाओं में भी लेखन हुआ। शोक गीत, व्यंग्य प्रधान पद्य रचनायें भी अस्तित्व में आयीं। यद्यपि करूण रस प्रधान प्रसंग संस्कृत महाकाव्यों में अनेकशः देखे

जा सकते हैं। परन्तु स्वतन्त्र रूप से विलापकाव्य या शोकगीति का प्रचलन अंग्रेजी साहित्य के एलिजी विधा का प्रभाव है। शोकगीति काव्यों में उल्लेखनीय रचनायें हैं- करूणा, त्रिंशिका, विलापलहरी, शोकोच्छवाशः, अश्रुविसर्जनम् आदि।

विलाप काव्यों के साथ ही साथ व्यंग्य प्रधान गीतिकाव्यों की परम्परा भी इसी काल खण्ड में शुरू हुई। इस विधा में शेटायर की अवधारणा के समकक्ष युग की विसंगतियों का उद्घाटन आदि विन्दु गीतियों के केन्द्र बने। इस तरह की रचना में सूर्यग्रहणम को रखा जाता है।

इसी सती में वस्तुनिष्ठ गीतियों के स्थान पर वैयक्तिक भावनाओं की अभिव्यक्त करने वाली गीतियां भी लिखी गयीं। इस दृष्टि से उल्लेखनीय रचना है- तिलक महाशयस्य तारागृहवासः।

1.4.3 सामाजिक चेतनापरक गीतिकाव्य-

इस सती में कवियों ने समाज और उसकी प्रवृत्तियों, दुष्प्रवृत्तियों को पहचाना है। तथा उन विषयों पर गीतियाँ लिखा है। नूतन शिक्षा पद्धति, पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव से उत्पन्न होने वाली सामाजिक दुष्प्रवृत्तियों पर कवियों में विरोध का स्वर दिखाई पड़ता है। नागरिकों की जीवनचर्या में आये परिवर्तनों को कलि परिदेवनसतकम् में चित्रित किया गया है-

सूर्योदये क्वथितबीजकषायपानं,
धौतं च सार्वदिककञ्चुकमेकवासः।
शौचं च सान्ध्यमपि नो शिवकर्म तेषां।
म्लेच्छैः सहातनमथानियमः च जग्धिः।

1.4.4 प्रशस्तिपरक गीतिकाव्य-

संस्कृत गीतिकाव्यों में उन्नीसवीं शती में बहुत सी प्रशस्तिपरक रचनायें लिखी गयीं। संस्कृत कवियों का एक बहुत बड़ा वर्ग ऐसा था जिन्होंने समय-समय पर अंग्रेजी शासकों के चरित पर काव्य लिखे। इस दृष्टि से अप्पाशास्त्री राशिवडेकर का चक्रवर्तिन्याः घोषणापत्रम्, प्रिंस आफ वेल्स के भारत आगमन पर श्रीश्वर विद्यालंकार का प्रिंसपञ्चाशत्, महेशचन्द्र का अभिनन्दनपत्रम् उल्लेख्य है। 1870 में वाराणसी से प्रकाशित सुमनोऽञ्जलिः में डयूक आफ एडिनबरा' की प्रशस्ति है। मानसोपायनम् में प्रिंस आफ वेल्स की प्रशस्ति है। इस क्रम में जुबिलिगानम्, चक्रवर्तिविक्टोरियाविजयपत्रम्, आङलाधिराज स्वागतम्, एडवर्डमहोदयाभिनन्दनम्,विक्टोरियाप्रशस्ति, विक्टोरियाचरितसंग्रहः, विक्टोरिया प्रशस्तिः, राजपुत्रागमनम्, प्रिंसपञ्चाशत्, प्रीतिकुसुमाञ्जलिः, विक्टोरिया वैभवम् आदि उल्लेखनीय है।

इस काल के कवियों ने अंग्रेजों के अतिरिक्त अपने आश्रयदाता राजाओं, सामन्तों आदि को विषय बनाकर तथा उनके जीवन के विविध पक्षों पर रचनायें लिखी। इस दृष्टि से तुलाभारप्रबन्धम्, विशाखविलासः, केरलवर्म विलासः, रमेश्वरकीतिकौमुदी, शाहोः कुमारावाप्तिः, उद्वाहमहोत्सवम्, लक्ष्मीश्वरीचरितम्, जयसिंहाश्वमेधीयम, केरलविलासादि उल्लेख्य हैं।

1.4.5 पुनरूत्थानवादी गीतिकाव्यं-

पाश्चात्य सभ्यता के दुष्प्रभाव आंग्लशासकों के द्वारा भारतीय संस्कृति के विरूद्ध किये जाने वाले दुष्प्रचारों से आहत अनेक कवियों ने भारतीय संस्कृति की गरिमा का बखान किया है और वर्तमान की तुलना में अपनी संस्कृति की उज्जवलता और भव्यता को पुनः अपनी-अपनी रचनाओं में प्रतिष्ठित किया है। इस दृष्टि से श्रीनिवास दीक्षित का कलिपरिदेवनशतकम् अन्नदाचरण, तर्करत्न का तद्तीतमेव उल्लेखनीय हैं। भारतीयों को अपने अतीत का बोध वर्तमान में उन आदर्शों एवं जीवन मूल्यों की पुनः प्रतिष्ठा हो इस आशय को लेकर अन्नदाचरण कहते हैं-

यदा त्रिकालेक्षणशक्तिमन्तो ज्योतिर्विदो ज्योतिरनन्तदीप्त्या।
निरूपयन्ति स्म गतिं ग्रहाणां स्थितिं च तां तां तदतीतमेव।।
यदा कवीनां रसभावपूर्णोत्कण्ठादनन्तानि रसावशानि।
पद्यानि निःसृत्य सहस्रवक्त्रे दिदीपिरे हा तदतीतमेव।।
अनन्तभक्ताः समनन्तनादैरनन्तगीतैः समनन्तभोग्यैः।
यदार्चयन् जन्मधरां समष्ट्या गरीयसीं हा तदतीतमेव।।
हा वैदिकानां लयतानशुद्धसामादिगीतैरतिविस्मितः सन्।
विदग्धसार्थोऽपि च भारतेऽस्मिन् प्रीतिं नवामाप यदा गतं तत्।।

अर्थात् जब तीनों कालों, भूत-भविष्य-वर्तमान को देखने की सामथ्र्य वाले ज्योतिषी विद्वान् लोग लोग ज्योतिष विषय की अनन्त दीप्ति से ग्रहों की उस-उस गति और स्थिति का निरूपण किया करते थे, वह सब बीत गया। जब कवियों के रस-भाव से भरे कण्ठ से अनन्त रस-भरे पद्य निकलकर हजारोंके मुखों से शोभित होते थे, हाय, वह बीत गया। जब अनन्त नादों, अनन्तगीतों तथा अनन्त अनन्त भोग्य पदार्थोसे मिल-जुल कर अनन्त भक्तगण गरीयसी जन्म-भूमि की अर्चना करते थे, हाय वह बीत गया। जब इस भारत में विदग्धजनों का समूह वैदिक विद्वानों के लय-ताल से शुद्ध साम आदि के गानों से अतिविस्मित होकर अतिशय आनन्द का अनुभव करता था, हाय, वह बीत गया।)

1.4.6 शास्त्रपरक गीतिकाव्य

शास्त्रपरक काव्य लेखन की परम्परा प्राचीनकाल से ही संस्कृत साहित्य में विद्यमान है। उन्नीसवीं शती तो वैचारिक आलोडन और उथल-पुथल का युग था। अतः यह स्वाभाविक था कि कविता में विचारों की प्रधानता हो तथा युग के तर्कों, विवादों और संशयों के साथ-साथ कवि अपनी परंपरा में निहित विवेक का भी काव्य में उपस्थापन करें। उन्नीसवीं शताब्दी के संस्कृत काव्य की एक विशेषता यह भी है कि काशी तथा अन्य विश्वकेन्द्रों में रहने वाले इस युग के दिग्गज शास्त्रज्ञ पण्डितों ने प्रचुर मात्रा में संस्कृत में काव्य रचनायें कीं। स्वाभावतः ही ऐसी रचनाओं में शास्त्रज्ञान, पाण्डित्य तथा चिन्तन के स्वर प्रमुख हैं। पं0 गंगाधर शास्त्री का 'अलिविलासिसंलापः' इस दृष्टि से एक उल्लेखनीय काव्य है। पं0 शिवकुमार शास्त्री के 'यतीन्द्रजीवनचरितम्' काव्य में शास्त्रचर्चा और विचारविमर्श के प्रसंग बहुसंख्य हैं। नैतिक उपदेश की दृष्टि से श्री धीरेश्वर की 'विद्यामञ्जरी' इस काल में लिखी गयी रचना है।

अभ्यास प्रश्न

1.गीति की उत्पत्ति किस धातु से हुई है-

क. गेय धातु ख. गाय धातु

ग. गै धातु घ. इनमें से कोई नहीं

2.गीति के गुण हैं-

क. दो ख. चार

ग. सात घ. दस

3. गीति के दस दोषों एवं दस गुणों का उल्लेख है-

क. नारद पुराण ख. भागवत महापुराण

ग. वाराह पुराण घ. इनमें से कोई नहीं

4. यदा कश्चिद् रनाकारः प्रकृतेः रम्यत्वं.....किसका अभिमत है-

क. राजेन्द्र मिश्र ख. जगन्नाथ पाठक

ग. राधाबल्लभ त्रिपाठी घ. प्रो0 के0के0 मिश्र

5.19वीं शताब्दी के गीतियों के कुल भेद हैं-

क. दो ख. चार

ग. छः घ. तीन

6.स्तोत्र काव्य, दूत काव्य को रखा जाता है-

क. पारम्परिक विधाश्रित गीतिकाव्यों में ख. नूतन विधाश्रित गीतिकाव्यों में

ग. प्रशस्तिपरक गीतिकाव्य में। घ. शास्त्रपरक गीतिकाव्य में।

7.यौवन विलास के लेखक हैं-

क. विधु शेखर भट्टाचार्य ख. प्रमथनाथ

ग. हरिहर घ. विश्वनाथ सिंह

8.संगीत रघुनन्दन है-

क. रागात्मक गीतिकाव्य ख. स्तुतिपरक

ग. ऋतु परक घ. दूतपरक

9.विलाप लहरी है-

क. नूतन विधाश्रित गीतिकाव्य ख. प्रशस्तिपरक गीतिकाव्य

ग. पुनरूत्थानवादी गीतिकाव्य घ. शास्त्रपरक गीतिकाव्य

10. विक्टोरिया प्रशस्तिः रचना है-

क. नूतन विधाश्रित गीतिकाव्य ख. प्रशस्तिपरक गीतिकाव्य

ग. पुनरूत्थानवादी गीतिकाव्य घ. शास्त्रपरक गीतिकाव्य

11. अलिविलाससंलापः के रचनाकार हैं-

क. पं0 गंगाधर शास्त्री ख. पं0 शिवकुमार शास्त्री

ग. धीरेश्वर घ. इनमें से कोई नहीं।

12. चक्रवर्तिन्याः घोषणा पत्रम् की रचना किसने किया है-

क. अप्पा शास्त्री राशिवडेकर ख. महेशचन्द्र

ग. शिवकुमार शास्त्री घ. लल्ला दीक्षित

13. तद्तीतमेव कविता के रचनाकार हैं-

क. अन्नदाचरण तर्करत्न ख. अप्पाशास्त्री राशिवडेकर

ग. शिवकुमार शास्त्री घ. लल्ला दीक्षित

14. विहरति रघुपतिरिह ऋतुराजे किस रचना से है-

क. संगीत सोम ख. संगीत रघुनन्दन
ग. सूर्यग्रहणम् घ. कलिपरिदेवन सतकम्
15. ड्यूक आफ एडिनबरा की प्रशस्ति किसमें गायी गयी है-
क. सुमनोन्जलिः ख. राजपुत्रागमनम्
ग. जुबिलिगानम् घ. प्रिंसपंचासति
16. सूर्योदये कथितबीजकसायपानम् लिया गया है-
क. कलिपरिदेवन सतकम् ख. यतीन्दजीवनचरितम्
ग. संगीतरघुनन्दन ग. बसन्ताष्टक
17. यतीन्द्र जीवन चरितम् रचना है-
क. पं0 शिवकुमार शास्त्री ख. अन्नदाचरण
ग. रामावतार शर्मा घ. इनमें से कोई नहीं
18. पिंस आफ वेल्स के आगमन पर लिखा गया पिंसपंचासद् काव्य है-
क. रासिवडेकर ख. श्रीश्वर विद्यालंकर
ग. रामावतार शर्मा घ. इनमें से कोई नहीं।

1.5 उन्नीसवीं शताब्दी के कवि एवं उनके काव्य

डा0 राधावल्लभ त्रिपाठी ने आधुनिक संस्कृत का इतिहास ग्रन्थ के गीतिकाव्य अध्याय का लेखन किया है। इसमें डा0 त्रिपाठी जी ने महत्वपूर्ण कवियों में जिनका परिचय कृतियों सहित दिया है उसी पर आश्रित रहते हुए व्यास एवं समास शैली में उन कवियों का परिचय प्रस्तुत है।

1. लल्ला दीक्षित-

ये 18वीं शती के उत्तरार्द्ध एवं 19वीं शती के पूर्वार्द्ध में विद्यमान थे। इनके पितामह काशी के महाराष्ट्र भारद्वाज कुलोत्पन्न थी शंकर दीक्षित थे। इनके पिता का नाम लक्ष्मण दीक्षित थे। भवानी की स्तुति से सम्बन्धित आनन्दमन्दिर स्तोत्र इनकी प्रमुख रचना है।

2. श्रीधरनम्बी- (174-1830)

ये पट्टाम्बि के पुनश्शेरी स्थान के निवासी थे। इन्होंने विक्रमादित्यचरितम् तथा नीलकण्ठसन्देशः लिखा।

3. विश्वनाथ सिंह- (1789-1854)

ये रीवाराज्य के महाराज थे। इनकी संस्कृत के साथ-साथ हिन्दी में भी रचनायें मिलती हैं। ये प्रजावत्सल, धार्मिक, साहित्यप्रेमी राजा थे। इन्होंने दार्शनिक ग्रन्थों, टीकाग्रन्थों चम्पू एवं नाटकों को लिखा। इनका गीतिकाव्य सङ्गीतरघुनन्दन रागपरम्परा का काव्य है।

4. सदाशिव

ये केरल में 1800 ई0 में ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हुए थे। इन्हें गोदवर्मन् युवराज के नाम से भी जाना जाता है। इनके ग्रन्थ हैं- महेन्द्रविजय तथा रामचरित महाकाव्य। इसके अतिरिक्त उनकी

त्रिपुरदहनचरित्, श्रीपादसप्तकस्तोत्र, सुधानन्दलहरीस्तोत्र, मुररिपुस्तोत्र, देवदेवेश्वरष्टक स्तोत्र स्तुतिपरक रचनायें हैं।

5. तारानाथ तर्कवाचस्पति

1812 में वैचण्णी ग्राम में जन्मे थे। इनके पिता का नाम कालिदास था। ये कलकत्ता विश्वविद्यालय में प्राध्यापक रहे। इनको तर्कवाचस्पति की उपाधि से सम्मानित किया गया। इनकी रचनायें हैं- वाचस्पत्यम् तथा शब्दस्तोममहानिधि ये दोनों कोषग्रन्थ हैं। वे ड्यूक आफ एडिनवरा के भारत आगमन के अवसर पर राजप्रशस्तिः गीति काव्य लिखे।

6. बाबू रेवाराम (1814-1873)

इनके प्रपितामह महन्तराय, पितामह शिवसिंह, पिता जगत्राय तथा माता सीता थीं। ये जाति के कायस्थ थे। इनका जीवन संघर्षमय रहा । इनके ग्रन्थ हैं- साररामायणदीपिका, ब्राह्मणस्तोत्र, गीतमाधव, नर्मदालहरी तथा गंगालहरी। गीतमाधव गीतगोविन्द की शैली पर लिखा गया रागकाव्य है। गीतमाधव का यह पद कितना सुन्दर है-

माधव हे, तिष्ठति राधा केलिगृहे।
भवदवलोकनसचकितनयना,
पुनरनुतक्र्य रचितसमशयना।।

7. स्वातितिरूनाल रामवर्म कुलशेखर

इनका जन्म वञ्चीश्वर कुल में स्वाती नक्षत्र में1813 ई0 में हुआ। ये गर्भ से ही त्रावण कोर के राजा थे। ये संस्कृत, मलयालम्, कन्नड़, तेलगू, मराठी तथा हिन्दी के असाधारण विद्वान थे। ये सुयोग्य शासक भी थे। अंग्रेज जनरल कुनेल के षड्यन्त्रों से विमुख होकर साहित्य साधना में रत् हुए। इनकी संस्कृत रचनायें हैं- स्यानन्दूरपुरवर्णनप्रबन्धम्, पद्मनाभशतकम्, अजामिलोपाख्यानम्, कुचेलोपाख्यानम् तथा भक्तिमञ्जरी। अजामिलोपाख्यानम् तथा कुचेलोपाख्यानम् राग काव्य हैं।

8. सीताराम भट्टपर्वणीकर

इनके पूर्वज महाराष्ट्र से महाराज विष्णु की कीर्ति सुनकर जयपुर आये थे। पांचवीं पीढ़ी में उत्पन्न सीताराम ने महाकाव्य, साहित्यशास्त्र, व्याकरण, ज्योतिष सम्बन्धी ग्रन्थों की रचना किये। बहुत से ग्रन्थों पर टीकायें भी लिखीं। इनकी गीति रचनायें हैं- सूर्याष्टक, गंगाष्टक, देव्यष्टक, भैरवाष्टक, विष्णुवष्टक, हनुमदाष्टक, शिवाष्टक, हेरम्बाष्टक, जम्बुवाहिन्याष्टक, गुर्वष्टक।

9. रघुराज सिंह (1823-1880)

रीवानरेश विश्वनाथ सिंह के पुत्र रघुराज सिंह ने 1857 के प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम में अंग्रेजी सत्ता का साथ दिया। इनकी संस्कृत रचनायें हैं- सुधर्माविलास, नर्मदाष्टक, शम्भुशतक्, रघुराजमंगलचन्द्रावली आदि। संस्कृत के साथ-साथ इन्होंने हिन्दी में भी रचनायें किया है।

10. गोमतीदास रामस्वामी शास्त्री

इनका जन्म नवम्बर 1823 में केरल के इलत्तुर ग्राम में हुआ। ये समस्यापूर्ति और काव्यवैदुषी के कारण महाराज एलमतिरूनाल के कृपापात्र बने। इन्होंने महाकाव्य, नाटक, काव्यशास्त्र, व्याकरण दर्शन विषयक ग्रन्थों की रचना किया। इनके खण्डकाव्य हैं- गौण्यप्रबन्ध, पार्वतीपरिणय, अम्बरीषचरित, गान्धारचरित। इनके स्तोत्र काव्य हैं- अश्वत्थगणनाथाष्टकम्, धर्मसंवर्धिनी स्तोत्रम्, आर्याद्विशती, त्रिपुरसुन्दरीगीता, ललितागीतम्, कृष्णदण्डक, अष्टप्रासशतकम्।

11. रामवारियर

इनका जन्म कालचिपल्ली के वैकुलन्नार नगर में 1832 ई0 में हुआ। इनकी रचनायें हैं- वागानन्दलहरी, वामदेवस्तव, विद्युन्माला, विद्याक्षरमाला आदि।

12. वीरराघव

इनका समय 1820-1882 के मध्य स्वीकार किया जाता है। ये तन्जौर नरेश शिवेन्द्र के आश्रित कवि थे। इन्होंने नाटकों एवं स्तोत्रों की रचना किया। इनके स्तोत्र काव्य हैं- रामानुजाचार्याष्टकम्, रामानुजाष्टोत्तरनामस्तोत्रम्, रामानुजाष्टकम्, रामानुजातिभानुस्तवः, पार्वतीस्तोत्रम् आदि।

13. श्री उमापति त्रिपाठी

ये गोरखपुर जिले के मझौली राज्य में पिण्डी नामक ग्राम में 1834 में जन्मे थे। काशी में अध्ययनोपरान्त इन्होंने शास्त्रार्थ के निमित्त देशाटन किया। क्रमशः सिन्धिया दरबार रीवानरेश केशवाबाजीराव, नवाबवाजिदअलीशाह, राजादिग्विजयसिंह तथा अवध मण्डल के राजा दर्शन सिंह की राजसभा में धनमान अर्जित किये। इनका अन्तिम समय इनका अयोध्या में बीता। 1873 में ही अयोध्या में ही इनका स्वर्गवास हुआ। इन्होंने टीकाभाष्य के साथ ही साथ बहुत सारे स्तोत्र काव्यों की रचना की। इनकी कुछ रचनायेंहैं-उमापतिशतकत्रय,सुधामन्दाकिनी,रामजानकीस्तोत्र,रघुनन्दनषोडषक मध्याविंशतिका, रघुनाथस्तोत्रम्, रामस्तोत्रम्, कालिकाष्टकम्, शंकराष्टकम् व श्रीविंशतिका।

14. गोपीनाथ दाधीच

गोपीनाथ जयपुर नरेश महाराज रामसिंह के आश्रित कवि थे। इनके पिता का नाम मालीराम था। इन्होंने हिन्दी में6 और संस्कृत में 22 रचनाओं लिखने का उल्लेख किया है। इनकी रचनायें हैं- माधवस्वातन्त्र्यम् (नाटक), प्रधानरसदृष्टान्तपंचाशिका, स्वानुभवाष्टकम् वित्तचिंतामणिः नीतिदृष्टान्तपंचाशिका, रामसौभाग्यशतकम्, शिवपदमाला, दधिमथपंचाशिका, आनन्दनन्दन काव्यम्, कृष्णआर्यासप्तशती, हरिपंचविंशतिः, विश्वनाथविज्ञप्तिपंचासिका, स्वजीवनचरितम्, भावनगरप्रशस्तिः, सूतजन्ममहोत्सवः सौभाग्यशतकम् प्रशस्तिपरक रचना है। इसमें सौभाग्यशतकम् में जयपुर नरेश रामसिंह के भाई सौभाग्यसिंह का चरित्र चित्रित है। सुतजन्ममहोत्सवः में खेतड़ी नरेश अजीत सिंह वर्मा के पुत्र जन्मोत्सव का वर्णन है।

15. श्रीरामकृष्णभट्ट

श्रीरामकृष्णभट्ट का नाम कुन्दन राम था। ये प्रसिद्ध वैद्य थे, उनके दो पुत्र हुए- एक श्रीरामकृष्णभट्ट और दूसरे हरिबल्लभभट्ट। श्रीरामकृष्णभट्ट काव्यशास्त्र, छन्दःशास्त्र तथा गणित के उद्भट विद्वान थे। जयपुर नरेश राजाराम सिंह इनके आश्रयदाता थे। इनकी निम्न रचनायें मिलती हैं- 1.कच्छवंशऐतिहासिकमहाकाव्यम्, जयपुरमेलककौतुकम्, माधवपाणिग्रहणोत्सव, सम्राटसुताऽभिनन्दनम्, काव्यमाला, चत्वारिंशत्पद्यावली, मुक्तक-मुक्तावली, सारशतकम् आर्यालङ्कारशतकम् तथा जयपुरबिलास आदि। जयपुर बिलास खण्ड काव्य में जयपुर नगर के सौन्दर्य और सांस्कृतिक परिवेश को चित्रित किया गया है। सारशतक व मुक्तक-मुक्तावली दोनों ग्रन्थ 1887 ई0में निर्णय सागर प्रेस बम्बई से प्रकाशित हुए। मुक्तक-मुक्तावली में देवतास्तवन, समस्यापूर्ति, श्रृंगारवर्णन काव्य प्रसंशा आदि का उल्लेख है। इसी ग्रन्थ में वापी गंगा वैद्य विक्टोरिया वर्णन, रेल का आदि विषयों का उल्लेख है।इन्होंने काशीनाथस्तवक, आर्यालंङ्कारस्तवः तथा गोपालगीतम् नामक स्तोत्र गीतों की भी रचना किया।

16. हरिवल्लभ भट्ट

श्री कृष्णभट्ट के ही अनुज हरिवल्लभ भट्ट थे। स्वरचित 'जयपुरपञ्चरङ्गम' में इन्होंने अपने को श्रीकृष्णराम भट्ट का वैमातृक कनिष्ठ भ्राता बताया है। हरिवल्लभ ने शब्दानुशासन का अध्ययन अपने पिता से काव्य-कोश-छन्दोविधानादि का अध्ययन अपने अग्रज से तथा वैद्यक का अध्ययन स्वयं किया। इनकी सात संस्कृत काव्यकृतियाँ प्रकाशित हैं-

जयपुरपञ्चरङ्गम्, कान्तावक्षोजशतकम्, ललनालोचनोल्लासः, दशकुमारचरित्रम्, देवीस्तोत्रम्, श्रृङ्गारलहरी तथा गौर्यलङ्कारः। कान्तावक्षोजशतकम् श्रृंगारपरक रचना है। ललनालोचनोल्लासः नेत्र विभ्रम को दर्शाने वाली रचना है।

17. ताराचरण तर्कभूषण

वे काशी की पंडित मण्डली में पिछली शताब्दी के श्रेष्ठ विद्वानों मंे गिने जाते थे। ये काशीनरेश ईश्वरीनारायणसिंह के आश्रय में रहे। इनकी प्रमुख रचना काशीराज काननशतकम् है। इसके अतिरिक्त श्रृंगाररत्नाकर, राधाष्टक, रामजन्मभाण इनकी प्रमुख रचनायें हैं। काशीराजकाननशतकम् में वियोग में पड़े हुए पथिक की अपने प्रिया की स्मृति में व्यथित अवस्था का चित्रण है। इस काव्य की रचना विन्ध्यपर्वत पर घूमते हुए चन्द्रप्रभा नदी के तट पर निवास करते हुए की गयी है। इस रचना में विरह की उग्रता के साथ मिलन की आतुरता दिखाई गयी है।

किं किं सखे.....रदच्छदकामुकेनु सम्भाव्य सीत्कृतिसमुल्लसिताननेन।
शीतव्रणव्यथितमोष्ठयुगं प्रचुम्व्य दासो भविष्यति कदैव पुनः कृतार्थः।।

18. महेशचन्द तर्कचूड़ामणि

इनका जन्म 1841 ई0 में दीनाजपुर जिले के राजारामपुर गाँव में हुआ था। इनके पिता का नाम पं0 ईशानचन्द्र था। इन्हें नवद्वीप की विदग्धजननीपरिषत् ने तर्कचूडामणि की उपाधि से विभूषित किया। ये श्रीगिरिनाथराय की राज्यसभा में सभा पण्डित भी हुए। इनकी प्रमुख रचनायें हैं-

निवातकवचमहाकाव्यम्, दिनाजपुरराजवंशम्, भूदेवचरितम्, काव्यपेटिका-कोशकाव्यम् भगवच्छतकम् आदि। इन्होंने जिन लघु काव्यों का प्रणयन किया वे हैं- गंगाष्टकम्, दुर्भिक्षे प्रार्थना, विक्टोरया-महाराज्ञ्यां परलोकं गतवत्यां रचितानि सप्तकाव्यानि आदि। 'दुर्भिक्षे प्रार्थना' में बंगाल में पड़ने वाले अकाल का मार्मिक चित्रण है।

19. प्रेमथनाथ

ताराचरण तर्कभूषण के आत्मज प्रमथनाथ का जन्म 1843 ई0 में बंगाल के भाटापारा में हुआ था। इन्होंने ताराप्रसन्न विद्यारत्न से साहित्य, वीरेश्वरतीर्थ से धर्मशास्त्र, विद्योदयपत्रिका के यशस्वी संपादक हृषीकेश भट्टाचार्य से सांख्य तथा म. म. शिवचन्द्र सार्वभौम से नव्यन्याय का अध्ययन किया। कुछ काल भट्पल्ली में रह कर ये अध्ययन के लिए काशी आ गये और यहाँ स्वामी विशुद्धानन्द के शिष्य बन गये।

अध्ययन उपरान्त कलकत्ता विश्वविद्यालय में वेदान्त के संस्कृत प्राध्यापक हुए। बाद में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के प्राच्यविद्यासंकाय में प्राचार्य के पद पर भी कार्यरत् रहे। इनकी रचनायें हैं- रासरासोदय, विजयप्रकाश तथा कोकिलदूतम्। कोकिलदूतम् में एक बंगाली तरूणी प्रवास किये हुए अपने पति के लिए कोयल को दूत बनाकर भेजती है।

20.कमलेश मिश्र

बिहार के जहानाबाद में अरवल के निकट बेल्थरा ग्राम में 1844 ई0 में इनका जन्म हुआ। ये आधुनिक हिन्दी के प्रसिद्ध कवि भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के सहपाठी थे। ये शाकद्वीपीय ब्राह्मण थे। इनका प्रमुख काव्य कमलेशविलासः 1855 ई0 में प्रकाशित हुआ।

जयदेव के 'गीतगोविन्द' की परम्परा में कमलेशविलासः की रचना हुई है। इसमें भगवद्भक्ति की उदात्तभावभूमि चित्रित की गयी है। इसमें सोहर, दादरा, रागभैरवी, हरिगीतिका, गजल, दोहा, पृथ्वी, दिग्पाल छनद, रेखता, कौव्वाली, ठुमरी, होली, चैता, कजली, झूलनामलार, विहाग, खेमटा, टोड़ी, लावनी, झूमर, नहछू आदि का सुन्दर सन्निवेश हुआ है। डा0 राधावल्लभ के अनुसार यह सम्भवतः संस्कृत का प्रथम गीतकाव्य है जिसमें लोकधुन में तथा शास्त्रीय रागों में गाये जाने वाले गीतों के साथ फारसी परम्परा में प्रचलित गजलों का भी प्रयोग किया गया है। गजल विधा को आगे जयपुर के सुप्रसिद्ध विद्वान पं0 भट्टमथुरानाथशास्त्री ने अद्भुत ऊँचाई प्रदान किया। वर्षा का यह चित्रण कितना सुन्दर है-

''चम चम चमत्कृदाचञ्चचन्ती चपला मुहुरूदरे संभाति।
प्रिय क्व हे ! ति च चातकी, पिकी कुहूरिति कौति;
नदति घने शिखिना समं शिखिनी नटति च नोति।
तदिदं दृक्श्रुतिपातमशेषं हृदि में बहुशूलं प्रददाति।।

21. केरलवर्मा

केरलवर्मा वलियकोकिल तम्पूरन तथा केरलकालिदास के नामों से भी जाने जाते हैं। इनके पिता का नाम मुल्लप्पिली नारायण तथा माता का नाम अम्बादेवी था। चैदह वर्ष की आयु में राजकुमारी लक्ष्मीबाई से इनका विवाह हुआ, और तब से ये वलिय कोयिल तम्पूरन् कहे जाने लगे। विवाह के

पश्चात् इन्होंने अपना अध्ययन जारी रखा। राजा एलमतिरूनाल के कुपित होने के कारण इन्हें एलेप्पी में भी निवास करना पड़ा था। राजा के निधन के बाद पुनः ये राज्यसभा में प्रतिष्ठित हुए। इन्होंने अभिज्ञानशाकुन्तलम् का मलयालम भाषा में अनुवाद किया। इनकी इस उपलब्धि के कारण इन्हें केरल का कालिदास कहा जाने लगा। 69 वर्ष की उम्र में मोटर दुर्घटना में इनकी मृत्यु हो गयी। इनकी लिखी रचनायें हैं- मयूरसन्देशः, विशाखविजयम्, श्रृंगारमञ्जरी भाण, श्रीमूलपादपद्माष्टक, चित्रावली, अमृतमन्थन, तुलाभारशतक, कंसवधचम्पूः, विक्टोरियाचरितसङग्रह यमप्रमाणाष्टक, क्षमापणसहस्त्रम, शकुन्तलापरिणय, गुरुपवनपुरेशस्तव तथा ललितास्तव, दण्डनाथ स्तोत्र तथा शत्रुसंहाराष्टकम् आदि उल्लेखनीय हैं। क्षमापणसहस्रम काव्य राजा के द्वारा कारागार में डाल देने पर अपनी मुक्ति के लिए इन्होंने लिखा था।

22. मानविक्रम एट्टनतम्पूरन् कविराजकुमार

इनका जन्म पतिन्नार कोविलकम् में 1845 ई0 में हुआ तथा 1920 में स्वर्गवास हुआ। इन्होंने संस्कृत तथा मलयालम् दोनों भाषाओं में रचना किया है। इनकी रचनायें हैं- कृष्णाष्टपदी, कृष्णकेशादिपादवर्णन, किरातसप्तपदी, स्तवमञ्जरी, वैराग्यतरङ्गिणी, सुक्तिमुक्तामणिमाला, उपदेशमुक्तावली आदि।

23. भारतेन्दुहरिश्चन्द

भारतेन्दु हरिश्चन्द को हिन्दी साहित्य में युग प्रवर्तक आचार्य के रूप में माना जाता है। इन्होंने संस्कृत में भी कुछ रचनायें किया है। वे हैं- मदिरास्तव, अंग्रेजस्तव, वेश्यास्तवराज, सीतावल्लभस्तोत्र। सीतावल्लभस्तोत्र में श्रीराम की पति के प्रति मधुर उपासना की पद्धति के द्वारा भक्ति भाव को व्यक्त किया गया है।

24. गंगाधर शास्त्री

ये पंडित नृसिंह शास्त्री के ज्येष्ठ पुत्र थे। इनके पूर्वज मैसूर के निवासी थे। कालान्तर में वे लोग काशी में आकर बस गये। गंगाधर शास्त्री का जन्म 1853 ई0 में काशी में हुआ। इन्होंने वेदवेदानकाव्यशास्त्र का गहन अध्ययन किया। इनके द्वारा एक समस्यापूर्ति ‘‘वभौ मयूरो लवशेषसिंहः’’ अत्यन्त प्रसिद्ध हुई। इनके पाण्डित्य से प्रभावित होकर इन्हें सरकार ने सी.आई.आई. की उपाधि प्रदान की। इनकी प्रमुख रचनायें हैं- अलिविलासिसंलापः हंसाष्टकम्। अलिविलासिसंलाप को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को देने वाला काव्य कहा गया है। इस काव्य में भारत के तीर्थस्थलों द्वादश दर्शनों के साथ-साथ सौन्दर्यबोध की रमणीयता का निरूपण है। गंगाधरशास्त्री के पट्ट शिष्य श्री रामावतारशर्मा जी थे।

25. रामशास्त्री तैलंग

गंगाधर शास्त्री के ही छोटे भाई रूप में रामशास्त्री तैलंग संस्कृत के अत्यन्त उद्भट विद्वान कवि माने जाते हैं। ये काशीराज संस्कृत महाविद्यालय में संस्कृत अध्यापक थे। 65 वर्ष की आयु में सन् 1925 ई0 में इनका स्वर्गवास हुआ। इनकी रचनायें सूक्तिसुधा में प्रकाशित होती रहीं। इन्होंने ऋतु वर्णन से सम्बन्धित वर्षाविलास, ग्रीष्मविलास, शरदविलास, वसन्तविलास इन चार काव्यों की रचना किया।

इसके अतिरिक्त सूर्ययाचना, गौरीस्तवः, शिवाश्वघाटी की भी रचना किये। पं0 बलदेव उपाध्याय ने इनकी प्रतिभा को अलौकिक बताया है।

26. नारायण भट्ट

नारायण भट्ट के पिता का नाम गोविन्द भट्ट था। नारायण भट्ट का जन्म 1855 ई0 में ग्वालियर के पर्वणीकर परिवार में हुआ था। इनके पिता कवि हृदय थे। नारायण भट्ट अल्पायु में ही लघुसिद्धान्त कौमुदी, रघुवंश, पुरूष सूक्तादिका अध्ययन कर लिये थे। कुछ समय तक ये जयसिंह द्वितीय के शासन में राजगुरू के पद पर भी विभूषित हुए। इनकी रचनायें हैं- पञ्चपंञ्चाशिका, संस्कृतश्लोकशतकसंग्रह, स्वमित्रश्लोकसंग्रह, नवीनकाव्यभूषणशतक, चतुर्दशीसूत्रीव्याख्या, श्लोकबद्धसिद्धान्तकौमुदी, परिभाषाप्रतिच्छविः धर्मकल्पलतावृत्तिः आदि। रसिकाष्टक इनकी श्रृंगारप्रधान रचना है।

27. परमेश्वर झा

परमेश्वर झा मिथिला के तरौनी ग्राम में 1870 ई0 में जन्म लिये। इनके पितामह दरभंगा नरेश श्री छत्रसिंह के सभा-पण्डित थे। इनके पिता पूर्णनाथ ने इन्हें श्रेष्ठ गुरूजनों से अध्ययन का अवसर सुलभ कराया। अध्ययनोंपरान्त झालरापाटन में संस्कृत शिक्षण के अध्यक्ष रहने के उपरान्त इस पर से त्यागपत्र देकर वे बरेली के राजा पद्मानन्द के राज्य सभा में पंडित का पद स्वीकार किये। अनन्तर वहाँ की जलवायु की प्रतिकूलता से उस पद से भी त्याग पत्र देकर गंधवारि ड्यौढ़ी की महारानी चन्द्रावती के द्वारा प्रतिष्ठापित किये गये संस्कृत पाठशाला के प्रधानाध्यापक बने और अनन्तर दरभंगा नरेश के प्रधान पंडित पद को सुशोभित किये। इनके पांडित्य से प्रभावित होकर इन्हें ''वैयाकरणकेसरी'', ''विद्यानिधि'' तथा ''महामहोपाध्याय'' की उपाधियाँ दी गयी। डा0 राधाबल्लभ त्रिपाठी ने इनकी 30 रचनाओं के मिलने का उल्लेख किया। इनकी कुछ रचनायें हैं। मिथिलातत्त्वविमर्श, ऋतुदर्शन, यक्षसमागम, परमेश्वरकोष आदि। यक्षसमागम को कालिदास के एक समागम काव्य को कालिदास के मेघदूतम् का उपसंहार कहा जा सकता है। इनकी एक ऋतुवर्णनम् भी मिलती है।

28. शिवकुमार शास्त्री

शिवकुमार शास्त्री का जन्म काशी के सन्निकट उन्दी ग्राम में 1857 में हुआ था। इनके पिता पं0 रामसेवक मिश्र तथा माता मतिरानी देवी थी। शिव की आराधना से उत्पन्न होने के कारण ही इनका नाम शिवकुमार रखा गया। ये काशी में पं0 दुर्गादत्त बाल शास्त्री राजाराम शास्त्री जैसे विद्वानों से ज्ञानार्जन किये। ये काशी के संस्कृत महाविद्यालय में अध्यापनोंपरान्त दरभंगा नरेश द्वारा काशी में स्थापित संस्कृत पाठशाला में जीवनपर्यन्त अध्यापन करते रहे। इनकी दो रचनायें अत्यन्त प्रसिद्ध हैं - 'यतीन्द्रजीवनचरित' जिसके नायक भाष्करानन्द सरस्वती हैं। इनकी दूसरी रचना 'लक्ष्मीश्वरप्रताप' दरभंगा नरेश लक्ष्मीश्वरसिंह की प्रशस्ति है।

पूर्णा चान्द्री का वा दिशि दिशि लहरी क्षीरसिन्धूत्थिता वा
कुन्दालीमालिका वा शिवनिलयगिरेः कान्तिरेवोद्गता वा
हंसानां संहतिर्वेत्यवनितलबुधैस्तर्क्यते यस्य कीर्तिः।

योऽयं लक्ष्मीश्वराख्यो जगति विजयते नायकस्तीरभुक्तेः।।

29. शीतलप्रसाद त्रिपाठी

इनके जीवनवृत्त के विषय में विवरण अनुपलब्ध है। इनकी रचना करुणात्रिंशिका संस्कृत साहित्य का प्रथम शोकविधाश्रित काव्य है। इस रचना में डुमराव के राजा राधाप्रसाद के निधन के उपरान्त प्रजा में व्याप्त शोक का कारूणिक चित्रण है। डुमराव नरेश का काशी में निधन विक्रम संवत् 1951 (अर्थात् 1894 ई0) में हुआ। इसके अनन्तर ही यह रचना लिखी गयी। इस रचना में छन्द का चयन शोक के अनुरूप है। इनकी भाषा शोक के उद्गार को वर्णित करने में समर्थ है। डुमराव नरेश के निधन पर डुमराव की धरती विधवा सी प्रतीत हो रही है-**'त्वयि मुक्तिपदं गतेऽधुना, विधवेयं डुमरांवमेदिनी।**

30. कन्हैयालाल शास्त्री

इनके जीवन परिचय के विषय में बहुत ज्ञात नहीं है। इनकी रचनायें हैं-काशीश्वरश्लेष, शिवपञ्चाशिका तथा शोकोच्छवासः। शोकोच्छवासः की रचना अपने मित्र रमेशचन्द्र के निधन पर शोक के अभिव्यक्ति से सम्बन्धित है। इनकी रचनायें संस्कृत चन्द्रिका विज्ञानचिन्तामणि, सूर्योदय आदि पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं।

31. यादवेश्वर तर्करत्न

यादवेश्वर तर्करत्न बंग प्रदेश से सम्बन्धित हैं। इन्हें रामकृष्ण परमहंस का बंशज कहा गया है। ये विशुद्धानन्द सरस्वती से विद्याध्यन किये थे। और विशुद्धानन्द सरस्वती जी के दिवंगत होने पर अश्रुविसर्जनम् शोककाव्य लिखे थे। संस्कृत महाविद्यालय के प्राचार्य ने इनके लिए पाश्चात्य दर्शन का अध्ययन करने की भी व्यवस्था की थी। अध्ययन के उपरान्त इन्होंने बंग प्रदेश के अपने गृह जनपद रंगपुर के हाईस्कूल, महाविद्यालय एवं संस्कृतपाठशाला में अध्यापन किये। इन्हें तर्करत्न पंडितराज पंडित केशरी तथा महामहोपाध्याय जैसी उपाधियों से अलंकृत किया गया। इनकी कुछ रचनायें निम्नवत् हैं- शोकतरङ्गिणी, वाणीविजयम्, सुभद्राहरणम्, चन्द्रदूतम्, प्रशान्तकुसुमम्, अश्रुविन्दुम्, अश्रुविसर्जनम्, राज्याभिषेककाव्यम्, रत्नकोषकाव्यम्, अन्नपूर्णास्तोत्रम्, शिवस्तोत्रम् तथा गङ्गादर्शनकाव्यम् तथा भारतगाथा। शोकतरङ्गिणी की रचना इन्होंने 13 वर्ष की अल्प उम्र में किया था। प्रशान्तकुसुमम् का प्रकाशन कलकत्ता से 1881 ई0 में हुआ। यह एक दार्शनिक रचना है जिसमें संसार की असारता को बताया गया है। अश्रुविन्दु तथा अश्रुविसर्जन दोनों ही करूणरसप्रधान विलापकाव्य हैं। पहला काव्य बिटिश साम्राज्ञी के स्वर्गवास पर 1901 ई0 में लिखा गया था और दूसरा अपने गुरू विशुद्धानन्द सरस्वती के परलोकगमन पर। अश्रुविसर्जनम् में उपमा और अनन्वय के मंजुल विन्यास का यह उदाहरण बहुत ही रमणीय है।

तेभ्यो दत्वा स्वयमपि तेन सम्भूषितोऽभूत
सिन्धो रत्नं हरिरिव सुरेभ्योऽर्पयन् कौस्तुभेन।
स्मार्तैर्वैयाकरणकृतिभिस्तार्किकैः काव्यकृद्भि-
र्मीमांसाज्ञैः सदसि सततं विज्ञवेदान्तिकैश्च।।

सांख्याचार्य स स इव महाविस्मितैर्वीक्ष्यते यः
कंसारातिर्हरिरिव जनै रङ्गभूमिं प्रवष्टिः।।

जिस प्रकार भगवान विष्णु देवताओं को समुद्र के रत्न अर्पित करके स्वयं कौस्तुभ रत्न से विभूषित हुए, उसी प्रकार वह उन्हें देकर स्वयं शोभा प्राप्त हुए। जिस प्रकार रङ्गभूमि में प्रविष्ट विष्णु को लोगों ने देखा उसी प्रकार उन्हें भी स्मृति, व्याकरण, न्याय, काव्य, मीमांसा तथा वेदान्त एवं सांख्य के पण्डितों ने सभा में उस-उस रूप में, स्मृति आदि के विद्वान के रूप में देखा। आरम्भ में कवि ने धरती को युवती तथा काशी को उसके रम्यसुन्दरबिन्दु तथा गंगा को अर्धचन्द्राकृति के रूप में प्रस्तुत करते हुए अपनी कल्पनाशीलता का अच्छा परिचय दिया है-

32. विधुशेखर भट्टाचार्य

विधुशेखर भट्टाचार्य बंगाल के मालदह जिले के हरिश्चन्द्रपुर गाँव में 10 अक्टूबर 1878 ई0 को जन्मे थे। इनके पिता त्रैलोक्यनाथ भट्टाचार्य कलकत्ता विश्वविद्यालय में अध्यापक थे। विधुशेखर ने संस्कृत, पालि, तिब्बती एवं अंग्रेजी में समान अधिकार प्राप्त किया। काशी के प्रसिद्ध विद्वान महामहोपाध्याय रामावतार शर्मा के साथ इन्होंने मित्रगोष्ठी नामक पत्रिका का सम्पादन किया। विधुशेखर भट्टाचार्य को महामहोपाध्याय व डी. लिट. की उपाधि से विभूषित किया। इन्होनें शान्तिनिकेतन में30 से अधिक वर्षों तक अध्यापन कार्य किया। इनकी रचनायें हैं- 'दशावतारस्तोत्र' तथा 'यौवनविलास'। यौवनविलास में नायक एवं नायिका की अनुरागमयी चेष्टाओं का वर्णन है। इसका यह पद्य विप्रलम्भ की दशा को चित्रित करता है।

निकुचन्मधुकोषचलद्भ्रमरावलिकैतवतो विरहाद् विकला।
सरसा नलिनी नयनाञ्जनमागलदस्रभरैः खलु मुञ्चति हा।।

33. लक्ष्मी राज्ञी

लक्ष्मी राज्ञी का जन्म मलावार के राजपरिवार में उत्तवलत्तू कुल में हुआ था। इनका जीवनकाल 1845 ई0 से 1909 ई0 तक है। इन्होंने 1900 ई0 में 'सन्तानगोपाल' नामक सर्गत्रयात्मक खण्डकाव्य की रचना की, जो श्रीमद्भागवत् पर आधारित है। डा0 कुंजुनि राजा ने इनके एक अन्य ग्रन्थ 'भागवत-संक्षेप' का भी उल्लेख किया है। सन्तानगोपाल काव्य कृष्ण-अर्जुन तथा विष्णु के चरित्र के माध्यम से रविवर्मा को शिक्षा देने के लिए रचा गया था। अर्जुन के अनुरोध पर श्रीकृष्ण के द्वारा एक ब्राह्मण के मृत पुत्र को विष्णुलोक से वापस लाने की कथा इसमें विशेष रूप से प्रतिपादित है।

34. श्रीनिवास दीक्षित

ये कुम्भकोणम् के निवासी थे। इनका समय 19वीं सती के मध्य से लेकर 20वीं सती के द्वितीय वर्ष तक माना गया है। इनके पिता का नाम रामस्वामी तथा माता का नाम सीताम्बा था। इन्होंने अप्पयदीक्षित से शिवाद्वैत का अध्ययन किया। इन्होंने 14 वर्ष की अल्पआयु में ही सिद्धान्त कौमुदी को सिद्ध कर लिया था। उन्होंने ब्रह्मविद्या पत्रिका का सम्पादन भी किया। इनकी रचनायें हैं- विज्ञप्तिशतक्, कलिवैभवशतक् (कलिपरिदेवनशतक), आस्थानुभवशतक जगदुरूधामसेवाशतक। इनके तीन नाटक भी

मिलते हैं- कलिकंटकोद्धार, सूरमयूरजैवजैवाक्य तथा सौम्यसोम। इनके अतिरिक्त इन्होंने स्तोत्र और प्रशस्तियों की भी रचना किया। विज्ञप्तिशतक राष्ट्रवादी रचना है।

35. लक्ष्मणसूरि

इनका समय 1859 ई0 से 1919 ई0 तक है। इनके पिता मुत्तुसुब्बा अय्यार रामनाड के श्री विल्लीपुतुर पुण्डडेली ग्राम में निवास करते थे। लक्ष्मणसूरि को महामहोपाध्याय की उपाधि से भी विभूषित किया गया। इनकी प्रमुख रचनायें हैं- कृष्णलीलामृतम् महाकाव्य है। देहलीसाम्राज्य तथा पोलस्त्यवध नाटक हैं। भीष्मविजय, भारतसंग्रह तथा रामायणसंग्रह उपन्यास हैं। विप्रसन्देश, सुभगसन्देश, मनःसन्देश, वेङ्कटस्तव इनके गीतिकाव्य हैं। विप्रसन्देश में शिशुपाल से अपना विवाह निर्धारित कर दिये जाने पर रूक्मिणी के द्वारा एक ब्राह्मण के मुख से सन्देश भिजवाय गया है। रूक्मिणी के सन्देश में आतुरता, विवशता और करूण पुकार की भावना कितनी हृदयावर्जक है-

सङ्कल्पानामिति बहुशतैर्हर्षशोकादिमूलैः
सन्तानेनाविरतमुदितैस्तप्यमानामजस्रम।
किं मां पश्यन्नपि न कुरूषे सन्निधिं नेतुमिच्छां
निद्रवद्वानामपि खलु भवेद् मृत्युदःखेन दुःखम्।।

36. ए0 आर0 राजवर्मा

ए. राज. वर्मा का जन्म 1863 ई0 में चन्नासेरी के लक्ष्मीपुरम् राजप्रसाद में हुआ था। इनके पिता का नाम भरणीतिरूनाल तम्पूरत्ती था। केरलवर्मा इनके चाचा थे। बचपन से ही काव्य रचना करने के कारण इनको बालकवि भी कहा जाता था। मलयालम् में इन्हें केरलपाणिनि की उपाधि से विभूषित किया गया था। इन्होंने महाकाव्य रूपक तथा गीतकाव्यों की रचना किया। आंग्ल साम्राज्यं महाकाव्य है, गैरवाणीविजय रूपक है, उद्दालकचरित गद्य काव्य है। इनके अतिरिक्त विटविभावरी वीणाष्टक देवीमंगल, देवीदण्डक, मित्रश्लोक, पितृवचन, राममुद्रासप्तक, मेघोपालम्भ तथा पद्मनाभशतक गीतिकाव्य की रचना की। विटविभावरी इनकी अत्यन्त ही प्रसिद्ध रचना है। इस रचना में चार याम हैं, राधा और कृष्ण के प्रेम का चित्रण है। स्मृति भाव के साथ अनुप्रास तथा उत्प्रेक्षा का समावेश कितना रमणीय है-

अन्येद्युराकुञ्चितकण्ठनालं प्रोष्यागताया मधुस्मितं तत्।
अपाङ्गमालामयकीलजालैरद्यापि मे चेतसि खातमास्ते।।

37. महावीर प्रसाद द्विवेदी

महावीर प्रसाद द्विवेदी की पृष्ठभूमि तो संस्कृत की थी लेकिन इन्होंने हिन्दी में बहुत सारी रचनाओं को किया। इनकी संस्कृत की रचनायें मुक्तक कोटि की हैं। वे हैं- कथं अहं नास्तिकः, कान्यकुब्जलीमृतम्, समाचारपत्रसम्पादकस्तवः तथा सूर्यग्रहणम्।

कथमहं नास्तिकः ? शीर्षक कविता में छद्म धार्मिकता का विरोध करते हुए द्विवेदी जी ने युगानुरूप सच्ची आस्तिकता का स्वरूप उद्घाटित किया गया है-

नित्यं जपामि यदहं शुचि सत्यसूत्रं
लोके तदस्तु सम मन्त्रजपः पवित्रम्।
या सज्जनेषु भगवन् मम भक्तिरेषा
सैव प्रभो भवतु देवगणस्य पूजा।।
सर्वेषु जीवनिचयेषु दयाव्रतं मे
श्रेयो ददातु निखिलं नियतव्रतानाम्।
अच्छाच्छचन्दनरसादपि शीतदो मा-
मानन्दयत्वनिशमीश परोपकारः।।

काव्यकुंज लीलामृतम् में कान्यकुब्ज ब्राह्मणों की लोलुपता, पाखण्ड, अन्धविश्वासवृत्ति पर कड़ा प्रहार किया गया है। समाचारपत्रसम्पादकस्तवः में समाचार पत्रों की सम्पादकों की करतूतों पर व्यंग्य है।

सूर्यग्रहणम् में सूर्यग्रहण के अवसर पर भारतीय समाज में विभिन्न वर्गों के व्यवहार और प्रतिक्रियाओं पर तीव्र व्यंग्य किया गया है। ज्योतिष पुजारी जनता से कैसे धन ऐंठते हैं इसे कवि ने दिखाया है।

युद्धं भविष्यति नृपेषु परस्परेषु
लोकं गमिष्यति यमस्य रूजा प्रजा च।
धान्यं धनं बहु हरिष्यति चैरवर्ग
इत्यादि कैश्चिदिह सूरिभिरन्वभावि।।

इनकी एक संस्कृत की कविता प्रभातवर्णनम् भी उल्लेखनीय रचना है। इनके अतिरिक्त शिवाष्टकम, अयोध्याधिपस्य प्रशस्तिः, मधमालां प्रति चन्द्रोक्तिः प्लेगस्तवराजः, काककूजितम् आदि इनकी अन्य रचनायें हैं।

38. सरोजमोहिनी देवी

इनके विषय में विशेष परिचय नहीं मिलता है। इनकी कवितायें संस्कृत चन्द्रिका के 1894 व 1895 के कई अंकों में प्रकाशित हुई हैं जिससे इनकी क्षणप्रभा, शरदवर्णन तथा प्रावृट् आदि गीतिकाव्यों की सूचना मिलती है। शरदवर्णन में इनके नारी सुलभ सौकुमार के साथ-साथ लयात्मक भाषा में वर्षा का यह चित्रण बहुत ही रमणीय है।

नीरद इह गर्जति खलु, वर्षति नहि जीवनम्।
सन्ततमिव वर्षणप्रिय चातकघनजीवनम्।।

39. अन्नदाचरण

अन्नदाचरण का जन्म बंगाल के नोवाखली जनपद के सोमपाड़ा नामक गाँव में1862 ई0 में हुआ था। कलकत्ता तथा वाराणसी में इन्होंने अध्ययन किया। न्यायवैशेषिक दर्शन में इनकी विशेष गति के कारण काशी के विद्वानों ने इन्हें तर्क चूडामणि की उपाधि से विभूषित किया। ये काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में अध्यापन के दौरान सुप्रभातम् एवं सूर्योदय पत्रिकाओं का प्रकाशन करते रहे। इनके दो महाकाव्य रामाभ्युदयम् तथा महाप्रस्थानम् मिलते हैं। ऋतुचित्रं तथा सुमनोऽञ्जलिः इन दो गीतिकाव्यों

की सूचना मिलती है। ऋतुचित्रम् में ऋतुओं की स्वाभाविक अभिरामता का वर्णन मिलता है। यह कालीदास के ऋतुसंहारम् से प्रभावित रचना है। वर्षा के अवसर पर किसानों की मनःस्थिति का यह चित्रण अत्यन्त ही द्रावत है।

सुवर्षणैः कुत्रचिदत्र शस्यसम्पन्निदानैः कृषकाः प्रफुल्लाः।
क्वचिन्निराशत्वविषण्णभावमीयुः समन्ताद् बत तद्वियोगात्।
अहो इदानीं कतिचिद् दरिद्रा अनावृते वृष्टिजलाभिषिक्ते।
गृहेऽतिदुःखैर्निजदुष्कृतानि स्मृत्वैव मर्मव्यथया रूदन्ति।।

अर्थात् कहीं पर अच्छी वर्षा होने से कृषक लोग सस्य सम्पदा के कारण प्रसन्न हैं, कहीं पर वर्षा के पूरे अभाव नैराश्य और विषाद को प्राप्त कर रहे हैं। खेद है कि आजकल कुछ गरीब लोग छाजन से रहित, बरसात के पानी से भींगे गृह में अतिदुःख के कारण अपने पापों को याद करके मर्मान्तक व्यथा से रो रहे हैं।

सुमनोऽञ्जलिः में बहुत सी कवितायें संकलित हैं जिनके शिर्षक हैं- पणितिः, आशा, शिशुहास्यम्, दशासादृश्यम्, किमेष भेदः, श्मशानम्, का गतिः, आत्मनिवेदने उपदेशः, परिणामभूमिदर्शनम्, गन्तव्यस्थाननिर्देशः, कल्पना, वनविहङ्गः, निद्रा, क्व सुखम्, तदतीतमेव तथा प्रार्थना। इन गीतियों में सामाजिक, राजनीतिक परिस्थितियों की अनुगूँज मिलती है।

उपर्युक्त दो रचनाओं के अतिरिक्त इनकी क्वगच्छामि गीति रचना भी संस्कृत चन्द्रिका में प्रकाशित हुई थी।

40. रामावतार शर्मा

रामावतार शर्मा के विषय में जो राधावल्लभ जी ने आधुनिक संस्कृत साहित्य के इतिहास में उल्लेख किया है उसे उसी रूप में साभार प्रस्तुत किया जा रहा है-

इनके पिता का नाम पं. देवनारायण शर्मा और माता का नाम गोविन्द देवी था। पाँच वर्ष की आयु से ही इन्होंने संस्कृत के पद्य कण्ठाग्र करना आरम्भ कर दिया था। 1881 ई0 में प्रथमा परीक्षा उत्तीर्ण करके ये राजकीय संस्कृत महाविद्यालय काशी में पं0 गंगाधर शास्त्री के श्री चरणों में अध्ययन करने के लिए आ गये। ये बंगीय संस्कृत परिषद् कलकत्ता विश्वविद्यालय तथा इलाहाबाद विश्वविद्यालय की परीक्षायें भी उत्तीर्ण करते हुए 1897 ई0 में प्रथम श्रेणी में सर्वप्रथम स्थान के साथ साहित्याचार्य परीक्षा में उत्तीर्ण हुए। इस बीच पिता का निधन हो जाने के कारण परिवार के भरण-पोषण का दायित्व इनके ऊपर आ गया। इन्होंने छपरा जिला स्कूल में संस्कृत शिक्षक के पद पर कार्य करना आरम्भ कर दिया। इस पद पर कार्यरत रहकर भी वे पंजाब और कलकत्ता विश्वविद्यालयों की कई परीक्षाओं में बैठे और स्वर्णपदकों से अलंकृत हुए। 1901 ई0 से 1905 ई0 तक ये वाराणसी के सेन्ट्रल हिन्दू कालेज में प्राध्यापक रहे और 11.04.1906 से पटना कालेज में। 1907 ई0 में यहाँ से अवकाश प्राप्त होने पर इनकी नियुक्ति कलकत्ता विश्वविद्यालय में हो गयी। वहाँ से ये फिर कुछ समय के लिए पटना कालेज में ही सेवा करते रहे। 1919 ई0 से 1922 तक महामना मालवीय जी के आदेश के अनुसार बिहार शासन

से अवकाश लेकर हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी में प्राच्य महाविद्यालय में इन्होंने प्राचार्य का पद संभाला। वहाँ से लौटकर पुनः आजीवन पटना कालेज में ही कार्यरत रहे।

म. म. रामावतार शर्मा की प्रतिभा बहुमुखी थी और उन्होंने साहित्य की अनेक विधाओं को अपने मौलिक सर्जनात्मक उन्मेष से सम्पन्न किया। उनकी वैदुषी तो अप्रतिम थी ही। उनके लिखे प्रमुख पद्य काव्य ये हैं- मारुतिशतकम्, शम्भुशतकम् कृष्णस्तवककल्पतरूः, मुद्गरदूतम् अभिनवभारतम्, सत्यदेवकथा, शतश्लोकीयं धर्मशास्त्रम् आदि। इनके अतिरिक्त शर्मा जी ने धीरनैषधम् नाटक, जयप्रकाशचरितचम्पूः, साहित्यरत्नावली आदि की भी रचना की। उनके लिखे अनेक स्फुट काव्य भी मिलते हैं, तथा-वसन्तवर्णनम्, सरस्वत्यकष्टम्, ज्योर्जप्रशस्तिः तथा अनेक अन्योक्तियाँ। हिन्दी और अंग्रेजी में भी इनका विपुल शोधपूर्ण चिन्तापरक या पाण्डित्यपूर्ण साहित्य है।

धीरनैषध नाटक की रचना इन्होंने अठारह वर्ष की आयु में कर डाली थी। मारुतिशतकम्, शम्भुशतकम्, कृष्णस्तबककल्पतरुः आदि रचनाओं का लेखनकाल 1895 ई0 के लगभग है। जब इनकी आयु इक्कीस वर्ष की थी।

मारुतिशतक स्रग्धरा छन्द में रचित प्रौढ़ रचना है। स्तुतिपरक होने के साथ-साथ यह हनुमान के विलक्षण चरित को भी एक-एक पद्य में ओजस्वी रूप में प्रस्तुत करता है। लंकादहन का दृश्य चित्रित करते हुए कवि कहता है-

हा मातस्तात हा हा प्रिय इह दयिते वत्स हा क्वासि यातो
हा दग्धो हा मृतोस्मि स्फुटति बत शिरो हन्त दैवं नृशंसम्।
इत्थं कोलाहलैर्यो रजनिचरपुरीं सम्भृतां दाहकाले
चक्रे सोयं कपिर्वः प्रदिशतु सततं सन्ततं सौख्यराशिम्

अर्थात् जिन हनुमान जी ने लंकादाह के समय रावण की राजधानी में हल्ला मचा दिया और सभी चिल्लाने लगे-हा मातः, हा तात, हा प्यारे, हा प्रिय, हा पुत्र, हा तू कहाँ गया! हा मैं जला, हा मैं मरा, मेरा सिर फूट रहा है, हाय विधाता क्रूर है! वे हनुमान जी आप लोगों को सदा अविच्छिन्न सुख प्रदान करें।

शम्भुशतक अपूर्ण है। यह मन्दाक्रान्ता छन्द में लिखा गया है। मारुतिशतकम् में नृत्यत्प्रायपदावली का फड़कता हुआ विन्यास है, तो इस काव्य में शिष्ट हास्य, सौकुमार्य और श्रृंगार की छटा का भी भक्तिभाव के साथ अपूर्वयोग हुआ है। दीर्घ समास-रचना में भी कवि ने प्रासादिकता तथा माधुर्य की रक्षा अव्याहत रूप में की है। यथा-

गौरीदोर्लतिकाप्रसङ्गविगलद्भस्माङ्गरागोज्ज्वल-
ग्रीवाहालहलप्रभाच्छुरणया श्यामयितात्मप्रभम्।
मौलिस्थास्नुसुरापगातटवनीवानीरजालोपमं
चूडाचन्द्रमरीचिमण्डलमुमानाथस्य मथ्नात्वघम्।।

अर्थात् उमापति शिव के सिर के चन्द्र का किरण-मण्डल पाप को नष्ट करे, जो गौरी पार्वती की भूरलता के सम्पर्क से गिर रहे भस्म के अंगराग के कारण प्रज्ज्वल है, जिसकी अपनी प्रभा शिव की

ग्रीवा में स्थित हालाहल की प्रभा के मिलने से श्यामायित है और जो शिव के सिर पर रहने वाली सुरापगा गंगा के तट-वन के वेतस-जाल जैसा लगता है।)

श्रीकृष्णस्तवकल्पतरुः में दो प्रकाण्डों में क्रमशः 22 तथा 48 पद्य हैं। इसमें माधुर्य तथा भक्तिभाव की तल्लीनता और भी उत्कर्ष पर है।

अभिनवभारतम् शर्माजी की अत्यन्त महत्वपूर्ण रचना है। यह 1911 ई. में लिखी गयी थी, इसमें दो तरंग है- भारतीयेतिहासतरङ्गः। कवित्वशक्ति के साथ-साथ शर्मा जी की व्युत्पत्ति और देशकालावबोध का भी परिचय इस रचना से मिलता है। भारतीयेतिवृत्त की अंतिम पाँचवीं वीची में शर्मा जी ने अपने गुरु गंगाधर शास्त्री तथा पिता की जो प्रशस्ति की है, वह उनकी सहृदयता का उत्कृष्ट उदाहरण है।

देशान्तरीयेतिवृत्त में अठारह वीचियों तथा 424 पद्यों में मिश्र, रोम, फारस आदि देशों का इतिहास प्रस्तुत किया गया है। प्रायः कवि ने वैदेशिक नामों का संस्कृत प्रातिपदिक बनाया है, जैसे अलिकचन्द (अलेग्जेंडर), प्रलिम्प (फिलिप) आदि।

मुद्गरदूतम् आधुनिक संस्कृत साहित्य में अपने ढंग की निराली रचना है, जिसमें शर्मा जी का विलक्षण विनोदी स्वभाव, पैने व्यंग की मार, देश के प्रति गहरा लगाव और समसामयिक स्थितियों के प्रति जागरूकता के साथ उनकी प्रगतिशील दृष्टि प्रतिफलित हुई है। यह काव्य मेघदूत की पैरोडी है और 1914 ई0 में इस नवीन विधा की परिकल्पना तथा उसके साथ मौलिकता का निर्वाह शर्मा की विलक्षण प्रतिभा का परिचायक है। 148 मन्दराक्रान्ताओं को कवि ने पूर्वमुद्गर, मध्यमुद्गर इन तीन भागों में विभाजित है। पाखण्ड तथा दम्भ पर ऐसा सोत्प्रास शैली में प्रहार दुर्लभ ही है-

नीतिव्याख्यासमितिषु तथा धर्मवार्तासदःसु
प्रायो नाट्येष्वथ शवखनिष्वाश्रमेषूद्भटानाम्।
व्यर्थं क्षिप्त्वा भरतवसुधाद्रव्यकोटीः स कीटो
देशप्रेमोल्बणभणितिभिर्नाशयामास विद्याम्।।

अर्थात् नीति की व्याख्या की समतियों, धर्मवार्ता की सभाओं में, नाट्यों में, कब्रगाहोंतथा उद्भटों के आश्रमों में उस कीड़े ने प्रायः भारत भूमि के करोड़ों रूपये व्यर्थ गंवाकर देश-प्रेम की भारी-भरकम बातों से विद्या को नष्ट किया है।)

41. अप्पाशास्त्री राशिवडेकर

अप्पाशास्त्री राशिवडेकर का जन्म 1873 ई0 में हुआ। राशिवडे ग्राम के निवासी श्री सदाशिवशास्त्री इनके पिता थे। कोल्हापुर के पं0 कान्ताचार्य से इन्होंने संस्कृत का अध्ययन किया था और कोल्हापुर में ही आरम्भ से निवास करते रहे। बंगाल के पं0 जयचन्द्र शर्मा सिद्धान्तभूषण द्वारा 1893 ई0 से प्रारम्भ की गयी प्रतिष्ठित संस्कृत पत्रिका 'संस्कृतचन्द्रिका' के सम्पादकत्व का दायित्व इन्होंने सम्भाला तथा इसके पश्चात् सूनृतवादिनी नाम से पाक्षिक अखबार भी संस्कृत में प्रकाशित करने लगे।

अप्पाशास्त्री के पाण्डित्य से प्रभावित होकर बंगीयसंस्कृत परिषद् के सम्मेलन में विद्वानों ने इन्हें वाचस्पति की उपाधि से अलंकृत किया था। वाराणसी भारत धर्ममण्डल ने उन्हें विद्यालंकार और महोपदेशक की पदवी भी दी थी। 25-10-1913 को उनका निधन हो गया।

संस्कृत साहित्य की अनेक विधाओं में लेखनी व्यापृत करके अप्पाशास्त्री जीवनपर्यन्त सेवा करते रहे। इन्होंने कलियुग की विषमस्थितियों का चित्रण प्रस्तुत करते हुए 'अधर्मविपाकम्' नाटक लिखा था। संस्कृत में अनेक कहानियाँ भी इन्होंने लिखीं तथा अनेक प्राचीन ग्रन्थों पर टीकाओं की रचना भी की।

इनके लिखे प्रमुख संस्कृत खण्डकाव्य ये हैं- वेषमाहात्म्य, व्यसनविमोक्षः, प्रधान्यवादः बकचापलम्, विमुग्धे विप्रलब्धासि।

इनके खण्डकाव्यों में श्रीमहाराजक्षत्रपतिशाहोः कुमारावाप्तिः, तिलकमहाशयस्य कारागृहवासः श्रीकण्ठपदभूषणम् मल्लिकाकुसुमम्, कुसुमस्तबकः, दावानलविलासः, निर्धनविलासः उद्वाहमहोत्सवम्, आशीर्वचनरत्नमालिका, पञ्जरबद्धः शुकः, वल्लभविलापम्, आक्रन्दनम्, उपवनतटाकम् आदि हैं।

अप्पाशास्त्री के संस्कृत काव्य में उस समय की राजनीतिक स्थितियों के प्रति जागरूकता, स्वतन्त्रता संग्राम से संलग्नता, नवीनता और साहस के साथ-साथ नवयुगबोध, दीन और दलितों के प्रति करूणा तथा भारतीय नैसर्गिक सुरम्यता के प्रति आकर्षण व्यंजित हुए हैं।

इस दृष्टि से उनकी कविता 'पञ्जरबद्धः शुकः' स्मरणयीय है। इसमें पंजरबद्ध शुक की अन्योक्ति के माध्यम से पराधीन भारत की वेदना को कवि ने व्यक्त किया है। इस कविता से प्रभावित होकर हिन्दी कवि मैथिलीशरण गुप्त ने इसका संस्कृत से हिन्दी में काव्यानुवाद किया था, जो महावीरप्रसाद सरस्वती के द्वारा संपादित सरस्वती जैसी श्रेष्ठ साहित्यिक पत्रिका में (अगस्त, 1991) प्रकाशित हुआ था। कवि पराधीनता को मृत्यु के समान दारुण बताता हुआ कहता है-

शुक सुवर्णमयस्तव पञ्जरो
न खलु पञ्जर एष विभाव्यताम्।
मुखमिदं ननु हेमशलाकिका-
रदनशालि मृतेरतिभीषणम्।।

अर्थात् हे शुक, इस अपने सोने के पिंजरे को पिंजरा मत समझ, यह तो सोने की सलाखों रूपी दाँतों वाला मृत्यु का अति भीषण मुख है।

इसी प्रकार 'तिलकमहाशयस्य कारागृहवासः' शीर्षक कविता भी लोकमान्य तिलक के प्रति कवि की श्रद्धा-भावना के साथ-साथ उनकी राष्ट्र सपर्या के प्रति आस्था को व्यक्त करती है। इस कविता में 37 पद्य हैं। कवि ने अंगेज सरकार द्वारा कारागार में तिलक को दिये जाने वाले कष्टों पर संवेदनामय शैली में अपना क्लेश प्रकट किया है।

अप्पाशास्त्री जी की अनेक कवितायें प्रकृतिचित्रण से संबद्ध है। 'ऋतुचित्रम्' उनकी एक श्रेष्ठ कविता है, जिसमें ऋतुसंहार के समान छहो ऋतुओं का क्रमशः सुन्दर वर्णन है। इसमें कवि ने

समकालिक सामाजिक विसंगतियों की ओर संकेत किया है। सहोक्ति अलंकार के मार्मिक निर्वाह के साथ आम जनता की ग्रीष्म ऋतु में अनुभूत कष्टपरंपरा को उद्घाटित करते हुए वह कहता है-

शस्यं शुष्यति सर्वमेव भुवने पुंसां सहैवाशया
प्रम्लायन्ति लता नितान्तमधुना साकं प्रजानां मुखैः।
उद्दामं समुदेति च प्रतिपलं चोष्मा समं मानसै-
स्तापैः क्वापि विलीयते बत शुचावप्यागते यद्घनः।।

अर्थात् संसार के लोगों के आशा के साथ पूरा धान सूखता जा रहा है, अब प्रजा जनों के मुख के साथ लतायें अत्यन्त मलिन हो रही हैं। मन के तापों के साथ प्रतिपल गर्मी बढ़ती जा रही है, ग्रीष्मकाल के आने पर भी मेघ कहीं विलीन है।)

शास्त्री जी की वल्लभविलापः कविता अपनी पत्नी के निधन पर लिखी गयी अत्यन्त कारुणिक अभिव्यक्ति है। इस प्रकार उनकी 'मल्लिकाकुसुमम्' में भी सुकुमार भावों को व्यक्त किया गया है। इस कविता में एक युवक मालतीलता में केवल एक पुष्प देख कर उसे तोड़कर फेंक देता है। इस छोटी घटना के माध्यम से कवि ने व्यक्ति की बन्धुबान्धवरहित एकाकी स्थिति का करुण चित्र प्रस्तुत किया है

उक्त काव्यों के अतिरिक्त शास्त्री जी ने अनेक स्फुट पद्य तथा स्तुतिपरक काव्य भी लिखे हैं।

42. रामनाथ

रामनाथ का जन्म 19वीं शती के उत्तरार्द्ध में हुआ था। इनके पिता जी का नाम कालिदास था। इनके बड़े भाई का नाम श्रीनाथ था। इनके तीन काव्यों की सूचना मिलती है- वासुदेवविजय महाकाव्य है, विलापलहरी शोकगीतिकाव्य है, आर्यालहरी खण्डकाव्य है। आर्यालहरी की रचना कवि ने राजा यतीन्द्रमोहन के आदेश पर किया था और इसका प्रमुख विषय श्रृंगार है। श्रृंगार के अतिरिक्त इसमें गंगा, शिव, पार्वती आदि का स्तवन कवि प्रशंसा, सज्जनों की प्रशस्ति, दुर्जनों की निन्दा आदि भी वर्णित हैं। विलापलहरी की रचना 1894 ई0 में हुई इसकी कथावस्तु नरकासुर के वध से खिन्न माता पृथ्वी के शोक पर आधारित है। इस काव्य में कृष्ण नायक हैं। जिन्होंने नरका सुर का वध किया, नरकासुर के वध पर कृष्ण ने कहा है-

हन्ता न कालो, न मृतिर्न चाहं
सुतो हतस्ते निजकर्मणैव।।

अभ्यास प्रश्न 2

1.विक्रमादित्यचरितम् व नीलकण्ठ संदेशः रचना है-

क. श्रीधर नम्बी ख. अप्प दीक्षित
ग. लक्ष्मण दीक्षित घ. इनमें से कोई नहीं

2.राजप्रशस्तिः के रचनाकार हैं-

क. तारानाथ चर्कवाचस्पति ख. सदाशिव
ग. विश्वनाथ सिंह घ. इनमें से कोई नहीं

3. माधव हे, तिष्ठति राधाकेलि गृहे.....है-

क. गीतिगोविन्द में ख. जय दीपिका में
ग. गीतिमाधव में घ. इसमें से कोई नहीं
4.अजामिलोपाख्यानम् रचना है-
क. स्वातितिरूनाल रामवर्म कुलशेखर ख. रामवारियर
ग. उमापति त्रिपाठी घ. इनमें से कोई नहीं
5. वागानन्दलहरी वामदेवस्तव विद्युन्माला आदि किसकी रचनायें हैं-
क. वीरराघव ख. गोपीनाथ दाधीच
ग. श्रीरामकृष्ण भट्ट घ. रामवारियर
6.कोकिलदूतम् किसकी रचना है-
क. प्रमथनाथ ख. कमलेश मिश्र
ग. केरलवर्म घ. इनमें से कोई नहीं
7.कमलेशविलासः के रचनाकार हैं-
क. कमलेश मिश्र ख. प्रमथनाथ
ग. केरवलर्म घ. रामकृष्णभट्ट
8.वैराग्यतरंगिणी के रचनाकार हैं-
क. राजकुमार मिश्र ख. केरलवर्म
ग. मानविक्रमा एट्टनतम्पूरन् कविराजकुमार घ. इनमें से कोई नहीं
9.रसकाष्टक का प्रमुख रस है-
क. वीर ख. शान्त
ग. करुण घ. श्रृंगार
10.दशावतारस्तोत्र व यौवनविलास रचना है-
क. विधुशेखर भट्टाचार्य की ख. अन्नदाचरण की
ग. यादवेश्वर तर्करत्न की घ. इनमें से कोई नहीं
11. कथं अहं नास्तिकः रचना है-
क. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की ख. महावीर प्रसाद द्विवेदी की
ग. रामनाथ की घ. इनमें से कोई नहीं
12. वासुदेव विजय रचना है-
क. रामनाथ की ख. प्रभाशंकर की
ग. रामकृष्ण भट्ट की घ. इनमें से कोई नहीं
13. मारूतिशतक रचना है-
क. महावीर प्रसाद द्विवेदी की ख. कमलेश मिश्र की
ग. रामावतार शर्मा की घ. इनमें से किसी की नहीं
14. यक्ष समागम् किसका उपसंहार माना जाता है-
क. मेघदूतम् ख. ऋतु संहारः
ग. कोकिलदूतम् घ. गोपालदूतम्
15. सरोज मोहिनी देवी की रचना है-
क. क्षणप्रभा ख. शरदवर्णन
ग. प्रावृट् घ. ये सभी

16.तिलकमहाशयस्यकारागृहवासः रचना है-

क. विधुशेखर भट्टाचार्य की ख. सरोज मोहिनी देवी की

ग. रामनाथ की घ. अप्पाशास्त्री राशिवडेकर की

17.पंजरबद्धशुकः में वेदना व्यक्त की गयी है-

क. पराधीन भारत की ख. स्वतन्त्र भारत की

ग. ब्रिटेन की घ. इनमें से कोई नहीं

18.लक्ष्मीराज्ञी की रचना नहीं है-

क. संतानगोपाल ख. भागवतसंक्षेप

ग. विज्ञपिशतक घ. ये सभी

1.6 सारांश

प्रस्तुत इकाई का सारांश यह है कि गीति रचना संस्कृत में वेदों के काल से अनवरत् की गयी हैं। 19वीं शती में भी बहुत से कवियों ने गीतियों की रचना किया है। गीतियाँ खण्ड काव्य के अन्तर ही हैं। गान, गीति और गेय ये समानार्थी हैं। गीतियाँ सहृदय पाठक को सद्यः आनन्दानुभूति कराने में समर्थ होती हैं। यौवनविलास, ऋतुचित्रम्, अजामिलोपाख्यानम्, पारम्परिक विधाश्रित काव्य हैं। करूणात्रिंसिका विलापलहरी आदि नूतनविधाश्रित गीतिकाव्य हैं। तुलाभारप्रबन्धम्, राजपुत्रागमनम् प्रभृति रचनायें प्रशस्तिपरक हैं। श्रीनिवास दीक्षित और अन्नदाचरण आदि पुनरूत्थानवादी गीति कवि हैं। अलिविलाससंलाप शास्त्रीय गीतिकाव्य हैं। इस काल में होने वाले प्रमुख गीति कवियों में उल्लेखनीय हैं- श्रीधरनम्बी, विश्वनाथ सिंह, स्वातितिरूनालरामवर्म कुलशेखर, बाबू रेवाराम, सीताराम भट्टपर्वणीकर, उमापति त्रिपाठी, गोपीनाथ दाधीच, श्रीरामकृष्ण भट्ट, हरिबल्लभ भट्ट, प्रमथनाथ, कमलेश मिश्र, नारायण भट्ट, शिवकुमार शास्त्री, कन्हैयालाल शास्त्री, विधुशेखर भट्टाचार्य, लक्ष्मण सूरि, सरोज मोहिनी देवी, रामावतार शर्मा, अप्पाशास्त्रीराशिवडेकर आदि। कमलेश मिश्र ने जयदेव के गीतगोविन्द की परम्परा में कमलेश विलासः की रचना किये। इन्होंने संस्कृत में विदेशी विधाओं को स्वीकार किया और नये संस्कृतेतर छन्दों को भी संस्कृत भाषा में अपनाया। इन्होंने गजल और कव्वाली आदि को अपनी रचना में स्थान दिया और दोहा आदि छन्दों को भी संस्कृत में स्थान दिया। कमलेश मिश्र वह पहले कवि हैं जिन्होंने संस्कृत में गजल व कव्वाली लेखन का श्रीगणेश किया। इन्होंने संस्कृत के वातायन को अन्य साहित्यों में विद्यमान अच्छाइयों को लेने की प्रेरणा दिया। राशिवडेकर तिलक महाशयस्य कारागृहवासः लिखकर राष्ट्रवादी गीत लेखन का श्रीगणेश करने वाले प्रथम कवि के रूप में माने जाने चाहिए।

1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

उत्तरमाला-।

1. ग	2. घ.	3. क	4. ख	5. ग	6. क
7. क	8. क	9. क	10. ख	11. क	12. क
13. क	14. ख	15. क	16. क	17. ख	18. ख

उत्तरमाला- ठ

1. क	2. क.	3. क	4. क	5. घ	6. क

7. क	8. ग	9. घ	10. क	11. ख	12. क
13. ग	14. क	15. घ	16. घ	17. क	18. ग

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. नारद पुराण गीता प्रेस, पृ0 186-187।
2. साहित्यदर्पण 6-239।
3. संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास पेज 521।
4. संस्कृत साहित्य का अभिनव इतिहास पृ0 184।
5. आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास सम्पादकीयम् पेज 16।
6. आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास पेज 241।

1.9 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के लिए आप निम्न ग्रन्थों को भी देख सकते हैं।

1.संस्कृत वाङ्मय का वृहद् इतिहास सप्तम - खण्ड, आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास सम्पादक डा0 जगन्नाथ पाठक प्रकाशक उ0प्र0 संस्कृत संस्थान।

2.आधुनिक सस्कृत काव्य परम्परा लेखक श्री केशव मुसलगांवकर (युवराज पब्लिकेशन्स मथुरा रोड आगरा)।

3.आधुनिक संस्कृत काव्य की परिक्रमा लेखक डा0 मंजुलता शर्मा। (युवराज पब्लिकेशन्स मथुरा रोड आगरा)।

4.आधुनिक संस्कृत साहित्य सन्दर्भ सूची लेखे डा0 राधा बल्लभ त्रिपाठी (युवराज पब्लिकेशन्स मथुरा रोड आगरा)।

1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. गीतिकाव्य का स्वरूप और उसके भेद पर प्रकाश डालिये।
2. रामावतार शर्मा के जीवन-वृत्त व उनकी गीति रचनाओं पर प्रकाश डालिये।
3. अप्पाशास्त्री राशिवडेकर के कृतित्व पर प्रकाश डालिये।

इकाई. 2 बीसवी शताब्दी के संस्कृत गीतकाव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ कवि एवं उनके काव्य

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 गीतिकाव्य के भेद
2.3.1प्राचीन विधाश्रित गीतिकाव्य
2.3.2 नूतन विधाश्रित गीतिकाव्य
2.3.3 नूतन छन्द आश्रित गीतिकाव्य
2.3.4 अनूदित गीतिकाव्य
2.3.5 राष्ट्रवादी गीतिकाव्य
2.3.6 गलज्जलिका गीतिकाव्य
2.3.7 छन्दोमुक्त गीतिकाव्य
2.3.8 लोक गीतिकाव्य
2.3.9 अन्य गीतिकाव्य
2.4 बीसवीं शताब्दी के प्रमुख कवि एवं उनके काव्य
2.5 सारांश
2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
2.8 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री
2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

उन्नीसवी शताव्दी के संस्कृत गीतिकाव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ एवं गीतिकाव्यो के प्रमुख कवि एवं उनके काव्यो से आप परिचित हो चुके है। प्रस्तुत इकाई मे बीसवी शताब्दी के प्रमुख कवि एवं उनके काव्य पर प्रकाश डालना अपेक्षित है।यद्यपि इस ईकाई में केवल कवि एवं काव्य ही विवेचनीय है। फिर भी बीसवी शताब्दी में गीतिकाव्यों के प्रवृत्तियो में बहुत अधिक परिवर्तन भी देखने को मिलता है अतएव गीतिकाव्यो की नूतन प्रवृत्तियों को भी आलोचित करना समीचिन होगा ।बीसवी शताब्दी को स्वतंत्रता पूर्व एवं स्वातंत्र्य उत्तर इन दो भागो में बटा हुआ रख सकते है। 1900 से लेकर 1947 तक आजादी की लडाई लडी गयी। जिसके परिणाम स्वरूप भारत 15 अगस्त 1947 को आजाद हुआ उसके बाद हम स्वतंत्र भारत में आजादी की हवा में जीने लगें।

इस काल खण्ड मे संस्कृत कवियों ने प्राचीन विधापरक दूतकाव्य,रागात्मक काव्य,स्तोत्रकाव्य लहरी काव्य आदि की रचना किये। नूतन विधा से सम्बन्धित शोकगीत काव्य तथा व्यंग्य लिखे।इस काल खण्ड में संस्कृत में देशज और विदेशज दोनो तरह के छन्दो में रचनाएँ की गयी है। कुछ कवियों ने हिन्दी,अंग्रजी व फारसी के काव्यो का अनुवाद भी किया। इस काल खण्ड मे लिखी जाने वाली गीतिया में सबसे प्रमुख गीतिविधा राष्ट्रवादी गीतिया रही है। इस विधा में आजादी की लडाई लड़ने के लिए भारतयों का आह्वान करने वाली बहुत सारी रचनाओं के साथ साथ आजादी कें नायको को केन्द्र में रखकर रचनाए आयी। इसमें महात्मा गाँधी से सम्बन्धित बहुत सी रचनाए लिखि गयी। संस्कृत में गज़ल विधा में भट्टमथुरानाथ शास्त्री , बच्चूलाल अवस्थी डा0 जगन्नाथ पाठक,डा0राजेन्द्र मिश्र व पुष्मा दीक्षित ने लिखा है।लोकगीत को डा0राजेन्द्र मिश्र ने संस्कृत में न केवल स्थापित किया बल्कि लोकगीतों का संस्कृत करण करने से संस्कृत की समृद्धता होगी इस विचार को भी प्रतिपादित किया ।बीसवी सदी में छन्दोमुक्त गीति रचनाएँ बहुत सी प्रकाश में आयी।

बीसवी सदी के प्रमुख कवियों में श्री अरविन्द घोष,शम्भुशर्मा,शिवप्रसाद भारद्वाज, बटुकनाथ शास्त्री ख्रिस्ते,वनमाली भारद्वाज,वेंकट राघवन,भट्ट मथुरानाथ शास्त्री,गिरधर शर्मा नवरत्न,क्षमा राव,दत्त दिनेश चन्द्र,महादेव शास्त्री, स्वामीनाथ पाण्डेय,रामनाथ पाठक ‘‘प्रणयी’’, परमेश्वर अय्यर ,हरिदत्तपालीवाल ‘‘निर्भय’, रामकरणशर्मा, शिवशर्मा चर्तुवेदी, राजेन्द्र मिश्र, हरिदत्त शर्मा, राघा बल्लभ त्रिपाठी, विन्ध्येश्वरीप्रसाद मिश्र, रेवा प्रसाद द्विवेदी, डा0कृष्ण कुमार मिश्र, आदि का नाम प्रमुख है।

2.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई जिसका विषय बीसवी शताब्दी के संस्कृत गीतिकाव्य के प्रमुख कवि और उनके काव्य है। इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप—

- ❖ बीसवी सदी के गीति काव्य की प्रमुख प्रवृत्तिया कौन-कौन सी है निम्न बाते जानने में समर्थ हो सकेंगे?
- ❖ इस काल खण्ड के प्रमुख कवि और उनके काव्य को जानने में समर्थ हो सकेंगे।

- ❖ गज़ल विधा,लोकगीत तथा संस्कृतेतर छन्दों पर आश्रित रचनाएं कौन-कौन सी है ?
- ❖ संस्कृत में छन्दोमुक्त काव्यों को जानने समर्थ हो सकेंगे?
- ❖ महात्मा गांधी का व्यक्तित्व कर्तव्य और जीवन दर्शन कवियों का प्रिय विषय रहा है, इस विषय को रेखांकित कर सकेंगे।

2.3 गीतिकाव्य के भेद

पूर्व इकाई में आप ने गीतियों का स्वरूप प्रवृत्तियाँ व प्रमुख कवियों एव उनके काव्यों का अनुशीलन किया है। प्रस्तुत इकाई मे बीसवीं सदी मे गीत लेखन की बहुत सी प्रवृत्तियाँ आलोचना का विषय है। बीसवीं सदी मे बहुत से कवियों ने शिल्प विषय तथा छन्द की विविधता को लेकर रचनाएँ किया है । प्रवृत्तियाँ विधा व भेद समानार्थी प्रयुक्त है । इस कालखण्ड मे जो गीतियां लिखी गयी वे निम्न भेदों के अर्न्तगत रखी जा सकती है ।

1.प्राचीन विधाश्रित गीतिकाव्य

2.नूतन विधाश्रित गीतिकाव्य

3.नूतन छन्द आश्रित गीतिकाव्य

4.अनूदित गीतिकाव्य

5.राष्ट्रवादी गीतिकाव्य

6.गलज्जलिका गीतिकाव्य

7. छन्दोमुक्त गीतिकाव्य

8. लोक गीतिकाव्य

9.अन्य गीतिकाव्य

2.3.1 प्राचीन विधाश्रित गीतिकाव्य

संस्कृत साहित्य में प्राचीन काल से ही दूतकाव्य ,स्तोत्रकाव्य रागात्मकगीतिकाव्य ऋतुपरक काव्य व लहरी काव्यों के लेखन की परम्परा रही है। बीसवी सदी में भी बहुत सारे दूतकाव्य लिखे गये।इस दृष्टि से प्रज्ञाचक्षु रामभद्राचार्य की भृंगदूतम् उल्लेखनीय रचना है। इसके अतिरिक्त सूर्यनारायण शास्त्री का कीरसंदेशः प्रमुख रचना है। इष्ट का स्तवन वेदो के काल से ही किया जाता रहा है । बीसवी सदी में बहुत से स्तोत्र लिखे गये जिनमें उल्लेखनीय रचनाए है -महादेव शास्त्री का पूर्णास्तवः व गंगाष्टकम्,महालिंग शास्त्री की देशिकेन्द्रस्तुतिः तथा विध्नेश्वरवृत्तमालास्तवः आदि। रागात्मक गीतिकाव्यों में जानकीबल्लभ शास्त्री की भारतीवसंतगीतिः,आगेटि परीक्षित शर्मा की ललितगीतालहरी उल्लेखनीय रचनाए है। इसके अलावा डा0राजेन्द्र मिश्र की एक अप्रकाशित रचना गीतभारतम् भी इसी कोटि की रचना है। ललितगीतालहरी को लहरी शब्द देखकर इसे लहरी काव्य की

कोटि में रखना उचित नही है। यह विशुद्ध रूप से रागात्मक गीतिकाव्य है। बीसवी सदी में बहुत सी लहरी रचनाए लिखी गयी। जिनमें से कुछ का अग्र लिखित है-क्षमाराव की मीरालहरी, मेधाव्रत शास्त्री की दयानन्दलहरी दिव्यानन्दलहरी सुखानन्द लहरी,एस0वी वेलणकर की विरहलहरी , राधावल्लभ का लहरीदशकम् (यह दस लहरी काव्यों का संग्रह है इसी में जनतालहरी और रोटिका लहरी संकलित है।), डा0 रसिक लाल पटेल की मातृलहरी पूर्णालहरी सौन्दर्यलहरी सारस्वतलहरी, माधुर्यलहरी, रामभद्राचार्य की सरयूलहरी, आर0गणेशकृत साम्बलहरी, के0आर0 सुब्रह्मण्य कृत अनुकम्पालहरी, श्रीभाष्यम् विजयसारथी कृत विषादलहरी, श्रीधर भाष्कर वर्णेकर कृत मातृभूलहरी, भास्कर पिल्लै कृत प्रेमलहरी आदि आर0गणेश का ऋतवः काव्य है।

2.3.2 नूतन विधाश्रित गीतिकाव्य:-

उन्नीसवी सदी में संस्कृत में शोकगीति विधा और व्यंग्य गीतियाँ ये दानों भी लिखी गयी। बीसवी सदी में भी यह गीति विधाए और अधिक प्रचलित रही । इस सदी में जो शोकगीतियाँ रची गयी उनमें उनमें अग्रलिखित रचनाए उल्लेखनीय है - श्रीधर पाठक की आराध्यशोकाञ्जली मेधाव्रतकृत मातृविलापः,मातः प्रसीद,मातः का ते दशा,मधुकर गोविन्द माईणकर कृत स्मृतितरंगम्,तथा डा0उमाकान्त शुक्ल की कूहा, बद्रीनाथ का शोकश्लोक शतकम्, श्री वी0 एन0 दातार की अग्नि यात्रा आदि इस शती की ही रचना शबरीविलासः सेतायर है।

2.3.3 नूतनछन्द आश्रित गीतिकाव्य

संस्कृत में पारम्परिक छन्दो में रचनाए सतत् होती रही है। उन्नीसवी सदी के कवि कमलेश मिश्र ने कमलेश विलासः में संस्कृतेतर छन्दो का प्रयोग कर संस्कृत में अभिनव प्रयोग किये।इसकी प्रवृत्ति बीसवी सदी में अधिक दिखाई पड़ती है। इस सदी में पश्चिम या पौरस्त देशो के प्रभाव से अनेक छन्दो का संस्कृत में प्रयोग किया गया है। भट्टमथुरानाथ शास्त्री ने पारम्परिक छन्दो के साथ ही साथ गज़ल सेारठा सवैया धनाक्षरी और कवित्त का प्रयोग किये। प्रो0विन्ध्येश्वरीप्रसाद मिश्र ने सवैया धनाक्षरी दोहा सोरठा आदि नूतन छन्दो मेंअपनी रचनाए की। महाराज दीन पाण्डेय ने गज़ल के अलावा कुण्डलिया और दोहा छन्द में भी लिखा है । कव्वाली, रूबाई, लिरिक, सानेट, आऊ, हाईकू, तोका, यासूई आदि छन्दों में भी रचनाए की गयी। डा0 रहस विहारी द्विवेदी छन्दो पर आश्रित काव्य भेदो में हाइकू आदि का उल्लेख किये है। श्री विरेन्द्र कुमार भट्ट ने संस्कृत में सानेट लिखने का सराहनीय कार्य किया । इनका सानेटो का संग्रह कलापिका नाम से प्रकाशित है। इसमें 300 सानेट का संग्रह है।

2.3.4 अनूदित गीतिकाव्य

बीसवीं शती में बहुत सें संस्कृत कवियों ने आंग्ल। भाषा रूसी जर्मन हिन्दी भाषा एवं फारसी भाषा के रचनाओ का गीतियों में अनुवाद किया लक्ष्मण शास्त्री तैलंग ने मर्चेन्ट आफ वेनिस का संक्षिप्तीकरण वेदस्वतीसार्थवाहः नाम से किया तथा हैमलेट का अनुवाद हेमन्त कुमारः नामक रचना में किया। गिरिधर शर्मा नवरत्न ने गोल्डस्मिथ की अंग्रेजी कविता हरमिट का योगी शीर्षक से काव्यानुवाद

किया। गिरिधर शर्मा नवरत्न ने हिन्दी के कवि नन्द दास के भ्रमरगीतो का प्रेमपयोधिः नाम से अनुवाद किया। इन्होने उमर खैयाम की रूबाईयों का संस्कृत में उमर सुक्ति सुधा शीर्षक से अनुवाद किया हरिदत्तपालीवाल निर्भय को रूसी एवं जर्मन भाषा की कविताओं के अनुवादक के रूप में डा0 राधाबल्लभ त्रिपाठी ने स्मरण किया।

2.3.5 राष्ट्रवादी गीतिकाव्य

बीसवी शताब्दी का पूर्वाद्ध 14 अगस्त 1947 तक दासता की बेडियों में जकड़े हुए भारत का चित्र है इस समय आजादी मान-सम्मान स्वाभिमान् अपना शासन,पूर्व के गौरव का ख्यापान संस्कृत कवियों का लोकप्रिया विषय वस्तु रहा है। आजादी की लड़ाई लड़ने वाले नायको चिन्तको देशभक्तो पर आधारित काव्य ही राष्ट्रवादी गीतिकाव्य के नाम से जाना जाता है। इस दृष्टि से उल्लेखनीय रचनाओ में प्रसिद्ध क्रान्तिकारी अरविन्द घोष की भवनीभारती प्रमुख रचना है। इसके विषय में डा0 राधा बल्लभ त्रिपाठी का अभिमत है - ''भवानीभारती राष्ट्रीय नवजागरण की गीता है, एक क्रान्तिकारी का शंखनाद है ओजस्विता एवं शक्ति का संधान है तथा भारत राष्ट्र का भवितव्य का स्वप्न और देश की अखण्डता का आह्वान भी है प्रत्येक देशवासी को जागृत और स्फूर्त करना कवि का लक्ष्य है चाहे वह किसी प्रान्त का हो किसी भी सम्प्रदाय या धर्म का अनुयायी हो -

भो-भो अवन्त्या मगधाश्च बड्गा अड्गाः कलिंड्गाः कुरवश्च सिन्धोः।
भे दक्षिणात्याः शृणुतान्ध्रचोलाः वसन्ति ये पन्चनदेषु शूराः।।
ये के त्रिमूर्तिम् भजथैकमीशं ये चैकमूर्ति यवना मदीयाः।
माताह्वये वस्तनयान् हि सर्वान् निद्रां विमुञ्चध्वमये शृणुध्वम्।।

यह काव्य संस्कृत भाषा के अपूर्व जीवनी शक्ति का परिचायक भी है जिस काल में रविन्द्र नाथ राष्ट्रीय गीत लिख रहे थे या बंकिम चन्द्र के बन्दे मातरम् से भारत गुँज रहा था उसी काल में संस्कृत में एक आर्ष प्रतिभा के धनी कवि ने इस काव्य की रचना प्रारम्भ की जिसके स्तर का काव्य उस काल में अन्य किसी भाषा में एकाध को छोडकर कठिनाई से मिलेगा।यद्यपि भवानी भारती में कही व्याकरण की अशुद्धिया है,क्योकि मई 1908 ई0 में कलकत्ता पुलिस द्वारा इसकी एकमात्र पाण्डुलिपि जप्त कर लेने के बाद कवि को इसे न पूर्ण करने का अवसर मिला और न संसोधित करने का। अभिव्यक्ति के अबाध प्रवाह में ऐसी अशुद्धिया आर्ष काव्य का प्रत्यय देती है।स्वातन्त्र्य की लडाई लड़ने वालो में महात्मा गांधी सुभाष चन्द्र बोस, पण्डित जवाहर लाल नेहरू डा0 राजेन्द्र प्रसाद आदि महानायको का बहुमूल्य योगदान रहा है। इन नायको से सम्बन्धित बहुत सी रचनाए संस्कृत में आयी।सबसे अधिक रचनाओ के केन्द्र विन्दु बने राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी। गाँधी जी से सम्बन्धित जो रचनाए स्वातन्त्र्य पूर्व और स्वातन्त्र्योत्तर काल मेंआयी उनका उल्लेख करना अपरिहार्य है। वे रचनाए है -सत्यदेव वासिष्ठ का सत्याग्रहनीतिकाव्यम् (यह 1939 में प्रकाशित हुई), के0एल0वी0शास्त्री कृत महात्माविजयः,व्रजानन्द कृत गान्धीचरितम्,शम्भुशर्माकृत गांधीनिर्वाणकाव्यम्, वी0राघवन् कृत महात्मा, अनन्त विष्णु काणे कृत गाँधीगीता, गणपति शंकर शुक्ल कृत गान्धीशतश्लोकी , विजयराघवाचार्य कृत गान्धीमहात्म्यम, चारू देव शास्त्री कृत गांधीचरितम् ,महाभिक्षुकृत मोहनगीता मोहनपंचाध्यायी गांधी प्रवाहणम् श्रीधर भास्कर वर्णेकर कृत ग्रामगीता श्रमगीता,चिन्तामणि द्वारकानाथ देशमुख कृत

गांन्धीसुक्तिमुक्तावली,ब्रह्मानन्दशुक्ल कृत गान्धिचरितम ,रमेशचन्द शुक्ल कृत गान्धीगौरवम्, प्रख्यात गांधीवादी कवि पण्डिता क्षमा राव देवी कृत सत्याग्रहगीता,उत्तरसत्याग्रहगीता, उत्तरजयसत्याग्रहगीता,स्वराज्यविजयम् आदि। इनके अतिरिक्त राष्ट्रवादी रचनाओ में उल्लेखनीय है- जयराम शास्त्री का जवाहरवसन्तसाम्राज्यम् श्रीधर भास्कर वर्णेकर का जवाहरतरङ्गिणी ,श्रीरामवेलणकर का जवाहरचिन्तनम्, गणपतिशंकर शुक्ल की भूदानयज्ञगाथा, धर्मदेव विद्यामार्तण्ड की महापुरूषसंकीर्तनम दत्त दीनेश चन्द्र की भारतगाथा सुभाषगौरवम् तथा रवीन्द्रप्रतिभा महादेव शास्त्री का भारतशतकम्, शिवप्रसाद का भारतसंदेशः बालकृष्ण भट्ट का स्वतंत्रभारतम् ,यज्ञेश्वर शास्त्री का राष्ट्ररत्नम्,श्रीकृष्णदत्त शास्त्री का भारतदर्शनम् प्रतापप्रशस्तिः सैनानीसुभाषः आदि काग्रेस ने भारत की आजादी की लडाई में अवर्णनीय योगदान दिया। कांग्रेस के अध्यक्षो को केन्द्र में रखकर श्रीलक्ष्मीनारायण ने राष्ट्र सभापति गौरवम् काव्य लिखा इसके अतिरिक्त श्री प्रीतमलाल नरसिंहलाल कच्छी का मातृभूमिकथा तथा नारायण प्रसाद त्रिपाठी की श्रीभारतमातृमाला तथा उमाशंकर की काव्यकलिका भी राष्ट्रवादीकाव्य है।

2.3.6 गलज्जलिका गीतिकाव्य

गज़ल विधा का जन्म फारसी भाषा में हुआ हिन्दुस्तान में मुगलों की शासन सत्ता के समय विकसित हुई उर्दू भाषा मे इस विधा को प्रतिष्ठा प्राप्त हुई। बहादुर शाह जफर के शासन करते समय मिर्जा गालिब नाम के महान कवि पैदा हुए जो गजल के बादशाह कहे जाते है। उन्ही की परम्परा में मीर आदि लब्धप्रतिष्ठ गजलकार हुए जिन्होने फारसी से ही मिलती जुलती उर्दू भाषा में भी गजले लिखी। उर्दू भाषा की वही गजल परम्परा उन्नीसवी शती में संस्कृत में भी अवतरित हुई सर्व प्रथम कमलेश मिश्र ने कमलेश विलासः मे संस्कृत में गजल विधा का प्रयोग किया। गजल को गलज्जलिका नाम सर्व प्रथम डा0राजेन्द्र मिश्र ने अपनी वागवधूटि रचना में 1978 ई0 में दिया। बीसवी सदी के प्रारम्भ में जयपुर के सुप्रसिद्ध कवि भट्टमथुरानाथ शास्त्री(मंजुनाथ)ने इसे फारसी गजलकारो की तरह ही प्रतिष्ठापूर्वक संस्कृत में भी स्थापित किया। डा0 राजेन्द्र मिश्र मथुरा नाथ शास्त्री को गजलो के प्रथम उद्गाता के रूप में मानते है। मथुरानाथ शास्त्री की 1927 ई0 में प्रकाशित रचना गीतिवाणी के उर्दुभाषाचत्वर नामक खण्ड में 58 गजलो का संकलन है । भट्टमथुरा नाथ शास्त्री ने प्रायः 22बहरों का प्रयोग करते हुए सैकड़ो गजल गीतिया लिखी साहित्य वैभव तथा गीतवीथी नामक दो काव्य संग्रहो मे संकलित वे गजल गीतिया 1930 ई0 में निर्णयसागर प्रेस बाम्बे से प्रकाशित हुई ।पण्डित जानकी वल्लभ शास्त्री एवं राधा कृष्ण ने भी गजले लिखा था लेकिन अब ये नही मिलती। आचार्य बच्चू लाल अवस्थी एवं डा0जगन्नाथ पाठक ने इस विधा को संस्कृत में औरअधिक प्रतिष्ठा दिलाया। समीक्षको ने आचार्य बच्चूलाल अवस्थी को उर्दू और फारसी की श्रेष्ठ समझ रखने के कारण गजलविधा को उसी ठसक से लिखने के कारण विशेष रूप से सम्मान की दृष्टि से देखा है। डा0जगन्नाथ पाठक भी बच्चूलाल अवस्थी के लगभग करीब गजलकार के रूप में जाने जाते है। सम्प्रति डा0 राजेन्द्र मिश्र महाराज दीन पाण्डेय , पुष्पा दीक्षित गजल विधा से संस्कृत को विशेष रूप से समृद्ध कर रहे है। डा0 राजेन्द्र मिश्र की मधुपर्णी में 22 गलज्जलिकाए है ,मत्तवारणी,मे 68 गलज्जलिकाए है, हर्विधानी में 54 गलज्जलिकाए है शिखरिणी में कुल 51 गलज्जलिकाए है। सबसे अधिक प्रमाण में गजल लिखने का श्रेय डा0 राजेन्द्र मिश्र जी को जाता है।

उज्जैन में मनाया जाने वाला कालीदास समारोह के अन्त में होने वाले संस्कृत कवि समवाय में डा0 मुरली मनोहर पाठक ने अपने काव्य पाठमें गजल को भी गाया है। उन्हे भी गजल कवि के रूप में मै मानता हूँ।

डा0 राजेन्द्र मिश्र ने गजल के विषय में अभिराजयशोभूषणम् के प्रकीर्णोन्मेष में गजल विधा पर शास्त्रीय विचार करने के साथ ही साथविभिन्न मात्राओ वाली गजलो का उदारण जो दिया है। उसी को उन्होने संस्कृत का अर्वाचीन समीक्षात्मक काव्य शास्त्र में गलज्जजिका प्रकरणम् में विशेष रूप से रखा है। वही से इसके शास्त्रीय पक्ष पर प्रकाश डाला जा रहा है-

संवेदनमयी गीतिर्गजलाख्या न संशयः।
यत्र प्रणयगाम्भीर्यं नैष्ठिकत्वञ्च वर्णिते।।
प्राणनपि पणीकृत्य सोढ्वा च शतलाञ्चछनम्।
वैरिभूतेऽपि चात्मीये प्रीतिबन्धाऽनुपलनम्।।
तथैव रागबन्धस्य परित्यागोऽवमाननम्।
प्रियेण प्रियया वाऽपि कृच्छ्र तत्परिणामजम्।।
शाठयकैतवदुर्भावच्छलमायाप्रवञ्चनम्।
अनुकम्पासमासक्तिममताशपथादिकम् ।।
ऐवमेवेतरे भावा मानवीयाः परात्पराः।
मर्मस्पृशोऽतिसूक्ष्माश्च चेतनान्दोलनक्षमाः।।
भंड्गीभणितिमाश्रित्य मान्यमानैःकवीश्वरैः ।
परिकल्प्य प्रकाश्यन्ते नूनं गजलगीतिषु।।
श्रावं श्रावं च गीतार्थम् नयने वारि वर्षतः।
ध्रुवं हर्षविषादाभ्यां सचेता यदि पाठकः।।
त्त एवं मया गीतिराख्यातेयं गलज्जलाः।
गलन्नेत्रजलत्वाद्वा सा गलज्जलिका पुनः।।
अभिराजयशोभूषणम् प्रकीर्णोन्मेषः 60-67

अर्थात् गजल नाम की गीति संवेदना से ओतप्रोत होती है इसमें कोई संसय नही है जिसमें वर्णित होती है प्रेम की गम्भीरता एवं प्रेम की नैष्ठिकता। प्राणो की भी बाजी लगाकर,सैकड़ो लांक्षनो को भी सहकर तथा अपने लोगो के वैरी हो जाने पर भी प्रीति के अनुवन्ध का पालन करना और उसी प्रकार किसी के साथ बांधे गये प्रीति अनुबन्ध को प्रेमी अथवा प्रेमिका द्वारा तोड़ देना या अपने किसी कृत्य से कलंकित कर देना और फिर उसके परिणामवस उत्पन्न व्यथा को झेलना। शठता धूर्तता, छल ,माया प्रवंचना, अनुकम्पा,अतिशय आशक्ति ममत्व, शपथ आदि का आशय तथ इसी प्रकार अन्यान्य भी एक से एक श्रेष्ठ चेतना को झिंझोड देने वाले अत्यन्त सूक्ष्म मर्मस्पर्शी मानवीय भाव-अत्यन्त माननीय कवीश्वरो द्वारा परिकल्पित कर भंगी भणित के सहारे निश्चित रूप से गजल गीति में प्रकाशित किये जाते है।

गजल गीति के अभिप्राय को सुन-सुन कर यदि पाठक सहृदय है तो निश्चित रूपसे हर्ष एवं विषाद से प्रभावित आँखे आँसू बरसाती है,इसी लिए मैने इस गीति को संस्कृत में गलज्जला नाम दिया है। नेत्र जल की वृष्टि कराने के कारण उसी गीत को गलज्जलिका भी कहते है।

विविधो वन्धविस्तारो दृश्यतेऽत्र हि गीतके।
बन्धदैर्ध्यपरस्सोऽयं फारस्यां बहरो मतः।।
लघीयान्वहरःक्वापि द्राघीयानथवा क्वचित्।
प्रयोगक्षमतादर्शी सत्कवेश्चात्र दृश्यते।।
संस्कृतेऽक्षरविस्तारे गणानां यादृशी स्थितिः।
बहरेऽपि तथैवाऽस्ते कश्चिद्रम्यो गण क्रमः।।
मुत्कारवे मुसम्मन सालिमेति क्वचिद्धि सः।
क्वापि बहरे कामिल मुसम्मन इतीर्यते।।
मफउल-फऊलून-फाईलुन्निती संज्ञकाः।
गणाश्चापि प्रसिद्धास्ते बहरेष्वेषु सम्मताः।।
कस्मिन्नु बहरे को वा गणक्रमः प्रयोक्ष्यते ।
फारसी छन्दोविचितौं सर्वमेतत्सुनिश्चितम्।
अभिराजयशोभूषणम् प्रकीर्णोन्मेषः 68-73

अर्थात्- नाना प्रकार का बन्ध विस्तार इस गीत में दृष्टिगोचर होता है।बन्ध की दीर्धता को प्रदर्शित करने वाला यह प्रस्तार फारसी में बहर कहा जाता है। श्रेष्ठ गजलकार की क्षमता को प्रदर्शित करने वाली यह बहर इस गजल गीत में कही छोटी तो कही बड़ी दिखाई पड़ती है।संस्कृत कविता में गणो के अक्षर विस्तार में जैसी स्थिति दिखाई पड़ती है वैसी ही फारसी गजल की बहर में भी एक रमणीय गण व्यवस्था दृष्टि गोचर होती है। कही पर तो वही बहर मुत्कारबे मुसम्मन सालिम कही जाती है और कही बहरे कामिल मुसम्मन। इन बहरो में मफऊल-फऊलून -फाईलून आदि संज्ञा वाले प्रसिद्व गण भी व्यवस्थित होते है। गजल की किस बहर में कौन गण क्रम प्रयुक्त किया जायेगा, फारसी छन्द शास्त्र में यह सब वर्णित है।

गजलस्य त्रयो भागास्तद्विद्भिःपरिभाषिताः।
मतला-शेर-मक्ताख्यास्तादिदानीं प्रतन्यते।।
गजलारम्भि यद्वाक्यं मूलभावप्रकाशकम्।
तदेव फारसीवाचि मतलेति समुच्यते ।।
अन्तिमश्चापि यो बन्धः कविनामांडिकतः खलु।
सोऽपि गजलतत्वज्ञैर्मकतेति निगद्यते।।
मतलामक्तयोर्मध्ये मूलभावैकपोषिणः।
बन्धभिन्नाशया वापि कथिताः शेरसंज्ञका।।
फारसी संविधानेन सर्वेणैतेन चाप्यलम्।
गजलेन च कस्तोषो देववाणी विपश्चिताम्।।
तस्माद्गलज्जलेत्याख्या स्याद्गलज्जलिकाऽथवा।
रोचतां संस्कृतेभ्यः इति प्रस्तूयते मया।।
मतलाऽऽरम्भिका वाच्या शेर उच्यते मध्यिका।
अन्तिका च तथैवास्तु मकतेति मतम्मम।।
अभिराजयशोभूषणम् प्रकीर्णोन्मेषः 74-80

अर्थात् गजल के रहस्य जानने वालो ने गजल को तीन भागो को परिभाषित किया है फारसी में मतला-मक्ता और शेर नाम वाले वे तीनो भाग अब व्याख्यात किये जा रहे है । मूल भाव को प्रकाशित करने वाला गजल का प्रारम्भिक वाक्य युगल होता है वही फारसी भाषा में मतला कहा गया है। सामान्य भाषा में इसी को मुखड़ा भी कहा जाता है और जो अन्तिम बन्ध(वाक्ययुग्म)होता हैं कवि के उपनाम(तखल्लुस)से अंकित वह भी गजल तत्वज्ञों द्वारा मक्ता कहा गया है। मतला और मक्ता के बीच मूल भाव को ही पोषित करने वाले अथवा भिन्न-भिन्न अभिप्रायो वाले जो बन्ध आते है वे शेर कहे जाते है। वहरहाल इस सारे के सारे गजल के फारसी संविधान से क्या लाभ ? देववाणी के विद्वज्जनों को गजल संज्ञां से भी भला क्या परितोष?इसलिए गलज्जला अथवा गलज्जलिका संज्ञा ही संस्कृतज्ञो को रूचे इस मंसा से मै उसके संस्कृत निष्ठसंघटको को प्रस्तुत कर रहा हूँ मतला को आरम्भिका,शेर को मध्यिका तथा मक्ता को अंत्यिका कहना चाहिए ऐसा मेरा मतहै

आरम्भिका बन्ध के दोनों वाक्यो का वह दुहराया जाने वाला अन्तिम शब्द गजल मे एक ही होना चाहिए जिसे काफिया कहा जाता है। डा0 राजेन्द्र मिश्र ने 14,16,17,19,20,22,24,28,32, मात्रा वाले गजलो का उदाहरण अभिराजयशोभूषणम् में दिया है। डा0 राजेन्द्र मिश्र की साँप वाली गजल दर्शनीय है।

साधूतामाचरेयुः भुजङ्गाः कथम्।
बन्धूतां दर्शयेयुः भुजङ्गाः कथम्।।
यदविषग्रन्थिरेषां मुखे कीलिता।
तेन निन्द्याः भवेयुः भुजङ्गाः कथम्।।
दण्डपाणिर्जनः चेत् प्रतीक्षारतः ।
तत् विलात् निस्सरेयुः भुजङ्गाः कथम् ।।
नो गृहे वा वने तन्निवासेा मतः।
जीवनं यापयेयुः भुजङ्गाः कथम्।।
नो विधात्रा द्विपादाः इमे निर्मिताः।
मत्र्यवत् सञ्चरेयुः भुजङ्गाः कथम।।
नापि संयोजिताः पक्षतिभ्याम् इमे ।
तद् पश्यत्युत्पतेयुः भुजङ्गाः कथम्।।
शेषशायी हरिःकिन्न मेघागमे।
गौरवं विस्मरेयुः भुजङ्गाः कथं।।
किन्न संन्तीति द्विजिह्वाः समाजेऽधुनाः।
तत् कदर्थं त्रपेयुः भुजङ्गाःकथम्।।

2.3.7 छन्दो मुक्तगीति काव्य-

बीसवी सदी में बहुत सी रचनाए छन्दोमुक्त विधा में लिखी गयी। छन्दो मुक्त काव्य क्या है ? इस पर विचार करते हुए डा0राजेन्द्र मिश्र ने कहा है- ‘‘वांङ्मय में एसा कुछ भी नही है जो सर्वथा छन्दोमुक्त हो। वस्तुतः इस परमार्थ का अपलाप नही किया जा सकता ऐसा होने पर भी जो काव्य वार्णिक अथवा मात्रिक गणो द्वारा प्रणीत न किया गया हो तथा एक नैसर्गिक लयवहिता से युक्त हो उसी को आज

छन्दोमुक्त काव्य कहते हैं।..... गद्य और पद्य दोनो के जिवात को धारण करने वाला होता है यह छन्दोमुक्त वांङ्मय जो कि पद्यात्मक लय के द्वारा गद्य विधा मे लिखा जाता है। वस्तुतः यह छन्दोमुक्त काव्य लयवाही गद्य है कुछ और नही। इसी को अंग्रेजी भाषा मे 'रिदमिक प्रोज'' कहा जाता है।.....संस्कृत नाटको में पहले से ही आत्मगत कथन अपवारित ,एवं आकाश भाषित की परम्परा लोकप्रिय रही है जिनमे पात्रं की भावनाए निर्वाध गति से अभिव्यक्ति होती रही है। भारत वर्ष की यही भावाभिव्यक्ति शैली जावा तथा बाली के वायाङगो के सुलुक (श्लोक गायन) के रूप में प्रतिष्ठित हुई ।और वही पुनः भारत में लौटी है छन्दोमुक्त काव्य शैली बनकर ''2 (संस्कृत का अर्वाचीन संमिक्षात्मक काव्य शास्त्र पेज 428, 430, 432 डा0 राजेन्द्र मिश्र ने अभिराजयशोभूषणम् में छन्दो मुक्तता का मूल हेतु कवि की अभिरूचि को माना है। इन्होने 14प्रकार के छन्दोमुक्त काव्यो का उदाहरण दिया है। छन्दो मुक्त कवियों में उल्लेखनीय है। के0 राजन्न शास्त्री ,कमलेशदत्त त्रिपाठी, प्रभाकरनारायण कवठेकर,वेदकुमार घई ,कृष्णलाल, रेवाप्रसाद द्विवेदी:'सनातन',अमरनाथ पाण्डेय, देवदत्त भट्ट , भाष्कराचार्य त्रिपाठी, जयश्री चट्टोपाध्याय, केशवचन्द्रदाश, राजेन्द्र मिश्र आदि । डा0 केशवचन्द्रदाश विशुद्ध रूप से छन्दोमुक्त कवि है। उनका यह छन्दोमुक्त काव्य उदाहरणार्थ प्रस्तुत है-

कलहोऽत्र मन्त्रायते
जपायते.....
प्रभुत्वप्रभविष्णुता,
शब्देषु स्वपिति वाग्देवी
आज्ञाचक्रे तमः समुदेति,
विषं वर्षन्ति कर्माणि
अवरोधविनिर्माणे
इच्छा आयुष्मती
आशाराशिमगत्यापिबति जीवनव्रततिः।

डा0 कमलेश दत्त त्रिपाठी का एक मनोहारी छन्दोमुक्त काव्य प्रस्तुत है।

अपि सुतनुके! कलातत्वे भविते ऐन्दवि!
टपि श्रृणोषि,परिचिनोषि समागतं तं
यं कमपि वाराणसेयं परावृतम्
भेदिता अब्दाः शिलीभूताः
अर्णवप्रसराः परस्तात् सममजन्मा अग्रतस्त्वम्
स्वरहिमानी परश्शत वर्षाणि यावज्जडीभूता
स्पन्दतेऽथ श्रूयते
त्वन्नूपुराणां मन्दमन्दो रवश्शकै-
राहतो मुरजो घनोऽयं तालधारी
झड्कृता तंन्त्री पूरयन्नालाप चारं
वंशकोऽपि
तरति वायौ स्वरस्ते परिदेवनार्दः।।

2.3.8 लोकगीतिकाव्य

बीसवीं सदी के संस्कृत गीत काव्य के लेखन में डा0 राजेन्द्र मिश्र ने लोकगीतों को प्रतिष्ठित किया है। मिश्र जी पूर्वांचल में जुडे गाये जाने वाले विभिन्न लोकगीतों का संस्कृतकरण किया है। अभिराजयशोभूषणमं में इन्होने लोकगीतो पर अलग से प्रकाश डाला है। मिश्र के अनुसार ' जो गीत स्वतंत्ररीति से दैव प्रदत्त स्वाभाविक कण्ठध्वनि के सहयोग सें सुखपुर्वक गाये जाते है तथा कुल जाति ग्राम जनपद अथवा अंचल विशेष की परम्परा के अनुकूल होते है उन्हे लोकगीत कहा जाता है। डा0 मिश्र अर्वाचीन संस्कृत कवियों को अपनी संस्कृत कविता में लोकगीतो का प्रयोग करने की प्रेरणा देते है।

डा0 मिश्र ने सूतगृहम्, (सोहर)बटुकम्, (बरूआ), नक्तकम् (नकटा) उत्थापनम् (उठान), प्रचरणम् (पचरा) चैत्रकम (चैता), चतुस्तालम् (चैताल), फाल्गुनिकम् (फगुआ) होलोत्सवम् (होलीगीत), स्कन्धहारीयम् (कहरवा), औष्ट्रहारिकम् (ऊँटहारी), लांगलिकम् (लांगुरिया), रसिकम् (रसिया), और कजरी आदि की प्रभूत मात्रा में रचनाएं किया है मिश्र जी ने नौ प्रकार के रागों पर आश्रित कजरिया लिखिए है। एक कजरी वाग्वधूटी से प्रस्तुत है-

राधा वादयति मुरलीमय ! माधव!
राधा वादयति मरलीमये ! माधव!
गतो गोकुलं विहाय
नन्दनन्दनो जयाय
माता मार्जयति मुरलीमये ! माधव!
राधा वादयति मुरलीमये ! माधव!

डा0मिश्र के द्वारा लिखित एक चतुस्ताल का उदाहरण उनकी मृद्वीका से प्रस्तुत है-

करकमले लसति पिच्कारी
विहरति मुरारिः!!
नहिरक्षति परिचयं न शीलम्,
पश्यति न वयो गिरिधारी
विहरति मुरारिः!!
नयनसमक्षं मिलति य एव रंज्जयति तमेव विहारी
विहरति मुरारिः!!

2.3.9 अन्य गीतिकाव्यः-

उन्नीसवी सती में कुछ छुट-पुट रचनाए भी आयी जो दार्शनिक विषयवस्तु से सम्बन्धित रही इस तरह की रचनाओ में उल्लेखनीय रचना है डा0 चन्द्रधर शर्मा कृत श्रद्धा भरणम्,मंगलदेव शास्त्री का अमृतमंथन, नागेश शर्माकृत नेत्रोनमेलनम्, महीधर वेंकट रामाशास्त्री मानसरासकेलि,आदि। ओपेरा आदि विधाए भी संस्कृत में लिखी गयी है।

अभ्यास प्रश्न

3.विघ्नेश्वरवृत्तमालास्तवः रचना है।

क. महादेव शास्त्री की ख. सूर्यनारायण शास्त्री की

ग. महालिंग शास्त्री की घ. जानकी वल्लभ शास्त्री की

4.लहरीदशकम् किसकी रचना है

क. आर0 गणेश ख. क्षमाराव

ग. आगेटि परीक्षित शर्मा घ. राधाबल्लभ त्रिपाठी

5.मधुकर गोविन्द्र माइणकर की रचना है

क. समृतितरंगम् ख. मातृविलापः

ग.रोटिकालहरी घ. कूहा.

6.कलापिका है

क. सानेटसंग्रह ख. लहरीसंग्रह

ग. दूतकाव्य घ. गजलसंग्रह

7.राजेन्द्र मिश्र ने गजल का प्रथम उद्गाता माना है

क. कमलेश मिश्र को ख. बच्चूलाल अवस्थी को

ख. भट्ट मथुरानाथ शास्त्री को घ पुष्पा दीक्षित को

6. हेमलेट का संस्कृत काव्यानुवाद है

क. वेदस्वतीसार्थवाहः ख. हेमन्तकुमारः

ग. प्रेमपयोधिः घ. इनमे से कोई नही

7. राष्ट्रीय नवजागरण की गीता है

क. भवानीभारती ख.ग्रामगीता

ग. राष्ट्ररत्नम् घ.राष्ट्रसभापतिगौरवम्

8. सत्याग्रहगीता किसकी रचना है .

क. पं0 क्षमादेवी ख. जयराम शास्त्री

ग. सत्यदेव वासिष्ठ घ. धर्मदेव विद्यामार्तण्ड

9. गजल केा गलज्जलिका नाम सर्वप्रथम नाम किस ग्रन्थ में दिया गया

क. मधुपर्णी ख. हविर्धानी

ग. वाग्वधूटी ग. मृद्वीका

10. गजल का शास्त्रीय पक्ष किसमे उद्घाटित है

क. अभिनवकाव्यालंकारसूत्रम ख. काव्यालंकारकारिका मे

ग अभिराजयशोभूषणम् घ. इनमें से किसी मे नही

11. अयि सुतनुके ! कलातत्वे भविते ऐन्दवि रचना है

क. गजल ख. लोगगीत

ग. छन्दोमुक्त घ. सेटायर

12. करकमले लसति पिच्चकारी
विहरति मुरारि..... है

क. चतुस्तालः ख. कजरी

ग.उत्थापनम् घ. बटुकम्

13.श्रद्धाभरणम्: रचना है

क.दार्शनिकगीति ख.शोकगीति
ग.ओपेरा घ. सेटायर
14. मानसरासकेलि किसकी रचना है
क.मंगलदेव शास्त्री की ख. चन्द्रधर शर्मा की
ग. महीधर वेंकटरामा शास्त्री की घ. पुष्पा दीक्षित
15. भो - भा अवन्त्या मगधाश्च बड.गाःअङ्गाः..... यह पक्ति ली गयी है
क. राष्ट्ररत्नम् से ख. सैनानीसुभाषः से
ग. मातृभूमिकथा से घ. भवानीभारती से
16. कांग्रेस के अध्यक्षो को केन्द्र मे रखकर प्रणीत है
क. श्रीभारतमातृमाला ख. राष्ट्रसभापतिगौरवम्
ग महापुरूषसंकीर्तिनम् घ. भारतशतकम्
17. सर्वाधिक राष्ट्रवादी रचनाए है
क.महात्मा गॉधीपरक ख.जवाहरपरक
ग.सुभाषपरक घ.विस्मिलपरक
18.भट्टमथुरा नाथ शास्त्री का उपनाम है
क.मंजुनाथ ख.ज्ञान
ग.अभिराज घ.निर्भय

2.4 बीसवीं शताब्दी के कवि एवं उनके काव्य

बीसवीं शताब्दी के प्रमुख कवियों एवं उनके काव्यों पर प्रकाश डालना अपेक्षित है इस खण्ड में कवियों का विवरण शीर्षकवार अग्रलिंखित है-

श्री अरविन्द घोष—

अरविन्द घोष का जन्म 15 अगस्त 1872 ई में बंगाल में हुआ था इनके पिता का नाम कृष्णा धन घोष था। 7 वर्ष की आयु में ही इन्हे विद्याध्ययन के लिए इग्लैण्ड भेज दिया गया जहाँ उन्होने 14 वर्ष तक अध्ययन किया। आई0सी0एस0की परिक्षा भी उत्तीर्ण की 1893 में बडौदा कालेज में अध्यापक बने। उन्होने अनेक पुस्तको की रचना की। इनकी प्रमुख रचनाए है, 'द डिवाईन लाईफ ''द सिन्थेसिस आफ योग' 'सावित्री (महाकाव्य) ये क्रान्तिकारी राष्ट्रवादी थे ।इनकी संस्कृत भाषा की एक मात्र रचना भवानीभारती है। इस सम्पूर्ण काव्य का हिन्दीअनुवाद मुरलीधर कमलाकान्त द्वारा किया गया जो मूल काव्य के साथ संस्कृत और राष्ट्र की एकता पुस्तक में प्रकाशित है।इस पुस्तक के सम्पादक राधा बल्ल्भ त्रिपाठी है। इस रचना में इन्होने राष्ट्र को स्वतंत्र कराने के लिए प्रत्येक भारतवासी का आवाहन किया।इस पुस्तक की रचना उन्होने तब किया था जब वे अली नगर के जेल में बन्दी थे। इसकी पाण्डुलिपि को अंग्रेजो ने जप्त कर लिया। बाद में इस रचना का पूनरोद्धार किया गया।1910 में इन्होनें अपने आप को राजनिति से अलग करके आध्यात्म का मार्ग अपना लिया।पाण्डिचेरी आश्रम मे इनका अन्तिम समय व्यतीत हुआ।5 दिसम्बर 1950 को इनका महाप्रयाण हुआ। भवानीभारती में भारत पुत्रो कों अिग्न के समान बन जाने के लिए प्रेरित करते हुए कवि कहता है-

उतिष्ठ भो जागृहि सर्जयाग्नीन् साक्षाद्धि तेजोऽसि परस्य शौरेः
वक्षःस्थितेनैव सनातनेन शत्रून् हुताशेन दहन्नटस्व ।।

लक्ष्मण शास्त्री तैलंग—

इनका जन्म 1880 में काशी में हुआ। संस्कृत के साथ-साथ आंग्लभाषा में भी इनकी गति थी। इनकी रचनाए है उपशल्यशंसनम्, 'मत्र्येषु भेदः कियान्',वेदस्वतीसार्थवाहः हेमन्तकुमारः'। उपशल्यशंसनम् में प्राकृतिक दृष्यो का निरूपण,ग्रामीण जीवन का यर्थाथ धनहीनो के प्रति सहानुभूति शोषण के विरूद्ध प्रतिक्रिया भी मिलती है। किसानो के बालको का यह चित्र वात्सल्य का प्रकटीकरण तो है ही साथ ही साथ यर्थाथ की अनुभूति भी -

इमें कृषकदारकाः परिगृहीतपाथेयकाः
करात्तलगुडाः मुहुर्मधुरगीतगाने रता।
अजाविपरिचारणे प्रतिदिनं समायोजिताः
कमप्यतिशयं मुदानुभवन्त्यचिन्तालवम्।।

मत्र्येषु भेदः कियान्' सामाजिक विषमता पर प्रहार है। वेदस्वती सार्थवाहः मर्चेन्ट आफ वेनिष का संस्कृत काव्यानुवाद है। हेमन्त कुमार' हैमलेट का संस्कृत काव्यानुवाद है।

गिरिधर शर्मा—

गिरिधर शर्मा नवरत्न का जन्म 1881 ई0 में राजस्थान के झालरापाटन में हुआ था इनकी शिक्षा जयपुर और काशी में हुई थी। इनकी मृत्यु अस्सी वर्ष की आयु में 1961 में हुई। ये संस्कृत के साथ-साथ बंगला,उर्दू,मराठी,गुजराती,अंग्रेंजी फारसी,आदि भाषाओं में निष्णात थे। इन्हें नवरत्न काव्यालंकार व्याख्यानभास्कर प्राच्यविद्यामहार्णवः आदि उपाधियों से नवाजा गया। इनकी संस्कृत की प्रमुख रचनाएँ है- उमरसुक्तिसुधा जापानविजयः इश्वरप्रार्थना नवरत्ननीतिः, प्रेमपयोधिः, गिरिधरसप्तशतीः, राजस्थानवन्दना, श्रमचर्तुविंशतिः,योगी आदि उमरसुक्तसुधा, उमरखैययाम की रूबाईयों का, प्रेमपयोधिः नन्ददास के भ्रमर गीतों का,योगी गोल्डस्मिथ के हरमिट का काव्यानुवाद है। नवरत्न जी कहते है कि कर्मठ व्यक्ति को सभी लोग पूछते है -

कर्मप्रियो रे नवरत्न भूया-
श्यर्मप्रियत्वं भ्रमतोऽपि मा भूः
कर्मप्रियं पृच्छति लोकलोक-
श्यर्मप्रियं क्वापि न कोऽपि किञ्चित।।

श्रीधर पाठक—

श्रीधर पाठक का जन्म 1860 ई0 में हुआ यह मूलतः हिन्दी के प्रख्यात कवि रहे । इन्होने संस्कृत में प्रशस्तिपरक व शोक गीतियाँ आदि लिखा। इनकी रचनाए है। गोखलेप्रशस्तिः,आराध्यशोकान्जलिः,भरतशुषमाः,मातृपादवन्दम्,मनोविनोदःआदि। गोखलेप्रशस्ति ,प्रशस्ति परक रचना है। शोकान्जली अपने पिता जी के निधन पर लिखी गयी शोक गीत है।

भट्टमथुरा नाथ शास्त्री—

भट्ट मथुरा नाथ शास्त्री विद्वत कुल में 1889 में जयपुर में उत्पन्न हुए इनके पिता का नाम द्वारका नाथ भट्ट तथा माता का नाम जानकी था। ये बचपन से अत्यन्त प्रतिभा सम्पन्न थे। अध्ययनोपरान्त ये जयपुर के महाराजा संस्कृत महाविद्यालय में अध्यापक हुए। 1964 ई0 में इनका स्वर्गवास हुआ। संस्कृत के साथ-साथ शास्त्री जी ने हिन्दी तथा व्रजभाषा मे भी काव्य रचना किया इन्होने संस्कृत में रेडियो रूपक कहानी यात्रावृत्त एकांकी,आदि नवीन विधाओ में रचना प्रस्तुत किया। इन्होने संस्कृत में घनाक्षरी कवित्त सवैया आदि भी लिखा। गजल एवं रूबाईयेा का भी सूत्रपात किया। संस्कृत गीति सहित्य को इनकी देन गजल विधा को पूरी प्रतिष्ठा के साथ स्थापित करना माना जाता है। इनके गीतियों का संग्रह साहित्यवैभवम्,जयपुरवैभवम्,तथा गोविन्द वैभवम् में मिलता है। डा0 राजेन्द्र मिश्र भट्टमथुरानाथ शास्त्री के विषय में लिखते है ''अंग्रेजी शासन काल में जयपुर में रहने वाले फारसी एवं संस्कृत दोनो ही भाषाओ में निष्णार्त,श्रेष्ठ कवि पण्डित गजल विधा में पारंगत लोक विश्रुत महामहोपाध्याय भट्ट मथुरा नाथ शास्त्री ने इस गजल गीत को फारसी गजलकारो जैसी ही प्रतिष्ठा के साथ संस्कृत भाषा में प्रणीत कीया इस प्रकार देववाणी संस्कृत के कवि मूर्धन्य भट्टमथुरानाथ शास्त्री जी को ही मै संस्कृत गजलों का प्रथम उद्गाता मानता हूँ।3 शास्त्री ने अपना तखल्लुस(उपनाम)मंजुनाथ रखा था। भट्ट जी ने अपने विशाल मुक्तक संकलन साहित्यवैभव में उर्दूच्छन्दान्सि शीर्षक में उन्नीस बडी बहरो के नाम लक्षण आदि देकर प्रत्येक के साथ स्वनिर्मित संस्कृत गजले उसी बहर की भी प्रकाशित की है फारसी छन्दःशास्त्र की ये ही उन्नीस प्रमुख बहरे है इन पर सैकडो गजल भट्ट जी ने लिखी जिनमें से अधिकाश साहित्यवैभवम् उर्दूच्छन्दान्सि के उर्दूभाषाचत्वरः शीर्षक या गीतिवीथी शीर्षक अध्याय में संकलित है। भक्तिपरक गजले गीता प्रेस गोरखपुर से 1858 में प्रकाशित गोविन्दबैभवम् काव्य में संकलित है। भट्ट जी ने प्रणय के मिलन विरहात्मक मानव जीवन के लक्ष्यो समाज की वर्तमान स्थितियो तथा अपेक्षा के सन्दर्भ में नीति विषयक तथा राष्ट्रविषयक गजले लिखा अपने आप को सम्बोधित करते हुए वे कहते है-

न हि साधुजनैः सह संरभसे, न फलं विमलं त्वमिहाऽऽवहसे।
चपलाय सखे यतसे, तव दुर्मदता न गता न गता।।
अभिनन्दसि शास्त्रगतं नमनं,न हि विन्दसि संन्ततमात्महितम्।
बत निन्दसि लोकमनं विमनं तव मत्सरता न गता न गता।।
अयि चित्त चिरेण विचिन्तयताऽपि च चञ्चलता न गता न गता।
अपि नाम निरन्तरयत्नशतैस्तव निष्ठुरता न गता न गता।।

क्षमा देवी—

पण्डिता क्षमा राव का जन्म चार जुलाई 1890 के दिन पूणे में हुआ इनके पिता का नाम शंकर पाण्डुरंग था इनका बालपन पिता की स्नेह छाया के विना चाचा पण्डित सीता राम के पास बीता क्षमा को पाठशाला नही भेजा गया। भाईयों के पाठ को सुन-सुनकर के ही इन्होने याद कर लिया था सौराष्ट्र से मैट्रिक की परिक्षा उत्तीर्ण करके चारफिल्ड पारितोषिक प्राप्त की पी0वी0काणे की ये शिष्या रही 20 वर्ष की आयु में इनका विवाह डा0 राव से हुआ अपने पति के साथ इन्होने यूरोप का भ्रमण भी किया था उन्नीस सौ तीरपन में इनके पति की मृत्यु हो गयी। 22 अपैल 1954 के दिन श्रीमद्भगवद गीता का पाठ करने के अनन्तर इन्होने शरीर छोड दिया। क्षमा देवी ने स्वदेशी और सहयोग के आन्दोलन मे भाग लेने के लिए गान्धी जी से भेट किया था गांधी जी के सत्याग्रह के प्रति आस्था के भाव से इन्होने बहुत सी

रचनाएँ किया इनके रचनाओ में सत्याग्रहगीता उत्तरजयसत्याग्रहगीता, उत्तरसत्याग्रहगीता, शंकरजीवनआख्यानम् ग्रामज्योति, उल्लेखनीय रचनाएँ है।

दत्त दीनेश चन्द्र—

इनका 1891 ई0 में बंगाल में जन्म हुआ। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा कलकत्ता में हुई। ये आधुनिक अंग्रेजी साहित्य एवं प्राचीन अंग्रेजी साहित्य में एम0ए0 थे। बचपन में संस्कृत में इनका विशेष प्रेम था। ये जयपुर महाराजा विद्यालय में अंग्रेजी के प्राध्यापक नियुक्त हुए। इन्होनें अंग्रेजी के साथ-साथ संस्कृत मे भी रचनाए किया। इनकी संस्कृत रचनाए है- भारतगाथा, सुभाष गौरवम्,रविन्द्रप्रतिभा,छन्दःसन्दोहः, तथा बंगविभावरी। भारत गाथा राष्ट्रीय भाव से ओत-प्रोत है जिस धरती ने सिंह जैसे वीरपुरूषो को जन्म दिया था वह सियारो की माता कैसे हो गयी ? इस बात से खिन्न कवि ने फिर से राष्ट्र गौरव की प्रतिष्ठा की कामना की है-

श्यमच्छाया दलितमहिषा मुण्डमालां दधाना
मत्स्याजीवैः कथमनुकृतैम्लानपुष्पैरिहाच्या।
सूत्वा सिंहान् किमिह जनी फेरवाणामसि त्वं
धीरः संख्ये स्थिरनिजमहा मड्क्षु हन्यादरातिम्

महादेव शास्त्री—

इनका जन्म विहार के कैमूर भभुआ जिले के ऐलाय ग्राम में हुआ था इनके पिता का नाम पंण्डित अम्बिका प्रसाद पाण्डेय था। इन्होने काशीहिन्दूविश्वविद्यालय से उच्च शिक्षा प्राप्त की थी। अनन्तर काशी सूमेरूपीठ शंकराचार्य के पद को भी सुशोभित किये। इनकी रचनाए है भारतशतकम्,पूर्णास्तवः,गंगाष्टकम्, आदि। भारत शतकम् में मातृभूमि का गौरव राष्ट्रप्रेम देश की दुर्दशा तथा पुनरूत्थान के लिए कवि के भाव स्पन्दित है।देश प्रेम का भाव संचारित करने के लिए कवि कहता है-

बड्गै सड्गीतिकीर्तिः कलितकलकलश्चोत्कलैरान्ध्रबन्धु
मंद्रैरून्निदुमुदो जवजनितजयोद्दुर्जरः सिन्धुविन्दुः।
पञ्चापैरञ्चित श्रीर्मधुमधुरधुरा मध्ययुक्तैर्विहारैः
रार्यवर्तामिधानो जयति जनपदो मानिनां जन्मभूमिः।।

मेधाव्रत—

इनका जन्म 7 जनवरी 1893 ई को महाराष्ट्र के नासिक जिले के यवलवाडा ग्राम में हुआ था। इनके पिता का नाम जगजीवन दास था। मेधाव्रत का वास्तविक नाम मोतीचन्द्र था गुरूओ ने इनकी मेधा को देखकर इनका नाम मेधाव्रत रख दिया इनकी प्रारम्भिक शिक्षा सिकन्दराबाद के गुरूकुल में उच्च शिक्षा वृन्दावनगुरूकुल में हुई। मेधाव्रत ने समय-समय पर वैदिक महाविद्यालय कोल्हापुर,सूरत के राष्ट्रीय महाविद्यालय तथा इटोला के गुरूकुल मे आचार्य एवं अध्यक्ष पद का निर्वाह किया। 22 नवम्बर 1964 ई0 को इनका देहावसान हुआ। इनके संस्कृत की रचनाएँ निम्नलिखित है- दयानन्ददिग्विजयम्,व्रह्मर्षिविरजानन्दचरितम्, नारायण स्वामिचरितम्, यतीन्द्र नित्यानन्दशतकम्,

विश्वकर्माद्भुतशतकम्, ज्ञानेन्द्रचरितम्, दयानन्दलहरी, दिव्यानन्दलहरी, सुखानन्द लहरी, वैदिकराष्ट्रकाव्य, श्रीकृष्णस्तुतिः, मातृविलापः, मातः प्रसीद, मातःका ते दशा, वाङमन्दाकिनी, श्रीरामचरितामृतम्, सत्यार्थप्रकाशमहिमा, गुरूकुलचितौडगढम् , बह्मचर्यशतकम्, गुरूकुलशतकम्, विमानयात्रा आदि। इन्होंने उपन्यास नाटक तथा चम्पू आदि भी लिखा है ये आर्य समाज की विचारधारा को मानने वाले थे-

महालिंड्ग शास्त्री—

महालिड्ग शास्त्री का जन्म 31 जुलाई 1897 को मद्रास के तन्जौर जिले के तिरूवालंगाड्गांव में हुआ। इनके पिता का नाम यज्ञ स्वामी था। इन्होंने 1932में संस्कृत में एम0ए किया। वकालत को छोडकर मदुरई के महाविद्यालय में संस्कृत अध्यापक बने। 17 अप्रैल 1967 को स्वर्गवासी बने । इनका विशेष क्षेत्र गीतियाँ रही है। इनकी संस्कृत रचनाएँ है भ्रमरसन्देशः भारतीविषादः, वनलताः द्रविडार्यासप्तशती व्याजोक्तिरत्नावली, किड्किणीमाला, देशिकेन्द्रस्तुतिः स्तुतिपुष्पोपहारः, विघ्नेश्वर वृत्तमालास्तवः । भगवान गणेश से अपने विघ्नों के विनाष की प्रार्थना करते हुए इन्होंने कहा है -

यदालानं चेतश्शुचिसुमनसां भक्ति रचला
सृणिर्यस्य स्वैरग्रहणविधिरोड्कारमननम्।
गजेन्द्रः कोऽप्येष श्रुतिविपिनसं´चाररसिक-
श्चिरं वप्रक्रीडा श्रयतु मम विध्नाद्रिकटके।

अर्थात् चित्त से पवित्र सुमनस्जनो की अचल भक्ति जिसका वंधन है ओंकार का मनन स्वतंत्र रूप से जिसके ग्रहण का उपाय रूप अंकुश है। जो वेदो के जंगलो मे संचार का रसिक है ऐसा कोई विलक्षण गजेन्द्र मेरे विध्नरूपी पर्वत के मध्यभाग मे चिरकाल तक वप्रकीडा करें ।

सूर्यनारायण शास्त्री—

इनका जन्म 10 फरवरी 1897 को आन्ध्रप्रदेश मे हुआ। ये संस्कृत के साथ-साथ तेलगु व अंग्रेजी मे भी पारंगत थे। अध्यन के उपरान्त इन्होंने सिकंन्दराबाद के हाइस्कूल तथा राजाबहादुर के बैंकटराम रेड्डी वूमन्स महाविद्यालय मे क्रमशः कार्य किया। इनकी संस्कृत रचनाएं है भतृदानम् संयुक्तास्वयंवरम् विवेकानन्दम कचदेवयानीयम् नन्दचरितम् रामदासचरितम् तथा कीरसन्देशम पूर्णपात्रंम् आदि गीतिकाव्य है।

अमीर चन्द्र शास्त्री—

इनका जन्म 1918 ई में पंजाब अब पाकिस्तान के जिला झंग के अहमदपुर स्याल नामक गावं मे हुआ ये हरिद्वार के ऋषिकुल ब्रह्मचर्य आश्रम में अध्ययन किये। लाल बहादुर शास्त्री केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ में अध्यापन किये। इनकी संस्कृत रचनाएँ है। गीतिकादिम्बरी,संगीत वृन्दावन, श्रीगांधीगरिमा, आदि हा- हा महात्मा हतः समस्यापूर्ति शैली में लिखि गयी कविता है।गीति कादम्बरी 12 गीतियों का संग्रह है।

स्वामीनाथ पाण्डेयः—

इनका जन्म बलिया जिले के कुरेम गांव में सन 1937 ई0 में हुआ था यें फैजाबाद विद्यालय में संस्कृत प्राध्यापक पद पर कार्यरत रहे इनके संस्कृत गीतो में उत्प्रास वेदना तथा सामाजिक स्थितियों का सजग चित्रण है। देहिवरम् में शीर्षक से रचित गीत में आज की पाखण्ड और छद्म पर व्यंग्य करते हुए कहते है।

देहिवरंम में सुभगं धृत्वा बक इव धवलसुवेशम्
विविधसुगन्धसुगन्धितकेशम् जप्त्वा मङ्ग्लधाममहेशम्
तुण्ठाम्यहमिममखिलं देशम् देहिबलं में बलदे विपुलम्।

इन्होंने तुलसी दास के हनुमान बाहुक का संस्कृत काव्यानुवाद भी किया।

जानकी वल्लभशास्त्री—

इनका जन्म 1915 में विहार के गया जिले में मैगरा नाम के गाँव में हुआ । अपने पिता पण्डित रामानुग्रह शर्मा से अध्ययन करते हुए इन्हाने 18 वर्ष की आयु मे ही साहित्याचार्य होने का गौरव प्राप्त किया इनकी पहली संस्कृत रचना संकलन काकलि 1935 में प्रकाशित हुई। इसके अतिरिक्त इन्होने बन्दीजीवनम्,भारतीवसंतगीतिः,भ्रमरगाम् ,आदि की भी रचना की है इन्होने हिन्दी में भी रचना किया। ,जानकी बल्लभ शास्त्री संस्कृत कविता में रोमांटित प्रवृत्ति के प्रथम आचार्य के रूप में माने जा सकते है। भारतीवसंन्त गीतिः की ये पंक्तिया किस हृदय को नही आकृष्ट कर सकती है-

निनादय नवीनामये वाणि वीणाम्
मृदुं गाय गीतिं ललित-नीति-लीलाम्

बटुकनाथ शास्त्री ख्रीस्ते—

इनका जन्म 30 नवम्बर 1918 को हुआ। इनके पिता का नाम नारायण शास्त्री ख्रीस्ते था। इन्होने अध्ययन के उपरान्त संस्कृत विश्व विद्यालय वाराणसी में अध्यापन किय। ,इनकी रचनाए सूर्योदय कविभारती,कुसुमान्जलि,दूर्वा आदि पत्र-पत्रिकाओ में प्रकाशित होती रही। इनका काव्य संग्रह कल्लोलिनी विद्वत जगत में प्रसिद्ध है। इनकी कविताओं में प्रकृत का निरीक्षण राष्ट्रीय भावनाओं का उद्गार है। इन्हाने समसामयिक विषयो पर भी अपनी लेखनी चलाई है बटुकनाथ ने याहियाखान नियाजी आदि की बंग्लादेश युद्ध में हुई पराजय का रोचक चित्र खीचते हुए कहते है-

यस्यालम्बादुदयपदवीं पाक-नीतिः प्रपन्ना
पणि-स्कन्धे जनयति बलं यस्य मिथ्या निनादे।
संज्ञातो न क्षणसहचरो निःक्षण यहियेत्थं
ध्यायं ध्यायं धृतिविगलितः सम्भ्रमी बम्भभीति।।
परां भुतिमिच्छन् मनुष्यौधयाजी नियाजी प्रपेदे पराभूतिमेव
निशम्येति हा हा वदन् यहियाखां मुहुः सम्भ्रमी बम्भ्रीति स्वगेहे।।

रतिनाथझा—

इनका जन्म बस्ती जिले के तलपुरवा गांव में 1922 में हुआ । इन्होने काशी हिन्दूविश्व विद्यालय में अध्यापन का कार्य किया। इन्हे पण्डितराज की उपाधि से सम्मानित किया गया । इनकी रचनाए है अरवीन्दशतकम्,मालवीयप्रशस्ति, गान्धीशतकम्,तथा महावीराभ्युदय (महाकाव्यम्)। इनकी

समस्यापूर्ति काशी के विद्वत समाज मे काफी प्रसिद्व रही है । समस्या पूर्ति के माध्यम से इन्होने देश में व्याप्त अव्यवस्था महंगाई आदि पर करारा प्रहार किया है-

जनाक्रोशे व्याप्ते विलयमुपयातेऽथ नियमें
प्रवृद्धे सड्धर्षे स्वपति जनहर्षे प्रतिदिशम्।
महार्घत्वे घोरे जनमनसि कामं कलुषिते
नयज्ञानां घोषा विफलमिह वाणीविलसितम्।

मधुकर गोविन्द माईणकर—

इनका जन्म 15 मार्च 1916 को हुआ । इन्होने एम0ए0पी0एच0डी और डी0लिट् का उपाधि प्राप्त किया। इन्होने संगली के विलिगंटन महाविद्यालय पूना के फग्र्युसन महाविद्यालय,दिल्ली व बम्बई विश्वविद्यालयो में अध्यापन किया। 17 सितम्बर उन्नीस सौ इक्यासी को इनका स्वर्गवास हुआ। इनकी कीर्ति के आधार स्तम्भ दो रचनाए है ''स्मृतितरंगम्(1978), ''गायिका शिल्पकारम् (1980) यह दोनो रचनाए करूण रस प्रधान शोक गीतियाँ है स्मृतितरंगम् में करूण रस अंगी है इस पर मेघदूत का गहरा प्रभाव है। इसमे पत्नी के निधन के अनन्तर किसी व्यक्ति का शोक कवि ने अनुभूति की अन्तरंगता और मार्मिकता के साथ अभिव्यक्त किया।

परमेश्वर अय्यर—

इनका जन्म केरल में कालीकट में 16 जुलाई1916 को हुआ। ये जन्मना ब्राह्मण थे। महात्मा गॉधी के आन्दोलन से प्रभावित हो इन्होने आजादी के संग्राम मे भाग लिया तथा जेल यात्राए भी की। इन्होने संस्कृत मलयालम हिन्दी तथा तमिल भाषाओ में साहित्य रचना की है। इनकी संस्कृत की रचनाए है देवी नवरत्नमाला,भारतगौरवम्, आभाणकमंजरी। इनकी रचनाओ का संकलन साहित्यकौतुकम् है ।

एस0वी0वेलणकर—

इनका जन्म महाराष्ट्र के रत्नागिर जिले के सारंद ग्राम में 1915 में हुआ। ये बम्बई के विल्सन कालेज से एम0ए0किये । डाक तार विभाग में सेवा किये ।¬ इनकी प्रमुख रचनाए है।जीवनसागरः, जवाहरचिन्तनम्, जयमंगला, बालगीतम्, विरहलहरी, प्रीतिपथेस्वैरविहारः, स्वछन्दम्, जवाहरजीवनम्,नैमित्तिकम् निसर्गगीतम्, संस्कृतनाट्यगीतम , संसारयात्रा आदि। इन्होने गीर्वाणसुधा ,सस्कृत मासिक पत्रिका का सम्पादन किया।

बच्चूलाल अवस्थी 'ज्ञान'—

पण्डित बच्चूलाल अवस्थी का जन्म 6 सितम्बर 1918 ई0 को उत्तर प्रदेश के लखीमपुर खीरी में हुआ। इन्होने साहित्याचार्य व्याकरणाचार्य एम0ए0आदि की परिक्षाए प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण किया। इन्होने लखीमपुर खीरी के महाविद्यालय तथा सागरविश्वविद्यालय में अध्यांपन किया। इन्हे पुत्र शोक भी प्राप्त हुआ । इनका देहावसान उज्जैन में 2005 में हुआ और इनके शरीर का दाहकर्म हरिद्वार में सम्पन्न किया गया। हिन्दी में इन्होने अनेको ग्रन्थो की सर्जना किया । इनके यश का ख्यापक

भारतीयदर्शनशास्त्रवृहदकोश चालीस खण्डो का वृहद कोश है। इन्होंने सैकड़ों मुक्तक लघुकाव्य और गजले लिखा है। बच्चूलाल अवस्थी के विषय में डा0 राजेन्द्र मिश्र ने प्रतानिनी की भूमिका में लिखा है -

करेण खलु केनचित्सरसकाव्यशास्त्राऽमृतं
प्रगूढ़शतचिन्तनं,ननु परेण षड्दर्शनम।
दधच्च पदशासनं किमुत भाषिकालोचनं
चतुर्भुजमहीसुरं कमपि वच्चुलालं भजे।।

बच्चूलाल अवस्थी 'ज्ञान' के सम्मान में सारस्वत संगम्(घाघरा से शिप्रा 2000 ई में प्रकाशित हुआ) गीति विधा में प्रशस्तगजलकार के रूप में बच्चूलाल अवस्थी को जाना जाता है। इनकी एक गजल जो सत्रह मात्राओं की है प्रस्तुत है—

अर्जितानां समर्जनं भूयः
नार्जवं किन्तू कर्जनं भूयः
अद्य केयं दशाऽस्ति मेघानां
वर्षण नैवं गर्जनं भूयः।।
भस्मसाद् भावयन्ति का हानिः
भर्जितस्यैव भर्जनं भूयः
कुक्कुरस्य स्वभावतो बुक्का
किं वराकस्य वर्जनं भूयः ?
व्याकुलोऽर्थःक्व याति,का चिन्ता
शब्दजालस्य सर्जनं भूयः।।

हरिदत्त पालिवाल 'निभर्य'- इनका जन्म फरूखाबाद के कायमगंज के व्याकरणाचार्य प0मथुरा प्रसाद शर्मा के घर 1927 ई0 में हुआ। बचपन से ही यह सर्जन कारिणी प्रतिभा से समन्वित थे। भारत की आजादी के लिए ये बचपन में ही सुभाष चन्द बोस की सेना में भर्ती हो गये। फॅरूखाबाद बैंक षड्यतत्र अलीगढ बम विस्फोट में इनकी भूमिका रही। कई बार इन्हे जेल यात्रा करनी पड़ी फरूखाबाद के केन्द्रीय कारागार में मैथिलीशरणगुप्त आचार्य नरेन्द्रदेव सम्पूर्णानन्द, स्वामी सत्यदेव आदि के सम्पर्क में आये। इन्होने संस्कृत के साथ-साथ हिन्दी में भी लेखन किया। इनकी संस्कृत की प्रमुख रचनाए है- परिवर्तनम्, क्रान्तिः , जनघोषः, शंखनादः राष्ट्रध्वनि, वन्दी, अग्रगामिन प्रति, हृदयाग्निः,कृषकाः श्रमिकाः सुभाषबोसचरितम्, भगतसिंहचरितम्, रामप्रसादविस्मिलस्मृतिः रावणायनम्, अर्चना प्रियतमा। ये क्रान्ति और ओज के कवि के रूप में जाने जाते है। क्रान्ति के सैनिको का आवाहन करते हुए कहते है-

अटलक्रान्तेर्गायत गीतं प्रलयताण्डवं मण्डयत।
शान्तं गगनं विशोभयत द्विषतां हृदयं कम्पयत।।
स्वतंन्त्रतासम्मदमत्ता वलिवेदीवत्रमाध्वन्या रे।
कथं न विभियाद्योऽरिजनः शिरसा धृतमृति शीर्षण्या रे।।
अद्य निराशयामाशायाः पुरनरिपि निसृतं सञ्चारम्।
वन्दिनो भङ्क्त कारागारम्।।

राम करण शर्मा—

इनका जन्म 20 मार्च 1927 को हुआ। इनके पिता का नाम कामेश्वर प्रसाद शर्मा था। इन्होंने एम0ए0पी0एच0डी0 की उपाधियां प्राप्त की। बाल्यकाल से ही इन्होने संस्कृत काव्य की संर्जना किया। इनकी रचनाए है- तुलसीस्तवः, मदालसा , शिवशुकीयं, संध्या पाथेशतकम्, तथा दीपिका, वीणा, आदि। इन्होनें 'सीमा'उपन्यास भी लिखा। शर्मा जी ने अपने रचनाओ में युग के वैषम्य का चीत्र खींचा है इनके स्तोत्रों में भक्ति और समर्पण है। क्षणभंगुर सम्बन्धो की व्यंजना है आधुनिक जीवन की विडम्बना है अन्तरंग रागात्मक अनुभूतियों का रागात्मक अभिव्यजन है

श्रीनिवास रथ—

इनका जन्म 1 नवम्बर 1933 ई में पुरी में हुआ। इन्होने पुरी मुरेना,ग्वालियर सहारनपुर तथा वाराणसी में अध्ययन किया।पद्मभूषण पण्डित बलदेव उपाध्याय इनके गुरू रहे। इन्होने सागर विश्वविद्यालय तथा विक्रम विश्व विद्यालय में अध्यापन किया। इनकी रचनाए है बलदेवचरितम् एक महाकाव्य है। जिसमें इन्होने अपनेगुरू की महिमा को उद्घाटित किया है। इनकी दूसरी रचना है पुरूषार्थसंहिता यह गीतियों का संकलन है। सारस्वतसंगम में इनकी सिप्रास्टकम् कविता सादर संकलित है। पुरूषार्थसंहिता में आधुनिक भारत की त्रास कारक राजनीति और आतंकमय वातावरण की पौराणिक प्रतीको के द्वारा सटीक टिप्पणी है।

जगन्नाथ पाठक—

इनका जन्म 4 अक्टूबर 1934 को विहार के सहसाराम में हुआ। काशी में इन्होने अध्ययन किया। छात्र जीवन से ही ये उमर खैय्याम की रूबाईयो से प्रेरित होकर काव्य रचना में प्रवृत्त हुए। ये केन्द्रीय संस्कृत विद्यपीठ जम्मू एवं गंगानाथ झा केन्द्रिय संस्कृत विद्यापीठ प्रयाग मे प्राचार्य पद से संम्प्रत सेवानिवृत्त हो गये है। पाठक जी को उर्दू और फारसी काव्य की गहरी समझ है। इन्होने संस्कृत में गजल और रूबाईयों की रचना में उसका प्रयोग किया है। इनके प्रकाशित काव्य संग्रह है- कपिशाईनी,मृद्वीका तथा पिपासा। गजलकार के रूप मे बच्चूलाल अवस्थी के बाद इन्हे विशेष सम्मान दिया जाता है। कपिशायनी में कवि ने मधुशाला के प्रतीक के द्वारा वैयक्तिक प्रेम की विश्वजनीन अनुभूति तथा चैतन्य और उसके सयुज्य को अभिव्यक्ति दी है। एक उदाहरण प्रस्तुत है-

चषका इह जीवने मया परिपीता अपि चूर्णिता अपि।
मदमेष विभर्मिकेवलं क्षणपीतस्य मधुस्मितस्य ते।।

सुन्दर राज—

इनका जन्म 13 सितम्बर 1936 ई0 को तन्जौर के देवनाथ विलास ग्राम में हुआ ये भारतीय प्रशासनीक सेवा में रहे। इनका मुख्य विषय रसायन शास्त्र रहा ।फिर भी इन्होने स्तोत्र काव्यों की रचना किया।वे रचनाए है।- जगन्नाथसुप्रभातम्, जगन्नाथस्तोत्रम्, श्रीजगन्नाथशरणागति स्तोत्रम्, श्रीजगन्नाथमंगलाशासनम्, बदरीशतरङ्गिणी । सुरभिकश्मिरम् में कश्मीर के सौन्दर्य का चित्रण है।

विशनलाल गौड 'व्योम शेखर'—

इनका जन्म दिसम्बर 1937 ई0 में उत्तर प्रदेश के मुरादाबाद जिले के लक्षम पुर गांव में हुआ। इन्होने आगरा विश्व विद्यालय से संस्कृत से एम. ए. किया तथा मेरठ विश्वविद्यालय से पी0एच0डी0 प्राप्त की। इन्होनेसहिबाद के लाजपतराय स्नातक महाविद्यालय में अध्यापन किया। इनके मुक्तको और गीतो का संग्रह अग्निजा नाम से प्रकाशित है इनके गीता पर समाजवादी विचारधारा का प्रभाव है। वर्तमान में व्याप्त संवेदन हीनता पर व्यंग्य करते हुए कवि कहता है।

नीरवे तमसातटे क्रौञ्चस्तु भूयो हन्यते।
क्रौन्चजाया विलपनं ब्रूहि केन श्रूयते।

राम कैलाश पाण्डेय—

ये सरयूपारीण ब्राह्मण परिवार में 1939 ई0 में पैदा हुए। इन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से एम0ए0व शोध सम्पन्न किया। वही विश्वविद्यालय में दो वर्ष तक अध्यापन करते रहे।1972 में गुरूकुल संस्कृत महाविद्यालय पैजपुर में प्राचार्य नियुक्त हुए।इन्हे महाकवि व आशुकवि की उपाधि दी गयी । इनकी रचनाएं-हनुवदष्टकम्,भारतशतकम् तथा महाकवि शतकम्। भारतशतकम् में पाण्डेय जी की तेरह गीति रचनाएँ है इसमें उन्होंने राष्ट्रीय भावनाओं को स्पन्दित किया है।

उमाकान्त शुक्ल—

इनका जन्म 18 जनवरी1939 को हुआ इनके पिता का नाम पं0 व्रह्मानन्द शुक्ल है। इन्होने सनातन धर्म महाविद्यालय मुजफ्फर नगर में अध्यापन किया इनकी प्रकाशित रचनाए है- मंगल्या,परीष्टिदर्शन,चाड्गेरिका तथा कूहा,पूहा। में इन्दिरा गांधी के दुखद निधन के अनन्तर समूचे राष्ट्र की वेदना को मार्मिक अभिव्यक्ति दी गयी है।

दीपक घोष—

इनका जन्म 24 जनवरी सन्1939 में हुआ। इन्होने कलकत्ता विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग में अध्यापन किया है। इन्होने संस्कृत में कई शोक गीतिकाव्य लिखा है। वे है-मेघविलापम्, सुरवागविलापम्, अमरविलापम्, उज्जयिनीविलापमं्, अलकाविलापम्। ये विलापकाव्य विलापपंचिका 1989 में प्रकाशित हुऐ।

पुष्पादीक्षित—

इनका जन्म 12 अगस्त 1943 मो जबलपुर में हुआ। ये पंण्डित सुन्दर लाल शुक्ल की आत्मजा है।इनका विवाह बाल्यवस्था में हो गया था। इन्होने विलासपुर के शासकीय महाविद्यालय में संस्कृत प्राध्यापिका पद पर सेवा दिया। इनके गीतियों का संग्रह 1984 में अग्निशिखा नाम से प्रकाशित हुआ। पुष्मादीक्षित की गृहंवनायते गीति प्रस्तुत है।

वीतरागता यदा तदा गहं वनायते।
त्वं प्रतीयसे यदा तदा जगत् तृणायते।।
ये कषायवाससोऽपि,मानसे कषायिता:

ते विशन्ति यत्र तत् तपोवनं रणायते।।....

डा0 राजेन्द्र मिश्र 'अभिराज'—

राजेन्द्र मिश्र का जन्म 2 जनवरी 1943 को जनपद जौनपुर में सई नदी के किनारे विद्यमान द्रोणीपुर गाँव में हुआ।इनकी प्रारम्भिक शिक्षा गाँव के विद्यालय एवं समीप में विद्यमान कालेज में हुई। इसके बाद इन्होने उच्च शिक्षा इलाहाबाद विश्वविद्यालय से प्राप्त की यहाँ पर ये अपने पितृव्य डा0आद्याप्रसाद मिश्र के साथ शोध कार्य सम्पन्न किये । इन्होने इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अध्यापन प्रारम्भ किया इनके प्रथम शोध छात्र थे आनन्द कुमार श्रीवास्तव । बाद में ये हिमाचल प्रदेश के विश्व विद्यालय में आचार्य एवं अध्यक्ष रहे । डा0मिश्र बालद्वीप (इण्डोनेशिया)के उदयन विश्व विद्यालय में विजिटींग प्रोफेसर के रूप में मार्च 1987 से अपैल 1989 तक कार्य किये। ये सम्पूर्णानन्द विश्वविद्यालय के सफलतम कुलपति भी रहे। इनकी साहित्य साधना 1960 में गीतरामचरितम् से प्रारम्भ हुई । विगत 53 वर्षो में ये लगातार साहित्य सर्जन करते रहे।इन्होने महाकाव्य नाट्य लोकगीत गज़ल व छन्दोमुक्त आदि लिखा है। डा0मिश्र ने आधुनिकतावाद एवं उत्तर आधुनिकतावाद का विरोध करते हुए शाश्वततावाद की अभिराजयशोभूषणम् में स्थापना किया है। इनकी रचनाएं अग्रलिखित है जानकीजीवनम् (1988), वामनावतरणम् (1994) ये दोनो महाकाव्य है। अन्योक्तिशतकम् (1975), नवाष्टकमालिका (1976), पराम्बाशतकम् (1981), शताब्दीकाव्यम् (1987), अभिराजसप्तशती (1987), धर्मानन्दचरितम् (1992), पंचकुल्या (1993), करशूलनाथमाहात्म्यम् (1996), कस्मैदेवाय, हविषविधेम (1996) रण्यानी (1999) संस्कृतशतकम् (1999), अभिराजसहस्रकम् (2000), मृगांकदूतम् (2003), चर्चरी (2004) येखण्डकाव्य है। इनके नवगीत संग्रह है- वागवधूटी (1978), मृद्वीका (1985), श्रृतिमभरा (1989), मधुपर्णी (2000), मत्तवारणी (2001) शालभंजिका (2006), कौमारम (2006), कनीनिका (2008), हविर्धानी (2009), शिखरिणी (2013) इनके रूपक है।

नाट्यपंचगव्यम्, अकिंचनकाञ्चनम्, नाट्यपंचामृतम्, चतुष्पथीयम्, रूपरूद्रीयम्, नाट्यसप्तपदम्, नाट्यनवरत्नम्, नाट्यनवग्रहम्, ये एकांकी संग्रह है।प्रमदवरा, विद्योत्तमा, रूपविंशतिका, नाटिकाएं है। लीलाभोजराजम्, प्रशान्तराघवम् नाटक है। इक्षुगन्धा, राड्गडा, चित्रपर्णी, पुर्ननवा, अभिनवपञ्चतंत्रम, कान्तारकथा, इनके कथा संकलन है। डा0 मिश्र को साहित्य अकादमी सम्मान(1988),के0के0विड़ला फाउन्डेशन का वाचस्पति सम्मान(1993) कालिदास सम्मान(1988 व 1996) कल्पबल्ली सम्मान 1998 तथा महामहीम राष्ट्रपति सम्मान(1999)में प्राप्त हुए संस्कृत में राजेन्द्र मिश्र को गीतिविधा में गज़लो का अद्भुद उद्गाता एवं लोकगीतो के सम्राट के रूप में सदैव स्मरण रखा जायेगा । इन्होने संस्कृत को सशक्त बनाने के लिए पूर्वांचल के लोकगीतो का संस्कृत करण किया। इन्होने चहित्रकम्, सूतगृहम्, स्कन्धहारीयम्, बटुकम्, नक्तकम, उत्थापनम्, प्रचरणम्, चतुस्तालम्, फाल्गुनिकम् औस्ट्रहारिकम्, लांगलिकम्, रसिकम् आदि प्रभूत मात्रा में लिखा इनका एक चैत्रकम् प्रस्तुत है-

विधुमभिसरति कुमुदिनी रे मातः किमु करवाणि ?
प्रोषितपतिका विरहिणी रे मातः किमु करवाणि ?
निर्दय दयित!वससि कलिकाताम्
प्रेषयसे न समागमवार्ताम्

हसति ननान्दा विभविनी रे मातः ।
किमुकरिवाणि
हरिदत्त शर्मा 'कविपुँस्कोकिल''

इनका जन्म आश्विन कृष्ण नवमी विक्रमसंवत 2005 तद्नुसार 27 सितम्बर 1948 को उत्तरप्रदेश के हाथरस जनपद में पण्डित लहरीशंकर शर्मा के पुत्र के रूप में हुआ। इन्होने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से एम0ए0 व डी0फिल किया।उसी विश्व विद्यालय में ये संस्कृत के प्रोफेसर एवं अध्यक्ष पद से सेवानिवृत्त हो चुके है। यें शिल्पाकार्न यूनिर्वसीटी बैड्काक,थाईलैण्ड में अभ्यागत आचार्य पद पर भी कार्य किये।इन्होंने जर्मनी फ्रांस, निदरलैण्ड्स, आस्ट्रिया, इटली, मलेशिया, इण्डोनेशिया, मारीशश आदि देशों की, शैक्षणिक व सांस्कृतिक यात्राएँ किये। इनकी प्रकाशित रचनाए है गीतकंदलिका 1983, उत्कलिका 1989, बालगीताली 1992, लसल्लतिका, त्रिपथगा (रूपक संकलन)। शर्मा जी का उत्तर प्रदेश संस्कृत अकादमी द्वारा चार तथा दिल्ली संस्कृत अकादमी द्वारा एक काव्य पुरस्कृत हुआ । 'प्रसरति हा पशुता ' राजनीतिक विसंगति पर प्रहार करते हुए कवि कहता है -

न ही कश्चिच्छृणोति में वचनम्
कीदृशमिदं कालसङ्ःक्रमणम्।
प्रभवति हा जडता
प्रसरति हा पशुता।

राधा बल्लभ त्रिपाठी—

राधा बल्लभ का जन्म 15 फरवरी 1949 ई0 को मध्य प्रदेश के राजगढ़ जिले में हुआ अध्ययनोपरान्त इन्होंने सागर विश्वविद्यालय में संस्कृत विभाग में अध्यापन कार्य प्रारम्भ किये वही पर विभागाध्यक्ष रहे । केन्द्रीय संस्कृतविद्यापीठ के कुलपति रहे। इन्होने बहुत से नाटक उपन्यास एकांकी कहानी आदि लिखा है। इनके काव्य है- संधानम् 1989 लहरी दशकम् 1991 गीति भीवरन आदि। संधानम् मे 55 कविताए संकलित है। लहरी दशकम् मे 10 लहरी काव्य संकलित है, इनका एक विमानकाव्य धरित्रीलहरी भी उल्लेखनीय है। यूरोप यात्रा के समय विमान से हिमाच्छादित धरती को देख कर कवि कल्पना करता है-

स्यूतं स्यूतं पुनरपि च यच्छीर्यते धार्यमाणं
गात्रे क्लृप्तं कथमपि तथाऽच्छादने नालमेव।
धृत्वा देहे हिममयमितं श्वेतकार्पासवस्त्रम्।
पृथ्वी शेते विकलकरणा निर्धना गेहिनीव।।

विन्ध्येश्वरी प्रसाद मिश्र—

इनका जन्म मध्य प्रदेश के बहरा गांव में 18 मार्च 1956 को हुआ। ये विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन में आचार्य पद पर कार्यरत रहे इनकी कविताओं का संकलन सारस्वत समुष्म्मेशः नाम से प्रकाशित हुआ। इन्होने सवैया,घनाक्षरी ,दोहा,सोरठा आदि व्रज भाषा के छन्दो में भी रचना किया है। इन्होने समस्या पूर्ति भी लिखा है। इनकी पाँच समस्यापूर्ति संकलित है। तो सारस्वत संगम में संकलित है।सवैया छन्द में शरद ऋतु का वर्णन प्रस्तुत है।

यमुनावटमञ्जुलकुञ्जघने घनसाररसावलिते विपिने

विपिने नवनीरजगन्धयुते युतपंङ्कजकोषमिलिन्दजने।
जनमानसमानिनि मोदमुदे मुदिताधरपानपुटे कमने।
कमने ननु रासरसे सुविभाति शरत् सखि नैशसरत्पवने।

केशवचन्द्र दास—

इनका जन्म 6 मार्च 1955 ई0 को उडीसा में कटक जिला के हाटशाह नामक ग्राम में हुआ ये आधुनिक व पारम्परिक दोनो पद्धतियो से संस्कृत का अध्ययन किये। ये श्री जगन्नाथ संस्कृत विश्व विद्यालय में नव्यन्याय विभाग में अध्यक्ष है- इनका मुख्य कार्यक्षेत्र उपन्यास कहानी साहित्य रहा है। इन्होने संस्कृत में छन्दोमुक्त रचनाए ही लिखा है। इनके छन्दोमुक्त रचनाओ के संग्रह है-अल्का हृदयेश्वरी, महातरीर्थम्, भन्नपुलिनम्, ईशा इनकी छन्दोमुक्त रचनाओं में,आधुनिक जीवन की विसंगति परम्परा और आधुनिकता का द्वंद्व, महानगर के जीवन का तनाव,पवित्र ग्राम जीवन की स्मृतियाँ प्रतिबिम्बित है। इनकी एक गीति प्रस्तुत है-

निमग्नजनोऽहं
निमज्जने व्रणितोऽपि करमहं प्रसारयितुं न शक्नोमि
निमज्जन्तं प्रति
ईष्र्याया:जातके मम हि
अवसितं स्नेहस्य जीवितम्
ममाण्डतो नि:सरति शिशु:
नाऽहं वक्तुं प्रभवामि पवनं कदाचित्
वाहयितुं सकृद् दूरदेशम्
अहंङ्कारपरिसरे हि में

महाराजदीन पाण्डेय 'ऐहिक'—

इनका का जन्म 30 नवम्बर 1956 ई0 में गोण्डा के निश्चलपूर्वा नामक ग्राम मे हुआ। सम्प्रति ये नरेन्द्रदेव महाविद्यालय बभनान जिला गोण्डा, उत्तरप्रदेश में अध्यापनरत है, इन्होंने गज़ल, लोकगीत, मुक्तछन्द, के अलावा कुण्डलिया एवं दोहा में भी रचना किया है। मौनवेधः इनका काव्य संग्रह है। इनकी एक गजल लेखनी प्रस्तुत है।

औरसेनाऽसृजा पोषिता लेखनी
लोकरागोष्मणा शोधिता लेखनी
प्राकृता नाम ये पूर्वमवहेलिता:
तैरभाग्यैरियं योजिता लेखनी
पुनरितो नैतु कश्चिद्रथस्सन्दलन्
चिन्तयन्निति सृतौ रोपिता लेखनी
नो कुवेरस्य कस्यापि वशवर्तिनी
रामगिर्याश्रमे प्रोषिता लेखनी
ईश्वरादेशपरिपन्थिनी मानुषी
साहसेनैहिकी घोषिता लेखनी

2.5 अन्यकवि एवं काव्य

नागार्जुन हिन्दी के प्रसिद्ध कवि थे संस्कृत में भी इन्होंने रचानाए किया । इनकी रचना है लेनिनशतकम् भारतभवनम्, हैमीपार्वती। रामनाथ पाठक प्रणयी-विहार से सम्बन्धित है इनके राष्ट्रवादी रचना है राष्ट्रवाणी,मंजुनाथ भट्ट दक्षिण के मैगलोर इनकी रचना है विरक्ति विथीका।शंकरदेव अवतरे के दो संस्कृत संकलन है नारीगीतम् व जीवन मुक्तकम्। शिवदत्त शर्मा चतुर्वेदी जयपुर से सम्बन्धित है। इनकी रचनाए है-गोस्वामीतुलसीदासशतकम्, काव्यप्रयोजनशतकम्, काव्यकारण शतकम्, विद्योपार्जनशतकम्, स्फूर्तिसप्तशती । अमरनाथ पाण्डेय काशी विद्यापीठ वाराणसी में संस्कृत में आचार्य व अध्यक्ष थे। इनका सौन्दर्यवल्ली स्तोत्र मिलता है। भास्कराचार्य त्रिपाठी का मृतकूटम्, खण्डकाव्य मिलता है। वेड्कट राघवन् युग प्रवर्तक कवि है इनके खण्ड काव्य है-कामाक्षीमातृकास्तवः, श्रीमीनाक्षीसुप्रभातम्, गोपहम्पणः, देववंदी वरदराजः, महात्मा, उच्छ्वसितानि , प्रमैवयोगः , प्रतीक्षा, वाग्वादिनी सहस्रतन्त्री, पूलकमेति कश्चित्कविः आदि। रेवाप्रसाद द्विवेदी काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में आचार्य थे। इनके खण्डकाव्य है शत्पत्रम्, प्रमथः, रेवाभद्रपीठम्।पूल्लेरामचन्द्रड्डु उस्मानिया विश्वविद्यालय हैदराबाद में संस्कृत के आचार्य एवे अध्यक्ष थे इनकी सुमतिशतकम् रचना मिलती है।के0एस0भास्कर भट्ट श्री देवी विलासं लिखा । महीधर वेंकटरामाधर शास्त्री की दो गीतियाँ मानसरासकेलि एवं दहरिचन्द्रिका। राल्लपल्लि अनन्तकृष्ण शर्मा की अनन्त भारती गीतिरचना है। यम0राम कृष्ण का काव्योद्यानम् मिलता है।कर्नाटक के विघ्नेशर शर्मा ने इन्दिरावैभवम्लिखा। डा0एस0बी0रघुनाथाचार्य ने श्री रामविजयम् लिखा। नैजुन्द गणपति जो श्रीनगर से सम्बन्धित है। ने भक्तमयूरःचरितम् लिखा। हजारी लाल विद्यालंकार ने शिवप्रतापविरूदावली,संस्कृत महाकवि दिव्योपाख्यानम्,इन्दिराप्रशस्तिशतकम्, महर्षिदयानन्दशतकम् तथा शिवशतकम् की रचना किया । रमेश चन्द्र ने श्यामगीता, श्याममहिम्नःस्त्रोत , तथा संत स्वरागारः लिखा । श्रीमती नलिनी शुक्ला ने निम्नमुक्तक संग्रह लिखा है-स्वरूपलहरी भवान्जलिः प्रकीर्णम वाणीशतकम्, निर्झरिनी आदि । इसके अलावा सत्यदेव वर्मा,जानकी राम तीर्थ, आचार्य राधाकृष्ण रामश्वर दत्त,अनन्त राम मिश्र,हरिशचन्द्र रेणापुरकर, शिवशरण शर्मा, परमानन्द शास्त्री, ओम प्रकाश ठाकुर, इन्द्रदेव द्विवेदी इच्छाराम द्विवेदी, रामकिशोर मिश्र, देवदत्त भट्ट आदि, अपनी रचनाओं से सुरभारती की सेवा किये है।

अभ्यास प्रश्न. बी

1.किस ग्रन्थ की पाण्डुलिपि अंग्रेजो ने जप्त कर लिया था

क.भवानीभारती ख.प्रेमपयोधिः

ग.जापानविजयः घ.राजस्थानवंदना

2.उमरखैय्याम की रूबाईयों का अनुवाद किया है-

क.अरविन्द घोष नें ख.लक्ष्मण शास्त्री तैलंग नें

ग.भट्टमथुरानाथ शास्त्री घ.क्षमा देवी?

3 भारतगाथा रचना है-

क.दत्त दीनेश चन्द्र की ख.महादेव शास्त्री की

ग.मधाव्रत की घ.सुर्यनारायण शास्ती की

4. सुमेलित नही है-

क.मेधाव्रत-श्रीरामचरितामृतम् ख.महादेवशास्त्री भारतशतकम्

ग.मेधाव्रत-गुरूकुलचित्तौडगढम् घ.महालिंड्ग शास्त्री-प्रतापप्रशस्तिः

5गीतिकादम्बरी किसकी रचना है-

क.सुर्यनारायण शास्त्री ख.स्वामीनाथ पाण्डेय

ग.अमीर चन्द शास्त्री घ.जानकी बल्लभ शास्त्री

8.जानकी बल्लभ शास्त्री की काकलिः प्रकाशित हुई-

क.1920 ई0 ख.1930 ई0

ग.1940 ई0 घ.1935

9.गोविन्दवैभवम् संड.कलन है

क. भक्तिपरक गजलो का ख. प्रणयपरक गजलो का

ग. लोकगीतो का घ. लहरीकाव्यो का

10.सम्भ्रमी बम्भ्रमीति समस्या पूर्ति शैली की रचना हे

क. रतिनाथ झा की ख. मधुकर गोविन्दमाईणकर की

ग.उपरमेश्वर अय्यर की घ. बटुकनाथ शास्त्री खिस्ते की

11.जवाहरचिन्तनम् रचना है

क. बच्चूलाल अवस्थी की ख. एस0 वी0 वेलणकर की

ग. राधाबल्लभ त्रिपाठी की घ. रामकरण शर्मा की

10. हरिदत्तपालिवाल निर्भय की रचना नहीं है

क. क्रान्तिः ख. शंखनादः

ग. रावणायनम् घ. शिवशुकीयम्

11. जगन्नाथ पाठक का संड.लन नही है

क. कपिशायनी ख.मृद्वीका

ग. पुरूषार्थसंहिता घ. पिपासा

12. सुमेलित नही है

क.सुरभिकश्मीरंम - सुन्दरराज ख. अग्निजा-व्योमशेखर

ग.सौन्दर्यवल्ली-अमरनाथ पाण्डेय घ भारत शतकम् उमाकान्त शुक्ल

13. सुमेलित नही है-

क.उमाकन्त शुक्ल-उहा ख.दीपक घोष-अमरविलापं

ग.राजेन्द्र मिश्र-वाग्बघूटी घ.हर्विधानी -पुष्मा दिक्षीत

14. सुमेलित नही है-

क.पुष्पा दीक्षित-अग्निशिखा ख.लसल्लतिका-हरिदत्तशर्मा

ग. गीतकंदलिका-केसवचंद्रदाश घ. विन्धेश्वरी प्रसाद-सारस्वत समुन्मेषः

15. केशवचन्द्र दाश की रचना नही है-’

क.अल्का ख.हृदयेश्वरी

ग.भिन्नपुलिनं घ.बालगीताली

16.सुमेलित नही है-

क.मौन-वेधः महाराज दीन पाण्डेय ख. दूतप्रतिवचनं-हरिदत्त शर्मा

ग.रेवाभद्रपीठं-रेवा प्रसाद द्विवेदी घ. वरद्राजः-वेकट राघवन्

17.सुमेलित नही है-

क. अनन्तभारती-के0राजन्न शास्त्री ख.इन्दिरा वैभव-विघ्नेश्वर शर्मा

ग.श्री रामविजयं-एस0बी0रघुनाथाचार्य घ. काव्य तरंगिणी-सी0जी0पुरूषोत्तम

18. सुमेलित नही है-

क.नृपति रामभट्ट -गीतगिरीशम् ख.जनार्दन प्रसाद पाण्डेय-निस्यन्दिनी

ग.पुल्लेलरामचन्द्र-गीतान्जलिः घ.रूद्रदेव त्रिपाठी-मत्तवारणीः

2 .6 सारांश

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद यह निष्कर्ष निकलता है कि बीसवी सती में प्राचीन विधाश्रित , नूतनविधाश्रित, नूतनछन्दाश्रित, अनुदित, राष्ट्रवादी गलज्जलिका , छन्दोमुक्त, लोकगीत, दार्शनिक आदि गीतियाँ लिखी गयी है। भवानीभारती प्रमुख राष्ट्रवादी रचना है। महात्मा गांधी से सम्बन्धित नायक आश्रित गीतियों में सर्वाधिक गीतिया लिखी गयी। वेंकट राघवन , मथुरानाथ शास्त्री, बच्चूलाल अवस्थी, जगन्नाथ पाठक, डा0राजेन्द्र मिश्र, डा0 हरिदत्त शर्मा, विन्ध्येश्वरी प्रसाद मिश्र, रेवा प्रसाद द्विवेदी, पुष्पादीक्षित, नलिनी शुक्ला, महाराजदीन पाण्डेय, आदि ने बहुत सी गीतियाँ लिखा है। डा0राजेन्द्र मिश्र, गजलों के अद्भुत उद्गाता के साथ-साथ लोकगीत के सम्राट भी है।

2.7 अभ्यास प्रश्न उत्तरमाला

उत्तरमाला- ।

1. ग	2. घ.	3. क	4. क	5. ग	6. ख
7. क	8. क	9. ग	10. ग	11. ग	12. क
13. क	14. ग	15. घ	16. ख	17. क 18. क	

उत्तरमाला- ठ

1. क	2. ख.	3. क	4. घ	5. ग	6. घ
7. क	8. घ	9. ख	10. घ	11. ग	12. घ
13. घ	14. ग	15. घ	16. ख	17. क	18. घ

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. आधुनिक सस्कृत साहित्य का इतिहास पृष्ठ 283-84 ।
2. संस्कृत का अर्वाचीन समीक्षात्मक का काव्य शास्त्र पृष्ठ 428, 430, 432।
3. वही पृष्ठ 414 521 ।

2.9 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के लिए आप निम्न ग्रन्थों को भी देख सकते हैं।

1. संस्कृत वाङ्मय का वृहद् इतिहास सप्तम- खण्ड, आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास सम्पादक डा0 जगन्नाथ पाठक प्रकाशक उ0प्र0 संस्कृत संस्थान।

2. आधुनिक सस्कृत काव्य परम्परा लेखक श्री केशव मुसलगांवकर (युवराज पब्लिकेशन्स मथुरा रोड आगरा)।
3. आधुनिक संस्कृत काव्य की परिक्रमा लेखक डा0 मंजुलता शर्मा। (युवराज पब्लिकेशन्स मथुरा रोड आगरा)।
4. आधुनिक संस्कृत साहित्य सन्दर्भ सूची लेखे डा0 राधा बल्लभ त्रिपाठी (युवराज पब्लिकेशन्स मथुरा रोड आगरा)।

2.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. बीसवी सती के गीतिकाव्यो के भेदो पर प्रकाश डालिए ?
2. गजल के गलज्जजिका व लोकगीतिकाव्य पर प्रकाश डालिए ?
3. डा0राजेन्द्र मिश्र व हरिदत्त शर्मा के व्यक्तित्व व कृतित्व पर प्रकाश डालिए

इकाई. 3 आधुनिक संस्कृत उपन्यासों का परिचय
(19 वीं से 20 वीं शताब्दी के संस्कृत उपन्यास)

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 उपन्यास का अर्थ व स्वरूप
  3.3.1 उपन्यास का समानार्थक अभिधान
  3.3.2 संस्कृत साहित्य में उपन्यास शब्द का उल्लेख
  3.3.3 उपन्यास का अर्थ
  3.3.4 उपन्यास का स्वरूप
  3.3.5 उपन्यास के तत्व
3.4 उपन्यास के भेद
  3.4.1 ऐतिहासिक उपन्यास
  3.4.2 पौराणिक उपन्यास
  3.4.3 सामाजिक उपन्यास
  3.4.4 प्रणयकथामूलक उपन्यास
  3.4.5 आत्मकथामूलक उपन्यास
  3.4.6 आध्यात्मिक उपन्यास
  3.4.7 क्रान्तिकारी उपन्यास
  3.4.8 अनूदित उपन्यास
3.5 उन्नीसवीं व बीसवीं शती के कवि एवं उनकी कृतियाँ
  3.5.1 शिवराजविजय की समीक्षा
  3.5.2 द्वा सुपर्णा की समीक्षा
3.6 सारांश
3.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
3.9 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री
3.10 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

आधुनिक काल म संस्कृत साहित्य में बहुत सी विधाओं जैसे महाकाव्य, खण्डकाव्य, चम्पू काव्य, गद्य में रचनायें अनवरत हो रही हैं। पत्रिकाओं व प्रकाशन केन्द्रों से प्रकाशित भी हो रही हैं। 19 वीं सती के अन्तिम चरण में गद्य लेखन में बहुत विविधता देखने को मिलती है। उस समय इसमें कथा, आख्यायिका, कथानिका, लघुकथा, परिकथा, दीर्घकथा, निबन्ध एवं उपन्यास लिखे जाने लगे थे। उपन्यास सम्प्रति बहुत ही प्रचलित विधा है। संस्कृत में उपन्यास का लेखन कैसे शुरू हुआ ? उपन्यास शब्द संस्कृत वाङमय में कहाँ-कहाँ मिलता है ? उपन्यास का अर्थ क्या है ? उपन्यास के स्वरूप पर विद्वानों के विचार क्या हैं ? उपन्यास के तत्व कितने हैं ? उपन्यास के भेद कौन-कौन से हैं ? उन्नीसवीं से बीसवीं सदी के कवियों के कौन-कौन से उपन्यास हैं। इन प्रश्नों का उत्तर इस इकाई में देने का प्रयास किया गया है। इसके अतिरिक्त शिवराजविजय व द्वा सुपर्णा की समीक्षा भी दी गयी है। बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर माला के साथ-साथ निबन्धात्मक प्रश्न व उपयोगी पाठ्य सामग्री का परिचय भी इस इकाई में दिया गया है।

3.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन करलेके उपरान्त आप—

- ❖ उपन्यास के अर्थस्वरूप व तत्व से परिचित हो सकेंगे।
- ❖ उपन्यास के भेदों का ज्ञान प्राप्त करेंगे।
- ❖ उपन्यास कवि एवं उनके औपन्यासिक कृतियों को पढ़कर आपइस विषयपर शोध करने की प्रवृत्ति का अंकुरण करने में समर्थ हो सकेंगे ।
- ❖ शिवराजविजय व द्वासुपर्णा की समीक्षा से आप किसी भी उपन्यास की समीक्षा करने में समर्थ हो सकेंगे।
- ❖ संस्कृत जीवित नित्य सर्जनशीला है ऐसा जानकर आप गौरवबोध से युक्त होंगे।

3.3 उपन्यास का अर्थ व स्वरूप

संस्कृत वाङमय की पवित्र धारा वेद के काल से प्रवाहित है। काव्यं छन्दः कहकर यजुर्वेद काव्य के माहात्म्य को उद्घाटित करता है। काव्य के दृश्य एवं श्रव्य भेदोंमें दृश्य के अन्तर्गत सम्पूर्ण नाट्य साहित्य आता है। श्रव्य के अन्तर्गत पद्य, गद्य एवं चम्पू की गणना होती है। गद्य काव्य के कथा आख्यायिका ये दो भेद प्राचीन काल से ही स्वीकृत हैं। कादम्बरी कथा का उदाहरण है और हर्षचरित आख्यायिका का। कादम्बरी महाकवि बाणभट्ट की कालजयी रचना है जो पूर्व के गद्य लेखन की शैली को अपने में समाहित तो की ही है साथ ही उत्तरवर्ती लेखन को प्रभावित करने की क्षमता से भरी हुई है। आज गद्य के कथा सम्पादकीय, टिप्पणी बहुत सारे भेद दिखाई पड़ते हैं। गद्यकाव्यमीमांसा में बहुत सारे गद्य भेदों का दिग्दर्शन मिलता है। गद्य के विभिन्न विधाओं में सर्वथा नूतन विधा उपन्यास की अवतारणा पं0 अम्बिकादत्तव्यास के द्वारा शिवराजविजयम् के रूप में की गयी है। इस उपन्यास को एक बंगला उपन्यास

का कुछ अंशों में अनुवाद भी प्रमाणित किया जाता है। अम्बिकादत्तव्यास के द्वारा प्रारम्भ किया गया उपन्यास लेखन संस्कृत में बहुत लोकप्रिय हुआ और आज बहुत से उपन्यास लिखे जा चुके हैं।

संस्कृत साहित्य में उपन्यास विधा का आविर्भाव बंगला उपन्यास के अनुवाद द्वारा हुआ। उपन्यास विधा साहित्य की सर्वाधिक ललित विधा है। सम्प्रति विश्व की विभिन्न भाषाओं में सर्वाधिक लोकप्रिय और सर्वाधिक प्रचारित विधा है। यूरोप के सभी देशों में दक्षिणोत्तर अमेरिका के भू-भागों तथा एशिया महाद्वीप के भारत से इतर अन्य देशों चीन, जापान आदि देशों में भी इस विधा में रचनायें हो रही हैं। भारत में इस विधा के विकसित होने में राजनीतिक कारण सहयोगी रहा। 1857 की क्रान्ति के बाद भारत सीधे आंग्ल दास्ता में आ गया था। उस समय भारत की राजधानी थी कलकत्ता। वहाँ के कवि सीधे इग्लैण्ड में बहु प्रचारित नावेल साहित्यिक विधा से परिचित होकर बंग भाषा में उपन्यास लेखन शुरू किये। इसके समानान्तर ही गुजरातियों ने भी उपन्यास लेखन गुजराती भाषा में शुरू किया। फिर यह मराठी एवं तमिल में भी लोकप्रिय विधा बनी।

3.3.1उपन्यास के समानार्थक अभिधान

विभिन्न भाषाओं में क्रमशः लोकप्रिय होतीहुई इस विधा को अलग-अलग नामों से अभिहित किया गया। अंग्रेजी में तो इस विधा को 'नावेल' कहा जाता है। हिन्दी व बंगाली में 'उपन्यास' नाम दिया गया। फ्रांसीसी में इसे 'रोमॉ' नाम से जानते हैं। गुजराती एवं तमिल भाषा में नावेल के समकक्ष 'नवल कथा' अभिधान से सम्बोधित किया गया। मराठी भाषा में इसे 'कादम्बरी' नाम से अभिहित किया जाने लगा। कादम्बरी नाम से अभिहित किये जाने का कारण यह दिखलाना था कि उपन्यास विधा भारत की अपनी विधा है आयातित नहीं, और इसका मूल कादम्बरी में ढूंढा गया। उपन्यास को आख्यायिका एवं कथा का समन्वित रूप मानने के पक्ष में डा0 ओमप्रकाश शास्त्री, डा0 अभिराज राजेन्द्र मिश्र एवं कलानाथ शास्त्री जैसे बहुत से विद्वान हैं। स्वयं अम्बिकादत्तव्यास ने भी इसी तथ्य को गद्यकाव्यमीमांसा में स्थापित किया है-

उपन्यास पदेनाऽपि तदेव परिकथ्यते।
यथा कादम्बरी यद्वा शिवराजविजयो मम्।

कादम्बरी को प्राचीनतम् उपन्यास सबसे पहले अम्बिकादत्तव्यास ने ही माना।

3.3.2 संस्कृत साहित्य में उपन्यास शब्द का उल्लेख

भारतीय संस्कृति साहित्य में यह शब्द उपन्यास विधा के परिचायक अर्थ में 19वीं शदी के अन्त में प्रयुक्त हुआ। उपन्यास शब्द का प्रयोग तमाम संस्कृत ग्रन्थों में देखने को मिलता है। जैसे- अथर्ववेदीय माण्डूक्यशिक्षा (84), रामायण के युद्धकाण्ड (40-26) और अयोध्याकाण्ड (9-44), महाभारत राजधर्मानुशासन पर्व (17-18, 28), अग्निपुराण उत्तर भाग (360-61), ब्रह्मसूत्र (4-4-5 व 7), मनुस्मृति (9-31), प्रतीज्ञायौगन्धरायण- प्रथम अंक, पंचरात्रम् - प्रथम अंक, मालविकाग्निमित्रम्- चतुर्थ अंक, अभिज्ञानशाकुन्तलम्- तृतीय अंक व पंचम अंक, अमरुशतक- छान्दोग्य उपनिषद (8-7-1), तैत्तिरीय उपनिषद- (9 व 11 अनुवाक), ब्रह्मसूत्र के श्रीभाष्य (4-4-5), व्याकरण महाभाष्य में द्वितीयाह्निक, नाट्यशास्त्र (19-81), काव्यालंकार (1-22, 2-71) दशरूपक (1-31), साहित्य दर्पण (6-

87, 88, 93); व 10-35 में मिलता है। कुछ प्रसंग उल्लेख्य हैं- शकुन्तला- (आत्मगतम्) पावकः खलु वचनोपन्यासः। इसमें उपन्यास का अर्थ प्रारम्भ है।

3.3.3 उपन्यास का अर्थ

संस्कृत साहित्य में विभिन्न स्थलों पर उपन्यास शब्द मिलता है। इस शब्द का अर्थ कोशों में जो दिया गया है तद्नुसार इस शब्द के अर्थ समीप में रखना, समीप में जाना, उपनिधि, संकेत, उल्लेख, वाक्योपक्रम, प्रस्तावना, भूमिका आदि अर्थ हैं। उपन्यास शब्द उप+नि उभय उपसर्ग पूर्वक अस् धातु से घञ् प्रत्यय पूर्वक व्युत्पन्न होता है। समीप में रखना, समीप स्थित, समीप गमन आदि इस शब्द के अर्थ निकलते हैं। निघण्टु में उपन्यास शब्द के अर्थ वाक्योपक्रम छल विचार आदि बताया गया है। डा0 ओमप्रकाश शास्त्री उपन्यास विधा अर्थ के प्रतिपादक उपन्यास की व्युत्पत्ति तो अन्य धातु से ही स्वीकार करने की चर्चा करते हैं- अत्रेदमपि विचार्यमस्ति यदाधुनिकगद्यविधाविशेषे प्रयुक्त उपन्यासशब्दः किमन्यधातुनिष्पन्नः ? बाढं सूक्ष्मेक्षिकया विचारे क्रियामाणे सति एवं प्रतिभानत्वात्। अतएव नूतनगद्यविधायां प्रयुक्तस्य उपन्यासशब्दस्य व्युत्पत्तिः, आस् धातोरेव प्रतीयते। स च धातुः मुख्यतया, विश्रामे उपवेशने चार्थे वर्तते। तत्स्माद् करणाधिकरणयोर्घञि कृते सति पूर्वोद्दिष्टस्य गद्यविशेषस्य परिचायको भवितुं शक्नोति। करणे घञि जाते सति उपन्यासशब्दस्यार्थः 'सैव गद्यविधा यस्याः समीपे मनुष्योऽधिकां विश्रान्तिं लभते। अधिकविश्रान्तरेभिप्रायः परमानन्द इति। एवमर्थस्वीकारे उपन्यासशब्दः काव्यविशेषस्य ज्ञानविशेषस्य वा बोधकः स्यात्। इत्थं तन्निरुक्तिः 'उपन्यासतेश्रेयः प्रेयोलोकवृत्तादिकंवास्मिन्नित्युपन्यासः अथवा णिजन्ताद् घञि कृते सति उपन्यास्यते प्राप्यते सेव्यते श्रेयः प्रेयो लोकवृत्तादिकमनेनित्युपन्यास इति। 1

3.3.4 उपन्यास का स्वरूप

संस्कृत में उपन्यास के प्रारम्भ अभिधान व्युत्पत्तिपरक अर्थ से आप परिचित हो चले हैं। अब उपन्यास के सवरूप से सम्बन्धित पाश्चात्य एवं भारतीय संस्कृत एवं हिन्दी के विद्वानों के मतों से परिचय प्राप्त करना अभीष्ट होगा। पाश्चात्य विचारकों में वर्नाडशा, रिचर्ड स्टैंग, एर्नेस्ट, राल्फ फाक्स, ई0एम0 फास्टर के अभिमत को प्रस्तुत किया जा रहा है। वर्नाडशा का मत है- 'उपन्यास जीवन की अभिव्यक्ति मात्र नहीं हैं अपितु इसका मूल्यांकन, आलोचन और टिप्पणी हैं।रिचर्ड स्टैंग महोदय के अनुसार उपन्यास रचना कलात्मिका होती है। कला जीवन की प्रतिकृति, अभिव्यक्ति आलोचना व्याख्या टिप्पणी अथवा व्यंग्य नहीं है, अपितु जीवन सृष्टि ही कला है। जैसे चित्रकार चित्र का निर्माण करता है वैसे ही उपन्यासकार उपन्यास की रचना करता है।3 एर्नेस्ट महोदय का स्वाभिमत है- उपन्यास एक गद्य कथा है जो यथार्थ जीवन को चित्रित करती है। राल्फ फाक्स ने उपन्यास के सन्दर्भ में लिखा है- उपन्यास कला का प्रथम गद्य रूप है जो मानवता को समग्रता से समझने तथा अभिव्यक्त करने की चेष्टा करता है।

संस्कृत विद्वानों ने भी उपन्यास के स्वरूप पर प्रकाश डाला है। कला नाथ शास्त्री का अभिमत है- जीवनस्य किमप्येकं चित्रं घटनां दृश्यफलकं चरित्रविच्छित्तिर्वा मनोरमतया संक्षिप्य प्रस्तुत कथानकस्वरूपं लधुकथायाः प्रमुखं लक्षणम्। समग्रस्य कथाफलकस्य सर्वाङगपूर्णत्वेन गुम्फनं विशालं

विस्तृतं कथानकनिबन्धनमुपन्यासस्य भेदकम्।प्रो0 अभिराज, राजेन्द्र मिश्र उपन्यास का लक्षण निम्नवत् दिया है-अथोपन्यासलक्षणम्-

कथाऽऽख्यायिकयोः कश्चिन्मिश्रभेदोऽपि साम्प्रतम्।
उपन्यास इति ख्यातो भाषान्तरप्रतिष्ठितः।।
कालखण्डविशेषस्य समग्रं जनजीवनम्।
प्रतिबिम्ब इवादर्शे न्यस्यतेऽत्र सविस्तरम्।।
क्वचित्सामाजिकी क्रान्तिः सर्वोदयसमर्थिनी।
रूढिपाखण्डविध्वंसो नवाचारः क्वचित्पुनः।।
महाकाव्यवदेवायमुपन्यसोऽपि वस्तुतः।
साङ्गोपाङ्गं समग्रञ्च नेतृजीवनचित्रणम्।।
धर्मराजनयार्थानां नैव वृत्तं हि तादृशम्।
यदुपन्यासनिर्माणे नोपयोज्यं भवेत्पुनः।।
एवंविधाः सन्त्युपन्यासाः इतिवृत्तानुरोधतः:।
कथाप्रस्तुतिभेदाच्च कविप्रतिभयाञ्चिताः।। अभिराजयशोभूषणम्

डॉ0 राधाबल्लभ त्रिपाठी ने गद्यबद्ध कथा को ही उपन्यास माना है। अभिनवकाव्यालंकारसूत्र में त्रिपाठी ने कहा है- गद्यबद्धउपन्यासो महाकाव्यमयी कथा। महाकाव्यमयी शब्द से डा0 त्रिपाठी जी का आशय नायक के जीवन की आद्यन्त वर्णना से है।

डॉ0 रहस बिहारी द्विवेदी ने नव्यकाव्यतत्वमीमांसा में उपन्यास का लक्षण दिया है-

गद्यकाव्यबृहद्बन्ध उपन्यासोऽभिधीयते।
अस्मिन् युगोचितं वस्तु पात्रं कविसमीहितम्।।
देशकालोचितं चित्रं गद्यशिल्पं मनोहरम्।
कल्पितं चापि तत्सर्वं यथार्थं सत्प्रतीयते।।

पं0 अम्बिकादत्त व्यास ने गद्यकाव्यमीमांसा नामक अपनी कृति में लिखा है कि उपन्यास कथा एवं आख्यायिका से बहुत भिन्न नहीं होता है।

हिन्दी साहित्य के कुछ विद्वानों का मत भी उपन्यास विषय पर देना उपयुक्त होगा। प्रसिद्ध उपन्यासकार मुंशी प्रेमचन्द ने उपन्यास को मानव जीवन का चित्र मानते हुए यथार्थ की भूमि पर मार्मिक ढंग से कही हुई कल्पनामयी सरस कहानी माना है। आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी ने कहा है औपन्यासिक संसार विस्तृत आकाश के नीचे फैली हुई हरियाली के सदृश है जिसमें मनुष्य, वृक्ष, लता, गुल्म, पशु पक्षी आदि स्वच्छन्द रूप से विचरण करते हैं। यद्यपि इनकी स्वच्छन्दता में समग्रता तो रहती ही है।8 आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार वर्तमान जगत में उपन्यासों में बड़ी शक्ति है। समाज जो रूप पकड़ रहा है उसके भिन्न-भिन्न वर्गों में जो प्रवृत्तियाँ उत्पन्न हो रही हैं उपन्यास इनका विस्तृत प्रत्यक्षीकरण ही नहीं करते अपितु आवश्यकतानुसार उनके विकास ठीक सुधार के निराकरण की प्रवृत्ति भी उत्पन्न करते है।

उपन्यासकार की सफलता और असफलता पर विचार करते हुए इ0एम0 फास्टर ने लिखा है कि एक दर्पण विकसित नहीं होता है। क्योंकि सामने से एक ऐतिहासिक तमाश निकलता रहता है वह तभी

विकसित रहता है जब उस पर पारे का ताजा आलेप रहता है। दूसरे शब्दों में जब वह नयी सम्बेदना प्राप्त करता है और उपन्यासकार की सफलता उसकी संवेदना में निहित है न की उसकी विषयवस्तु में। पाश्चात्य विचारकों हिन्दी आलोचकों और संस्कृत के विद्वानों के उपर्युक्त अभिमत उपन्यास के स्वरूप को उद्घाटित करते हैं।

3.3.5 उपन्यास के तत्व

उपन्यास के स्वरूप से परिचय प्राप्त कर चुकने के उपरान्त उपन्यास के तत्वों पर थोड़ा सा प्रकाश अपेक्षित है। पाश्चात्य विचारक उपन्यास के तत्वों में कथावस्तु, पात्र और चरित्र चित्रण, कथोपकथन या सम्वाद, देशकाल और वातावरण, उद्देश्य या संदेश तथा शैली इन छः तत्वों को ही स्वीकार करते हैं। डॉ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी ने उपन्यास का प्रमुख तथ्य कथावस्तु को ही माना है। जबकि कुछ लोग पात्र पर विशेष बल देते हैं।

3.4 उपन्यास के भेद

उपन्यास के लक्षण से आप परिचित हो गये होंगे। अब उसके भेदों से परिचित होना आवश्यक प्रतीत होता है। उपन्यास के भेदों पर अर्वाचीन संस्कृत साहित्य दशा एवं दिशा, आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास एवं विंशशाताब्दिकं संस्कृतगद्यम् में विचार किया गया है। डॉ0 प्रमोद भारतीय उपन्यास के पाँच भेद माने हैं।–

1. Traditional Novels
2. Social Novels
3. Hiostorical Novels
4. Revolutionary Novels
5. Novels Based on Legends and Miths

आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास में भी पाँच ही तरह के भेद स्वीकार किये गये हैं-

1. अनुवाद किये गये उपन्यास
2. सामाजिक उपन्यास
3. नवयुगीन कथ्य पर आधारित उपन्यास
4. आत्मकथा शैली का उपन्यास
5. अलंकृत शैली का उपन्यास

डॉ0 ओमप्रकाश शास्त्री ने छः भेद स्वीकार किये हैं-

1. ऐतिहासिक
2. सामाजिक
3. पौराणिक
4. श्रृंगारात्मक
5. आध्यात्मिक
6. प्रकीर्णक

हमारी सम्मति में उपन्यास के निम्न भेद स्वीकृत होने चाहिए- 1. ऐतिहासिक उपन्यास, 2. सामाजिक, 3. पौराणिक, 4. प्रणयकथामूलक, 5. आत्मकथापरक 6. आध्यात्मिक, 7. क्रान्तिकारी, 8. अनूदित।

3.4.1 ऐतिहासिक उपन्यास

जब उपन्यासकार ऐतिहासिक घटनाओं को लेकर अथवा ऐतिहासिक चरित्र का आधार लेकर इतिहास और काव्य के तत्वों का समन्वयात्मक चित्रण करता है, तो उसे ऐतिहासिक उपन्यास कहा जाता है। यहाँ एक बात विशेष ध्यातव्य है कि संस्कृत में सर्वप्रथम ऐतिहासिक उपन्यास लिखे गये। ऐतिहासिक उपन्यासों में शिवराजविजय एक प्रमुख उपन्यास है और यही संस्कृत साहित्य का प्रथम उपन्यास है। इसकी कथावस्तु महाराष्ट्र केशरी वीर शिवाजी के जीवनवृत्त पर आधारित है। इसके अतिरिक्त ऐतिहासिक उपन्यासकारों में श्रीनाथ हसूरकर, विश्वनारायण शास्त्री, मोहनलाल शर्मा पाण्डेय का नाम विशेष उल्लेखनीय है। डा0 हसूरकर का सिन्धुकन्या (1982) उपन्यास में सिन्धु नरेश राजा दाहिर की दो पुत्रियों के बलिदान की कथा चित्रित है। विश्वनारायण शास्त्री का अविनाशी (1986) उपन्यास कामरूप की माधवी नामकी महाकाल मन्दिर के देवदासी की प्रणय कथा पर आश्रित है। मोहनलाल शर्मा पाण्डेय का उपन्यास पद्मिनी (1999) चित्तौड़ के महाराज रावलरत्न सिंह की रानी पद्मिनी के चरित्र पर आधारित है। हसूरकर का प्रतिज्ञापूर्ति उपन्यास आचार्य चाणक्य के द्वारा की गयी दो प्रतिज्ञाओं के पूरा करने पर आधारित है। डा0 प्रेमशंकर मिश्र का श्री सुभाषचरितम् उपन्यास महान क्रान्तिकारी आजाद हिन्द फौज के संस्थापक श्री सुबाषचन्द्र बोस के जीवन वृत्त पर आधारित है। मेधाव्रताचार्य का शुद्धगंगावतार उपन्यास अपूर्ण रूप में प्राप्त होता है जो वीर शिवाजी के जीवन से सम्बन्धित इति वृत्त पर आधारित है। हसूरकर के दावानल उपन्यास का आधार महमूद गजनवी के द्वारा सोमनाथ मन्दिर पर किया गया आक्रमण है। वासुदेव औदुम्बर के प्रेमजालम् में यवन राज आदिलशाह और महामंत्री रामदेव राय से सम्बन्धित कथावृत्त है।

3.4.2. पौराणिक उपन्यास

पुराणों के साथ-साथ रामायण व महाभारत की घटनाओं व चरित्रों के आधार पर लिखा गया उपन्यास पौराणिक उपन्यासों की कोटि में आता है। संस्कृत साहित्य में पुराण, रामायण व महाभारत का व्यापक महत्व है। संस्कृत साहित्य में प्राचीन पौराणिक कथाओं का आश्रय लेकर सामाजिक और राजनैतिक दृष्टिकोंण से नूतन शैली में बहुत से उपन्यास लिखे गये। इसके उदाहरण हैं- लक्ष्मण सूरि का रामायण संग्रह (1904), भीष्मविजय (1904), महाभारत संग्राम (1905) क्रमशः रामायण व महाभारत के पात्रों व घटनाओं पर आधारित हैं। शंकरलाल माहेश्वर का अनसूयाभ्युदय सती अनुसूइया के चरित्र पर आधारित है। रामस्वरूप शास्त्री का त्रिपुरदाहकथा त्रिपुरासुर के विनाश की कथा पर आधारित है। डॉ0 रामजी उपाध्याय का द्वासुपर्णा और हरिश्चन्दोदय क्रमशः श्रीकृष्ण सुदामा की मैत्री कथा व हरिश्चन्द्र के जीवन-वृत्त से सम्बन्धित हैं। इस दृष्टि से हरिनारायण दीक्षित का गोपालबन्धु, के0एम0 कृष्णमूर्तिशास्त्री का वैदेहीविवाह आदि भी उल्लेख्य हैं।

3.4.3 सामाजिक उपन्यास

सामाजिक रीति-रिवाजों, परम्पराओं, विषमताओं, घटनाओं आदि को लेकर रचे गये उपन्यास, सामाजिक उपन्यास की कोटि में आते हैं। इनमें सामाजिक विषमताओं पर प्रहार, नारी जीवन की पीड़ा, पतिव्रता नारी का चित्रण, आर्थिक विपन्नता का चित्रण भी किया गया होता है। सामाजिक उपन्यासों की श्रृंखला में बलभद्र शर्मा का वियोगिनीबाला प्रथम उपन्यास माना जाता है। इस दृष्टि से अन्य उल्लेखनीय उपन्यास हैं- नरसिंहाचार्य का सौदामिनी, राजम्मा का चन्द्रमौलि, बालकुन्नन नम्बूदरी पाद का सुभद्रा उपन्यास, नगेन्द्र सेन का कल्याणी, परमेश्वर झा का कुसुमकलिका, कृष्णमाचार्य का पातिव्रतम् पाणिग्रहण, सुशीला और मनुजेन्द्र दत्त का सती छाया आदि। इसके अतिरिक्त आनन्दवर्द्धन रामचन्द्र रत्नपारखी का कुसुम लक्ष्मी (1961) एक प्रसिद्ध सामाजिक उपन्यास है जिसमें एक मराठी युवक की तीन बालाओं से गुजरने की कथा चित्रित है। यह कथा बैंगलौर महानगर से सम्बन्धित है। सत्यप्रकाश सिंह का गुहावासी (1992) रामकरण शर्मा का रयीसः (1994), केशवचन्द्र दास का शशिरेखा, श्रीरामदवे का मुंशी प्रेमचन्द के निर्मला उपन्यास का अनुवाद निर्मला (2004) भी सामाजिक उपन्यास हैं। गणेशराम शर्मा का मूढचिकित्सा जीवतोऽपि प्रेतभोजनम्, पं0 नारायण शास्त्री खिस्ते का दारिद्राणाम् हृदयम् तथा दिव्यदृष्टि भी इसी कोटि के उपन्यास हैं।

3.4.4 प्रणयकथामूलक उपन्यास

नायक और नायिका के प्रणय सम्बन्ध को आधार बनाकर रचे गये उपन्यास जो कि श्रृंगार रस को प्रकट करने के बहाने कमनीय कौतुहल भी उत्पन्न करते हैं प्रणय कथामूलक उपन्यास माने जाते हैं। संस्कृत साहित्य में सभी सहृदयजन रस की प्रधानता स्वीकार करते हैं। रसों में रसराज श्रृंगार है, प्रणयकथामूलक उपन्यास श्रृंगार रस से पाठक को आह्लादित करते हैं। इस तरह के उपन्यासों में शैलताताचार्य की कुमुदिनीचन्द्र, कृष्णमाचार्य की मन्दारवती, विदुशेखरभट्टाचार्य की चन्द्रप्रभा, जग्गूबकुल भूषण की जयन्तिका, मुडुम्बै श्रीनिवासाचार्य की मणिमेखला, दुर्गादत्त शास्त्री की वियोगवल्लरी, जगदीशचन्द्र आचार्य की मकरन्दिका उल्लेखनीय हैं।

3.4.5 आत्मकथामूलक उपन्यास

वे उपन्यास जिसमें उपन्यासकार स्वयं अपने जीवन से सम्बन्धित घटनाओं, अनुभूत झंझावातों का चित्रण करता है उन्हें आत्मकथामूलक उपन्यास कहा जाता है। इस कोटि में गणेशराम शर्मा का मामकीनो जीवनसंघर्षः एक आत्मकथा मूलक उपन्यास है। इस तरह के उपन्यासों में देवर्षि कलानाथ शास्त्री के उपन्यास जीवनस्य पाथेयः जिसे संस्कृत उपासिकायाः आत्मकथा नाम से भी जाना जाता है जो कथानकवल्ली में1987 में प्रकाशित हुआ। यह उपन्यास संस्कृत का अध्ययन करने वाली कल्पना नामक बाला की राकेश के साथ विवाह आदि की घटना पर आधारित है। डा0 विवेकनाथ तिवारी ने नारायण दास द्वारा रचित वह्निवलयः को आत्मकथात्मक शैली का उपन्यास माना है।

3.4.6 आध्यात्मिक उपन्यास

आध्यात्मिक उपन्यास संस्कृत साहित्य में अत्यन्त विरले ही हैं। श्री निवासाचार्य की कैरविणी उपन्यास को ओमप्रकाश शास्त्री ने इसी कोटि का उपन्यास माना है। इस उपन्यास में मद्रास की देवी त्रिपोली की उपासना के वर्णन के द्वारा आध्यात्मिक विषय की प्रवणता से पाठक के हृदय को मुग्ध कर देने की क्षमता रखता है। उ0प्र0 के देवरिया जनपद के प्रसिद्ध उपन्यासकार पं0 वेदव्यास शुक्ल का सौप्रभम् उपन्यास भी आध्यात्मिक है।

3.4.7 क्रान्तिकारी उपन्यास

उपन्यास के इस भेद का उल्लेख डा0 प्रमोद भारतीय ने किया है। जिसमें डा0 राधाबल्लभ त्रिपाठी के विक्रमचरितम् (2000) उपन्यास को उदाहरण के रूप में दिया गया है। डा0 त्रिपाठी ने इस उपन्यास में यह दिखाया है कि सत्य की हमेशा विजय होती है। इसका नायक विक्रम शेर है जो सूकर के षड्यन्त्र के द्वारा पराजित सा हो जाता है किन्तु अन्त में शेर सूकर पर विजयी होता है। डा0 त्रिपाठी का यह उपन्यास अंग्रेजी लेखक जार्ज आर्वेल के एनिमल फार्म से प्रभावित प्रतीत होता है।

3.4.8 अनूदित उपन्यास

अन्य भाषाओं के ग्रन्थों का संस्कृत में अनुवाद किये गये उपन्यास ही अनूदित उपन्यास हैं। संस्कृत में उपन्यास विधा का लेखन कुछ हद तक अनूदित उपन्यासों के लेखन से ही माना जाता है। संस्कृत के आचार्यों ने बंग भाषा, तमिल भाषा, आंग्ल भाषा व हिन्दी भाषा के उपन्यासों का संस्कृत में अनुवाद किया है।

बंग भाषा के जिन रचनाओं का अनुवाद किया गया उनका परिचय अपेक्षित है। भट्टाचार्य ने रविन्द्रनाथ ठाकुर के उपन्यास का जयपराजयम् शीर्षक से अनुवाद किया। श्रीशैलताताचार्य ने बंकिमचन्द्रचटर्जी के क्षत्रियरमणी एवं दुर्गेशनन्दिनी का अनुवाद उन्हीं नामों से किया। हरिचरण भट्टाचार्य ने बंकिमचन्द्र के कपालकुन्डला का अनुवाद उसी नाम से किया है। भट्ट मथुरानाथ शास्त्री बंग भाषा के उपन्यास पणरक्षा से प्रभावित होकर आदर्शरमणी लिखे।

तमिल उपन्यासों का भी संस्कृत में अनुवाद हुआ। डी0टी0 कुमार ताताचार्य ने दौरैस्वामी अय्यंगर के मेनका उपन्यास का अनुवाद किया। श्रीनिवासाचार्य ने तमिल साहित्य के आधार पर दो प्रेमकथा मूलक प्रवालवल्ली तथा मणिमेखला की रचना की। ए0 राजगोपाल चक्रवर्ती ने शैवालिनी और कुमुदिनी, विलासकुमारी संगरः नामक उपन्यास तमिल साहित्य के अनुवाद हैं।

आंग्ल भाषा के ग्रन्थों का भी संस्कृत में उपन्यास विधा में अनुवाद हुआ। आर0राजवर्मा कोइतम्बुरान ने शेक्सपीयर के आथेलो नाटक का उद्दालचरितम् नामसे अनुवाद किया। इसमें आंग्ल भाषा के बहुत से शब्दों का संस्कृतकरण किया गया है। पी0के0 कल्याण राम शास्त्री ने शेक्सपीयर के लुक्रिस का अनुवाद कनकलता नाम से किया है। कादम्बरी तिरूमलाचार्य ने शेक्सपीयर के कामेडी आफ एरर्स नाटक का भ्रान्तिविलासः शीर्षक से अनुवाद किया है। रंगाचार्य ने गोल्ड स्मिथ के विकार आफ वेकफिल्ड का अनुवाद प्रेमराज्यम् अभिधान से किया है।

हिन्दी भाषा के बहुत से उपन्यासों का अनुवाद संस्कृत में किया गया है। जयपुर के कथाकार गोस्वामी हरिकृष्ण शास्त्री जी चोखेरबाली का अनुवाद उद्वेजिनी नामक शीर्षक से किया है तथा चतुरसेन शास्त्री के वैशाली की नगरवधू का अनुवाद आम्रपाली नामसे किये हैं। प्रेमचन्द्र के निर्मला उपन्यास का अनुवाद श्रीरामदवे ने 2004 में किया है।

अनूदित उपन्यासों का एक अलग वर्ग माना जाय इससे ओमप्रकाश शास्त्री सहमत नहीं हैं। उनका अभिमत है कि अनूदित उपन्यासों को प्रकीर्णक वर्ग में ही माना जाय। चूँकि सर्वप्रथम संस्कृत में अनूदित उपन्यासों से ही औपन्यासिक लेखन की शुरूआत हुई। अतएवं इनका एक अलग वर्ग माना जाना चाहिए।

अभ्यास प्रश्न- A

प्रश्न संख्या- 1 संस्कृत में उपन्यास विधा के लेखन का प्रारम्भ करने वाले हैं-

A. श्रीनाथ हसूरकर
B. कलानाथ शास्त्री
C. अप्पा शास्त्री राशिव डेकर
D. अम्किादत्त व्यास

प्रश्न संख्या- 2 मराठी में नावेल का समानार्थी अभिधान है-

A. नावेल
B. उपन्यास
C. कादम्बरी
D. रोमॉ

प्रश्न संख्या- 3 डा0 राजेन्द्र मिश्र के अनुसार उपन्यास है-

A. कथा
B. आख्यायिका
C. कथा और आख्यायिका का मिश्रित रूप
D. इनमें से कोई नहीं

प्रश्न संख्या- 4उपन्यासपदेनाऽपि....यथाकादम्बरी यद्वा शिवराजविजयो मम् कथन सम्बन्धित है-

A. शिवराज विजय से
B. कादम्बरी से
C. गद्यकाव्यमीमांसा से
D. विहारीविहार से

प्रश्न संख्या- 5 रामायण में उपन्यास शब्द आया है-

A. युद्धकाण्ड में
B. अयोध्या काण्ड में
C. उपर्युक्त दोनों में

D. बालकाण्ड में

प्रश्न संख्या- 6 गद्य विधा का अर्थ देने वाले उपन्यास शब्द की व्युत्पत्ति डा0 ओमप्रकाश शास्त्री ने किस धातु से स्वीकार किया है-

A. अस् धातु से

B. आसु धातु से

C. दोनों से

D. इनमें से कोई नहीं

प्रश्न संख्या- 7 डा0 हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार उपन्यास का प्रमुख तत्व है-

A. कथोपकथन

B. देशकाल

C. कथावस्तु

D. शैली

प्रश्न संख्या- 8 उपन्यास एक गद्य कथा है जो यथार्थ जीवन को चित्रित करती है यह लक्षण है-

A. राल्फफाक्स का

B. एरनेस्ट का

C. वर्नाडशा

D. कलानाथ शास्त्री का

प्रश्न संख्या- 9 उपन्यास जीवन की अभिव्यक्ति मात्र नहीं बल्कि इसका मूल्यांकन आलोचन और टिप्पणी हैं। यह परिभाषा है-

A. वर्नाडशा

B. ई0एम0 फास्टर

C. रिचर्ड स्टैंग

D. राल्फ फाक्स

प्रश्न संख्या- 10. किसने गद्यबद्धः महाकाव्यमयी कथा को ही उपन्यास माना है-

A. राधाबल्लभ त्रिपाठी

B. रहसबिहारी द्विवेदी

C. अम्बिकादत्त व्यास

D. कलानाथ शास्त्री

प्रश्न संख्या- 11 इतिहास की घटना अथवा चरित्र पर आधारित उपन्यास कहलात है-

A. ऐतिहासिक

B. सामाजिक

C. पौराणिक

D. आत्मकथापरक

प्रश्न संख्या- 12 श्रीसुभाषचरितम् उपन्यास के लेखक हैं-

A. मोहनलाल पाण्डेय

B. कलानाथ शास्त्री

C. विश्वनारायणशास्त्री

D. डा0 प्रेमशंकर मिश्र

प्रश्न संख्या- 13 द्वा सुपर्णा उपन्यास है-

A. सामाजिक

B. पौराणिक

C. ऐतिहासिक

D. अनूदित

प्रश्न संख्या- 14 रामायण संग्रह उपन्यास के लेखक हैं-

A. लक्ष्मणसूरि

B. रामजी उपाध्याय

C. अप्पा शास्त्री राशिव डेकर

D. अम्बिकादत्त व्यास

प्रश्न संख्या- 15 कुसुमलक्ष्मी उपन्यास है-

A. क्रान्तिकारी

B. सामाजिक

C. ऐतिहासिक

D. पौराणिक

प्रश्न संख्या- 16 किसने गद्यकाव्य के वृहद्बन्धः को ही उपन्यास माना है-

A. रहसबिहारी द्विवेदी

B. राजेन्द्र मिश्र

C. राधाबल्लभ त्रिपाठी

D. अप्पाशास्त्री रासिवडेकर

प्रश्न संख्या- 17 आथेलो नाटक का अनुवाद है-

A. आथेलो

B. उद्दाल चरितम्

C. कनकलता

D. भ्रान्तिविलास

प्रश्न संख्या- 18 मकरन्दिका उपन्यास है-

A. प्रणयकथामूलक

B. आध्यात्मिक

C. पौराणिक

D. अनूदित

प्रश्न संख्या- 19 प्रवालवल्ली तथा मणिमेखला उपन्यास अनुवाद हैं-

A. तमिल साहित्य के

B. बंग साहित्य के

C. अंग्रेजी साहित्य के

D. हिन्दी साहित्य के

प्रश्न संख्या- 20 आम्रपाली अनुवाद है-

A. वैशाली की नगर वधु का

B. चोखेरबाली का

C. निर्मला का

D. सुलोचना का

3.5 19 वीं व 20 वींशती के कवि एवं उनकी कृतियाँ

संस्कृत साहित्य में पं0 अम्बिकादत्त व्यास से लेकर सम्प्रति श्रीरामदवे तक होने वाले उपन्यासकारों एवं उनकी रचनाओं पर व्यास समास शैली में विवेचन किया जा रहा है।

1.पं0 अम्बिकादत्त व्यास (1958-1900 ई0) इन्होंने अपना निजवृतान्त विहारी विहार में लिखा है- इनके पूर्वज राजस्थान के जयपुर से सम्बन्धित थे, इनकी शिक्षा काशी में हुई, इनका प्रिय विषय साहित्य था। ये गवर्नमेण्ट संस्कृत कालेज पटना में प्राध्यापक थे। वे भारतेन्दु मण्डली के संस्कृत विद्वान थे। इन्हें सुकवि घटिकाशतक की उपाधि दी गयी थी। इन्हें आधुनिक बाण भी कहा जाता है। इनके संस्कृत में 27 और हिन्दी में 64 ग्रन्थ मिलते हैं। शिवराजविजय संस्कृत का प्रथम उपन्यास है। इसका लेखन 1988में आरम्भ हुआ और पन्द्रह वर्षों तक चला ऐसा केदारनाथ का मत है, जबकि डा0 हीरालाल शुक्ल ने इसके लेखन का प्रारम्भ 1870 ई0 से माना है। इसमें तीन विराम एवं 12 निःश्वास है। इसमें महाराज शिवाजी का जीवन-चरित वर्णित है। इसमें दो स्वतन्त्र कथायें समानान्तर दी गयी हैं जो परस्पर पूरक हैं। एक का नायक रामसिंह है और दूसरी कथा के नायक महाराज शिवाजी। आगे इसकी विशेष समीक्षा की जायेगी।

1.अप्पा शास्त्री राशिवडेकर—

शास्त्री जी आधुनिक संस्कृत काव्य के युग विभाजक हैं। इनका जन्म 1873 ई0 में महाराष्ट्र के कोल्हापुर जिला के अन्तर्गत राशिवडे ग्राम में हुआ। वे संस्कृत चन्द्रिका मासिक एवं सुनृतवादिनी साप्ताहिक के सम्पादक भी रहे। उन्होंने लघुकाव्य, लघुकथा, नाटक, आलोचना आदि के साथ-साथ उपन्यास भी लिखा है। इनके उपन्यास हैं- (1) देवीकुमुद्वती (1903), (2) इन्दिरा (1904), (3) लावण्यमयी (1906), तथा (4) कृष्णकान्तस्य निर्वाणम् (1907)।

2.लक्ष्मण सूरि—

उन्होंने रामायण के आधार पर रामायणसंग्रह (1904) और महाभारत के आधार पर भीष्मविजयम् (1904) महाभारतसंग्रामः उपन्यास लिखे।

3. पं0 नरसिंहाचार्य (1842-1900) दक्षिण भारत के प्रसिद्ध विद्वान आन्ध्रप्रदेश के विजय नगर नरेश आनन्दगजपतिनाथ के राजपण्डित सिंहाचलम् सौदामिनी (1905) एवं उज्जवलानन्द (1905) उपन्यास लिखे।

4. राजम्मा (जन्म 1887)-इनका उपन्यास चन्द्रमौलि सामाजिक विषमताओं पर प्रहार करने वाला उपन्यास है। विलासकुमारी भी इनका अन्य उपन्यास है।

5. विधुशेखर भट्टाचार्य- भट्टाचार्य ने विश्वविद्यालयों में अध्यापन किया। राष्ट्रवादी रचनायें की हैं। उन्होंने लघुकाव्यों की रचना भी किया। इन्होंने दो उपन्यासों की रचना किया। (1) जयपराजयम् (1906) जो रविन्द्रनाथ ठाकुर के साहित्य का संस्कृत अनुवाद है, चन्द्रप्रभा भी उनका उपन्यास है।

6. बलभद्र शर्मा- उनका एकमात्र उपन्यास वियोगिनी बाला (1906) में प्रकाशित हुआ जो प्रसाद गुणमयी शैली में निबद्ध है।

7. भट्टमथुरानाथ शास्त्री- शास्त्री ने बंगला के पणरक्षा उपन्यास का प्रभाव ग्रहण कर 'आदर्श रमणी' उपन्यास लिखा जो संस्कृत रत्नाकर कार्यालय जयपुर से प्रकाशित हुआ। पुनः 1996 में पुस्तकाकार प्रकाशित हुआ। इसमें एक आदर्शवादी युवक द्वारा कुलीन किन्तु निर्धन कन्या से विवाह कर आदर्श स्थापित करने की कथा चित्रित है। यह एक सामाजिक उपन्यास है। इसके अतिरिक्त इनके अनादृता एवं असमसाहसम् कहानियाँ भी लघु उपन्यास के करीब हैं।

8. श्री शैलताताचार्य- इन्होंने राष्ट्रीय गीतकार बंकिमचन्द्र चटर्जी के क्षत्रियरमणी, मेनका व दुर्गेशनन्दिनी का अनुवाद उन्हीं नामों से किया। क्षत्रियरमणी 1908 में, मेनका 1908 में तथा दुर्गेशनन्दिनी 1920 में प्रकाशित हुए।

9. गोपाल शास्त्री- शास्त्री जी का अतिरूपचरितम् 1908 में संस्कृत साहित्य परिषद पत्रिका 108/1 राजा दीनेन्द्र स्ट्रीट कलकत्ता से प्रकाशित हुआ।

10. बुद्धिचन्द्र शास्त्री- बुद्धिचन्द्र जी का आदर्शदम्पती उपन्यास 1908 में प्रकाशित हुआ। यह सामाजिक उपन्यास है।

11. आर0 कृष्णमाचार्य- (1883-1933) इनके अनेक उपन्यासों की सूचना मिलती है। इन्होंने सामाजिक और ऐतिहासिक उपन्यास लिखा है। वररूचिः 1908 में, चन्द्रगुप्तः 1909 में प्रकाशित हुए। इनके अतिरिक्त मन्दारवती देवीवासन्ती, पाणिग्रहण, पतिव्रता तथा सुशीला अन्य उपन्यास हैं। मन्दारवती 1929 में माविल्ल प्रेस मद्रास से प्रकाशित हुआ। पाणिग्रहणम् पतिव्रता वररूचिः सुशीला सहृदया पत्रिका में प्रकाशित हुए।

12. ए0 राजगोपाल चक्रवर्ती- इन्होंने तमिल साहित्य के तीन ग्रन्थों का अनुवाद किया। वे हैं- शैवालिनी (1917), कुमुदिनी तथा विलासकुमारी संगरः।

13. डी0 टी0 कुमार ताताचार्य- ताताचार्य ने दौरस्वामी अय्यंगर के तमिल उपन्यास मेनका का उसी नाम से अनुवाद किया। यह उपन्यास तिरुवायूर की उद्यान पत्रिका में छपा।

14. हरिचरण भट्टाचार्य- भट्टाचार्य का उपन्यास कपालकुण्डला बंकिमचन्द्र के कपाल कुण्डला उपन्यास का अनुवाद है। यह उपन्यास 1918 में शिक्षक ग्रन्थ भाण्डार कलकत्ता से प्रकाशित हुआ।

15. नगेन्द्रनाथ सेन- सेन जी का एक उपन्यास कल्याणी 1918 में प्रकाशित हुआ।

16. मेधाव्रताचार्य- मेधाव्रताचार्य के दो उपन्यास मिलते हैं, एक पूर्ण, दूसरा अपूर्ण रूप से। कुमुदिनीचन्द्र उपन्यास 1919 में प्रकाशित हुआ। इनका शुद्धिगंगावतार उपन्यास अपूर्ण उपन्यास है और यह 1952 में प्रकाशित हुआ।

17. रेणुदेवी- इनके तीन उपन्यास रजनी 1920 में, राधा 1922 में तथा राधारानी 1930 में संस्कृत साहित्य परिषद पत्रिका में प्रकाशित हुए।

18. गणपति शास्त्री मुनि- इनका एकमात्र उपन्यास पूर्णा संस्कृत साहित्य परिषद पत्रिका में1921 में प्रकाशित हुआ।

19. अनन्ताचार्य- इन्हें प्रतिवादि भयंकर के नाम से भी जाना जाता है। इन्होंने हिन्दी उपन्यासकार जगन्नाथ प्रसाद के उपन्यास संसारचक्र का अनुवाद संसारचरितम् नाम से किया है। यह उपन्यास सुदर्शन सुभद्राक्षरशाला से 1930 में प्रकाशित हुआ।

20. नारायण शास्त्री ख्रिस्ते- इन्होंने दो उपन्यास लिखा है। इनका प्रथम उपन्यास दरिद्राणां हृदयम् जिसे राजधर्मः के नाम से भी जाना जाता है का प्रकाशन श्री लक्ष्मीनारायण प्रेस वाराणसी से 1930 में हुआ। इसमें लेखक ने विद्यानगर साम्राज्य के देवाचल ग्राम के निर्धन बुनकर दम्पति कुबेर एवं करुणा की कारुणिक कथा को चित्रित किया है। यह दुःखान्त सामाजिक उपन्यास है। दिव्य दृष्टि उपन्यास मास्टर प्रिन्टिंग प्रेस वाराणसी से 1936 में प्रकाशित है।

21. देवेन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय- इनका 'बंगवीरप्रतापादित्य उपन्यास संस्कृत साहित्य परिषद पत्रिका में 1930 से 31 तक प्रकाशित हुआ। यह ऐतिहासिक उपन्यास है।

22. इन्द्रनाथबन्द्योपाध्याय- इनका गौरचन्द्रः संस्कृत साहित्य परिषद पत्रिका में 1932-33 में प्रकाशित हुआ।

23. श्रीकान्तआचार्य- इनका प्रतापविजयम् उपन्यास संस्कृत साहित्य परिषद पत्रिका में 1933 में प्रकाशित हुआ। यह ऐतिहासिक उपन्यास है।

24. जगद्रामशास्त्री- इनका 'छत्रसालविजयम्' ऐतिहासिक उपन्यास है। यह 1934 में संस्कृत साहित्य परिषद पत्रिका में1934 में प्रकाशित हुआ। इनका दत्ता उपन्यास इसी पत्रिका में 1935 में प्रकाशित हुआ।

25. शिवदत्त त्रिपाठी- इनका 'महाभारतम्' उपन्यास अजमेर से 1935 में प्रकाशित हुआ। यह महाभारत की कथा पर आश्रित है।

26. शंकरलाल माहेश्वरी- इनके उपन्यास 'अनुसूयाभ्युदयम्, भगवतीभाग्योदयम्, माहेश्वरप्राणप्रिया' पौराणिक कथाओं पर आधारित उपन्यास हैं।

27. पी0 के0 कल्याणराम शास्त्री- इन्होंने शेक्सपीयर के लुक्रीस का अनुवाद कनकलता शीर्षक से किया है।

28. ए0 आर0 राजवर्मकोइतम्बुरान- इन्होंने शेक्सपीयर के आथेलो नाटक का उद्दालचरितम् शीर्षक से अनुवाद किया है। इसमें आंग्ल नामों का संस्कृत में प्रातिपदिक बनाया गया है।

29. कादम्बरी तिरुमलाचार्य- इन्होंने शेक्सपीयर के कामेडी आफ एरर्स का 'भ्रान्तिविलासः' नाम से अनुवाद किया है।

30. रंगाचार्य- रंगाचार्य ने गोल्डस्मिथ के उपन्यास विकारआफवेकफील्ड का अनुवाद 'प्रेमराज्यम्' नाम से किया है।

31. वासुदेव आत्माराम लाटकर - इनके एकमात्र उपन्यास 'वलिदानम्' का उल्लेख मिलता है।

32. मुडुम्बै श्रीनिवासाचार्य- इनके चार उपन्यास मिलते हैं- प्रवालमल्ली तथा मणिमेखला प्रणय कथामूलक उपन्यास हैं। इनके दो अन्य उपन्यास हैं- कैरविणी एवं शंकरोपाख्यानम्।

33. चिरक्यल राजवर्मवलियतम्बुरान् (1881-1962)-इनका उपन्यास वनमाला काल्पनिक कथा पर आश्रित है।

34. सोमयाज्यः- इनका उपन्यास 'कणःलुप्तः गृहं दहति' है।

35. भट्टरमानाथ शास्त्री- इनका 'दुःखिनीबाला' सामाजिक उपन्यास है।

36. जग्गूबकुल भूषण- ये कर्नाटक से सम्बन्धित कवि हैं। इन्होंने महाकाव्य, गद्यकाव्य, चम्पू नाटक गीतियों के साथ-साथ उपन्यास भी लिखा है। इनका उपन्यास जयतिका 1990 मंे प्रकाशित हुआ।

37. शेषशायी शास्त्री- इनका अष्टावक्रीयम् उपन्यास अष्टावक्र से सम्बन्धित है।

38. परशुराम शर्मा वैद्य- इनके 'विजयिनी' उपन्यास का उल्लेख मिलता है।

39. चिदम्बर शास्त्री- इनके दो उपन्यास हैं- कमलाकुमारी व सतीकमला। कमलाकुमारी में नारी जीवन के निन्दित पक्ष एवं सतीकमला में प्रशंसनीय पक्ष को चित्रित किया गया है।

40. नारायणशास्त्री भट्ट- इनका 'सीमन्तिनी' उपन्यास 'सहृदया' पत्रिका में प्रकाशित हुआ।

41. बालकुम्न नम्बूदरीपाद- इनका सुभद्रा उपन्यास मिलता है। इसमें नारी जीवन की पीड़ा का चित्रण है।

42. उमेश शास्त्री- इन्होंने 'बिल्वमंगलम्' उपन्यास की रचना किया है।

43. मोहनलाल पाण्डेय- इन्होंने 'रसकपूरम्' उपन्यास लिखा है।

44. रामकिशोर मिश्र- इनके दो उपन्यास मिलते हैं- विद्योतमा और अन्तर्दृष्टि।

45. श्रीनिवास शास्त्री- इनका जन्म राजस्थान के लाम्बी ग्राम में हुआ। ये कवि, गीतकार और उपन्यासकार हैं। इनके तीन उपन्यास मिलते हैं। 1. 'श्रीकृष्णलीलायतनम्' पौराणिक उपन्यास है। 2. चन्द्रमहिपतिः 1935 में लिखा गया। 1959 में 161/1 महात्मा गांधी रोड कलकत्ता से प्रकाशित हुआ। इसका कथानक चन्द्र नामक राजा और कमला नामकी नायिका के जीवन-वृत्त पर आधारित है। 3. सूर्यप्रभा किं वा वैभवपिशाचः 1968 में प्रकाशित हुआ।

46. नरसिंहाचार्य- इनका उपन्यास मृत्तिकावृषभकथा है।

47. उपेन्द्रनाथ सेन-इन्होंने कुन्दमाला उपन्यास लिखा है।

48. डा0 ओमप्रकाश शास्त्री- इन्होंने दो उपन्यास लिखे हैं- 1. न्यायालये द्रोणः तथा 2. उन्मेषः।

49. हरिकृष्ण शास्त्री- इन्होंने चतुरसेन शास्त्री के वैशाली की नगरवधू का आम्रपाली नाम से व बंग उपन्यास चोखेरबाली का उद्वेजिनी नाम से अनुवाद किया है।

50. डा0 कृष्णकुमार मिश्र- इनका क्लूपैट्रा बराकी उपन्यास मिलता है।

51. डा0 भगीरथ प्रसाद त्रिपाठी- इनका मंगलमयूखः उपन्यास प्रकाशित है।

52. प्रो0 केशवचन्द्रदाश-इनका जन्म उड़ीसा के जजपुर जिले के हाटशाह ग्राम में 6 मार्च 1955 को हुआ। सम्प्रति ये जगन्नाथ संस्कृत विश्वविद्यालय नव्यन्याय विभागाध्यक्ष हैं। ये कवि, कथाकार और उपन्यासकार हैं। इन्होंने 15 उपन्यास लिखा है। 8 उपन्यास लोकभाषा प्रचार समिति शारदावलि पुरी से प्रकाशित हैं। ये हैं- शीलतृष्णा 1983, प्रतिपद 1984, पताका 1990, मधुयानम् 1990, अंजलि 1990, विसर्ग 1992, शिखा 1994, शशिरेखा 1994। आवर्तम 1985 में दिव्य ज्योति प्रकाशन शिमला से प्रकाशित है। देववाणी परिषद वेनीविहार दिल्ली से अरुणा 1985, निकषा 1986, ऋतम् 1988 में प्रकाशित हुए। तिलोत्तमा 1990 में मैसूर से प्रकाशित है। ओम् शान्तिः 1997 में प्रतिभा प्रकाशन शक्तिनगर दिल्ली से प्रकाशित हुआ। अन्धश्रोतः 2004 में श्रीमती शुभद्रादाश शशिरेखा भूदान नगरपुर से प्रकाशित हुआ। प्रो0 दास संस्कृत साहित्य के सबसे अधिक उपन्यास लेखन करने वाले हैं।

53. सिद्धर्षिवाणी- इनका उपमितभवप्रपंचकथा आध्यात्मिक उपन्यास है।

54. गंगोपाध्याय- इनका 'सीमा' उपन्यास 1950 में मंजूषा पत्रिका में छपा था।

55. के0 एम0 कृष्णमूर्ति- इनका 'वैदेहीविवाहम्' 1959 में मलेपुरम् मद्रास से प्रकाशित हुआ।

56. रामस्वरूप शास्त्री- इनका त्रिपुरदाह कथा 1959 में मुस्लिम यूनिवर्सिटी अजमेर से प्रकाशित हुआ।

57. वेदव्यासशुक्ल- ये उ0प्र0 के देवरिया जनपद के हैं। इनके पाँच उपन्यासों में तीन उपन्यास तिलोत्तमा, मधुयानम्, शीतलतृष्णा सुधर्मा पत्रिका मंे प्रकाशित हुए। सौप्रभम् 1973 में खोड़ा वारादीक्षित देवरिया उ0प्र0 से प्रकाशित हुआ। वहीं से कौमारम् भी प्रकाशित हुआ।

58. रामचन्द्रसुनुरानन्दवर्धन- इनका कुसुमलक्ष्मी 1961 में एफ. 26 निरोजीनगर नईदिल्ली से प्रकाशित हुआ।

59. रामजी उपाध्याय- ये सागर विश्वविद्यालय में प्रोफेसर व विभागाध्यक्ष थे। इन्होंने बहुत सारे ग्रन्थों का प्रणयन किया है। इनका द्वा सुपर्णा उपन्यास 1963 में देवभारती प्रकाशन इलाहाबाद से व हरिश्चन्द्रोदयम् 1987 में महामनापुरी वाराणसी से प्रकाशित हुआ। ये दोनों पौराणिक उपन्यास हैं। द्वा सुपर्णा में श्रीकृष्ण एवं सुदामा की मैत्री कथा चित्रित है।

60. चन्दनमुनि- ये जैन सन्त हैं। इनका अर्जुनमालाकारम् 1969 में विराटनगर चिकपैठ बैंगलौर से प्रकाशित हुआ। इसमें अर्जुन नामक माली की कथा चित्रित है। इनका दूसरा उपन्यास प्रभवप्रबोधकाव्यम् 1970 में 377 स्वामी विवेकानन्द मार्ग विलपोरला बम्बई-51 से प्रकाशित हुआ।

61. गणेशराम शर्मा- शर्मा जी जयपुर के रहने वाले हैं। इनके तीन उपन्यास 1970 में गुरुकुल पत्रिका जयपुर से प्रकाशित हुये वे हैं- मूढचिकित्सा, जीवतोऽपि प्रेतभोजनम्, मामकीनो जीवनसंघर्षः। मूढचिकित्सा इक्कीस प्रकरण में विभक्त है। इसमें गँवार तांत्रिक और ओझा रोगों के इलाज के नाम पर किस प्रकार टोने टोटके करके लोगों को पीडित करते थे यही आधारभूत कथावस्तु है। जीवतोऽपि प्रेतभोजनम् सच्ची घटना पर आधारित है, इसमें एक व्यक्ति के जीवित रहने पर भी उसे मृत समझकर मृत्यु संस्कार के नाम पर उसकी सम्पत्ति को बेचकर श्राद्ध कर्म से होने वाली बर्बादी की कथा चित्रित है। मामकीनो जीवनसंघर्षः में शर्मा की अपनी आत्मकथा है।

62. गुलाबचन्द निर्मोही- इनका रत्नपालकथा न्यू क्लाथ मार्केट अहमदाबाद से 1971 में प्रकाशित हुआ।

63. बिहारीलाल शर्मा- इनका मंगलायत्नम् 1975 में डुमराव कालोनी अस्सी वाराणसी से प्रकाशित है।

64. वरदराज अय्यंगर- इनका सुधन्वचरित व चन्द्रहासचरित 1975 में ही सुधर्मा प्रकाशन मैसूर से प्रकाशित हुए।

65. विद्याधर द्विवेदी- ये उ0प्र0 के मिर्जापुर जिले के रहने वाले हैं। चक्रवत परिवर्तन्ते 1978 में राबर्टसगंज मिर्जापुर से प्रकाशित हुआ।

66. जगन्नाथ शास्त्री तैलंग- इनका सिन्धुवादवृत्तम उपन्यास 1977 में अगस्तकुण्ड वाराणसी से प्रकाशित हुआ। इसमें सिन्धुवाद की समुद्री यात्राओं का वर्णन है।

67. डा0 विष्णुराज आत्रेय- इनका सरला उपन्यास है। यह संस्कृत का एक ऐसा उपन्यास है जिसका प्रकाशन अल्का प्रकाशन काठमांडु नेपाल से हुआ।

68. हरिदाससिद्धान्त वागीश- इनका सरला उपन्यास 41 देवलेन कलकत्ता से प्रकाशित हुआ।

69. डा0 ठाकुर प्रसाद मिश्र- इन्होंने चाणक्य चरितम् लिखा जो 1981 में कृष्णदास अकादमी वाराणसी से प्रकाशित हुआ।

70. द्वारिका प्रसाद शास्त्री- इनका दिव्यज्योतिः उपन्यास 1982 में प्रेमी प्रकाशन शाही टोला रायबरेली से प्रकाशित हुआ।

71. श्रीनाथहसूरकर (1924-1988)-ये मध्य प्रदेश से सम्बन्धित थे। श्रीपाद्शास्त्रीहसूरकर के पुत्र हैं। इन्होंने कई ऐतिहासिक उपन्यासों को लिखा है। इनका सिन्धुकन्या 1982 में शासकीय महाविद्यालय मध्यप्रदेश से प्रकाशित हुआ। इसमें सिन्धु नरेश दाहिर की दो कन्याओं की वलिदान की कथा चित्रित है। अजातशत्रु उपन्यास 1984 में श्रीलालबहादुर शास्त्री केन्द्रिय विद्यापीठ नई दिल्ली से प्रकाशित हुआ। प्रतिज्ञापूर्ति 1983 में और दावानलः 1991 में उ0प्र0 संस्कृत अकादमी लखनऊ से प्रकाशित हुआ। प्रतिज्ञापूर्ति में चाणक्य की दो प्रतिज्ञायें कही गयी हैं। दावानल में सोमनाथ मन्दिर के उपर महमूद गजनवी के आक्रमण तथा वहाँ की स्थिति की सामना करने के लिए राजा जयपाल द्वारा उठाये गये प्रभावकारी प्रतिकार का वर्णन है। इनका चेन्नमा और व्रती उपन्यास भी मिलते हैं।

72. शंकरलाल मिश्र- इनका शशिप्रभा उपन्यास जयपुर से 1985 में प्रकाशित हुआ।

73. जगदीशचन्द्र- इनका मकरन्दिका 1985 में इण्टरनेशनल पब्लिशर्स 34 अमरनाथ बिल्डिंग महात्मा गांधी अस्पताल मार्ग जोधपुर राजस्थान से प्रकाशित हुआ। इसमें मकरन्दिका की प्रणय कथा है।

74. मिथिलेश कुमार मिश्र- इनका जीगिषा 1986 में पटना से प्रकाशित हुआ।

75. डा0 हरिनारायण दीक्षित- इनका गोपालबन्धु उपन्यास 1988 में इस्टर्न बुकलिन्कर्स न्यू चन्द्रावल जवाहरनगर दिल्ली से प्रकाशित हुआ। विश्वामित्रम् उपन्यास 1995 में प्रकाशित हुआ। विश्वामित्र की कथावस्तु विश्वामित्र के दो शिष्य राम और लक्ष्मण की वीरगाथा से सम्बन्धित है।

76. डा0 कृष्ण कुमार- इनका जन्म 1925 मंे उ0प्र0 के मुरादाबाद जिले में हुआ। इनके दो उपन्यास उदयनचरित एवं तपोवनवासिनी दोनों ही 1990 में मयंक प्रकाशन मिश्राबाग हनुमानगढ़ी कनखल हरिद्वार से प्रकाशित हुए। उदयनचरित में वत्सराज उदयन और वासवदत्ता की कथा है। तपोवनवासिनी में शकुन्तला की कथा चित्रित है।

77. डा0 सत्यप्रकाश सिंह- ये अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय में संस्कृत विभाग में आचार्य रहे। इनका गुहावासी 1991 में मेहरचन्द लक्ष्मण दास प्रकाशन नई दिल्ली से प्रकाशित हुआ। इसमें कथा की शुरूआत दो मित्रों नारायण और नरेन्द्र की ऋषिकेश यात्रा से होती है। बीच में बुद्धिमत्तापूर्ण तरीके से तृतीय पात्र ओमानन्द का प्रवेश कराया जाता है जो नारायण के स्वप्न में आकर उसे उपन्यास का मुख्य नायक सिद्ध करता है।

78. दुर्गादत्त शास्त्री- इनका वियोगवल्लरी उपन्यास 1987 में नलेटी कांगड़ा हिमांचल प्रदेश से प्रकाशित हुआ।

79. विश्वनारायण शास्त्री- इनका अविनाशी उपन्यास 1986 में प्रकाशित हुआ। इसमें कामरूप के माधवी नामक देवदासी की प्रणय कथा चित्रित है।

80. मोहनलाल शर्मा पाण्डेय- इनका पद्मिनी उपन्यास 1999 में प्रकाशित हुआ। इसमें 1302 ई0 के आसपास शासन करने वाले चित्तौण के महाराज रावलरत्नसिंह की रानी पद्मिनी का चरित्र चित्रित है।

81. श्रीश्यामविमल- इनका उपन्यास व्यामोही 1991 में सूर्य प्रकाशन दिल्ली से प्रकाशित है। इसमें कवि की आत्मकथा नारी के इर्द-गिर्द चित्रित है।

82. श्रीकान्त आचार्य कुकरेती- इनका प्रतापविजयः 1993 में नाग पब्लिशर्स जवाहर नगर दिल्ली से प्रकाशित हुआ। इसकी कथावस्तु महाराणा प्रताप के जीवन पर आधारित है।

83. डा0 प्रेमशंकर मिश्र- इनका सुभाषचरितम् उपन्यास आजाद हिन्द फौज के संस्थापक श्री सुबाषचन्द्र बोस के जीवन-वृत्त पर आधारित है।

84. वासुदेवऔदुम्बर- इन्होंने प्रेमजालम् लिखा है।

85. कलानाथ शास्त्री- इनका संस्कृतोपासकायाः आत्मकथा 1987 में कथानकबल्ली में प्रकाशित हुआ। इसे जीवनस्य पाथेयम् नाम से भी जानते हैं। इसमें कल्पना नामक संस्कृत का अध्ययन करने वाली बालिका की राकेश के साथ प्रणय व विवाह की कथा चित्रित है।

86. डा0 नारायणदास- इनका वह्निवलयः लघु उपन्यास है। इसमें महाभारत की कुन्ती का जीवन-वृत्त चित्रित है।

87. मनुजेन्द्रदत्त- इनका सती छाया 1895 की रचना है। इसमें एक महाविद्यालय की छात्रा इन्द्रप्रिया तथा उसकी पुत्री छाया की कहानी है।

88. जीतसिंह खोखर- ये पंजाब के लेखक हैं। इनका प्रीतिः उपन्यास 1986 में प्रकाशित हुआ। जिसमें प्रीति नामक ग्रामीण बाला की संतोष नामक युवक से प्रणय व बलिदान की कथा चित्रित है। संतोष की हत्या के बाद वह अविवाहित रहते हुए संतोष के परिवार का उत्तरदायित्व निर्वहन करती है।

89. डा0 राधाबल्लभ त्रिपाठी- डा0 त्रिपाठी सागर विश्वविद्यालय में प्रोफेसर व विभागाध्यक्ष थे। इन्होंने कुलपति के पद को भी विभूषित किया। इनका एकमात्र उपन्यास विक्रम चरितम् 2000 में प्रकाश में आया। सत्य की अवश्य ही जीत होती है। इसी विचार पर सिंह और सूकर की कथा चित्रित है।

90. श्रीरामदवे- इन्होंने मुंशी प्रेमचन्द के निर्मला उपन्यास का अनुवाद निर्मला नाम से किया है जो 2004 में प्रकाशित हुआ।

91. श्रामकरण शर्मा- इनके दो उपन्यास सीमा और रयीसः अत्यन्त प्रसिद्ध उपन्यास हैं।

3.6 शिवराजविजय की समीक्षा

शिवराजविजय- पं0 अम्बिकादत्त व्यास की यह राष्ट्रवादी रचना ऐतिहासिक उपन्यास की श्रेणी में आती है। इसमें तीन विराम हैं, प्रत्येक विराम में चार-चार निःश्वास हैं। इसमें शिवाजी का जीवनचरित चित्रित है। उपन्यास का आरम्भ एक आश्रम के एक बटु के सूर्योदय होते ही पुष्पचयन के लिए निकलने से होता है जो देवस्मरणात्मक मंगलाचरण कहा जा सकता है। फिर, वीर शिवराज के, मातृभूमि को म्लेच्छों के आधिपत्य से मुक्त कराने के संघर्ष का विवरण है जो प्रायः पूरा ही इतिहास पर आधारित है। कहीं-कहीं कुछ पात्र घटनायें या विवरण कविकल्पना-प्रसूत भी हैं। बीजापुर दरबार में भेजे गये अफजल खाँ का वध, यशवन्तसिंह से भेंट रोशनआरा से प्रणय साइस्ता खाँ पर आक्रमण, जयसिंह से भेंट व सन्धि, दिल्ली दरबार में उपस्थित होना, औरंगजेब द्वाराबन्दी बना लिया जाना, रोगी होने के बहाने वहाँ से छद्म वेष में बच निकलना, सतत् प्रयत्नों के बाद सतारा नगरी को राजधानी बनाना एवं सुखपूर्वक महाराष्ट्र में शासन करना यह प्रधान कथावस्तु है। इसके साथ ही साथ एक उपकथा रघुवीर सिंह और सौवर्णी की प्रणय व विवाह की कथा है। एक अनाथ राजपूत बालिका सौवर्णी अपने कुल पुरोहत के यहाँ पोषित होती है और रघुवीर सिंह नामक युवक से प्रेम और विवाह में यह कथा समाप्त होती है। एक अन्य उपकथा गौरसिंह वीरेन्द्र सिंह की आती है जिसमें एक सुदूर स्थल में मातृभूमि के भक्त और स्वातन्त्र्य के पक्षधर राजपूत युवक चित्रित किये गये हैं। उदयपुर के जागीरदार खड्गसिंह के पुत्र गौरसिंह, श्यामसिंह और उनकी बहन सौवर्णी तथा जयपुर राजघराने का विरेन्द्र सिंह जो व्रह्मचारी गुरू के रूप में स्वतन्त्रता संघर्ष में सहयोग अलग से आश्रम में रहते हुए करता है कल्पित पात्र हैं जो लेखक द्वारा महाराष्ट्र और राजपुताने के समन्वय सहयोग के लिए निबद्ध किये गये हैं। इसमें ऐतिहासिक पात्र हैं शिवाजी, अफजल खाँ, साइस्ताखाँ, यशवन्त सिंह, रोशनआरा, सौवर्णी, रघुवीर सिंह, गौरसिंह, श्यामसिंह, औरंगजेब आदि। इसके नायक वीर शिवाजी न्याय, परोपकार, साहस, उदारता की प्रतिमूर्ति हैं। धर्म व संस्कृति की रक्षा व यवनों का विनाश उनका संकल्प है। शास्त्र और धर्म की मर्यादा में रहकर अपने कार्यों को करते हैं। व्यास जी ने शिवाजी को नायक बनाने के पीछे अपना उद्देश्य जो प्रकट किया है वह दर्शनीय है- मया तु सनातन धर्मधूर्वहशिवराजवर्णनेन रसना पावितैव। अफजल खाँ अत्याचारी, धर्मद्वेषी, विलासी, शत्रु-मित्र के भेद को न समझने वाला शेखी मारने वाला और अदूरदर्शी है। औरंगजेब भारतीय संस्कृति और सभ्यता के विध्वंसक के रूप में चित्रित हुआ है। रघुवीर सिंह का वास्तविक नाम रामसिंह है जो सौवर्णी का प्रेमी है। वह परिश्रमी, साहसी तथा दृढ़ संकल्पी है। गौरसिंह गुप्तचर के रूप में सच्चा देशभक्त और स्वामीभक्त पात्र है।

यह उपन्यास ऐतिहासिक दृष्टिकोंण से उस काल खण्ड का चित्रण करता है जब भारत में औरंगजेब का शासन था और वीर शिवाजी महाराष्ट्र के इर्द-गिर्द से धर्म, संस्कृति की सुरक्षा और यवनों के विनाश के लिए कटिबद्ध थे। लेकिन एक बात यहाँ विशेष ध्यान देने की है 19वीं सती के अन्त में शिवराज के जीवन-वृत्त को चित्रित करने के पीछे भारतीयों को आंग्लों के विरूद्ध संघर्ष करने, स्वाधीनता के लिए आवाह्न करना प्रमुख उद्देश्य था। औरंगजेब के काल में सांस्कृतिक विनाश का चित्रण अत्यन्त ही स्तब्ध कर देने वाला है। अद्य ही वेदा विछिद्य वीथीषु विक्षिप्यन्ते, धर्मशास्त्राण्युद्धूय ध्रूमध्वजेषु ध्मायन्ते, पुराणानि पिष्टवा पानीयेषु पात्यन्ते, भाष्याणि भ्रंशयित्वा भ्राष्ट्रेषु भर्ज्यन्ते; ‘‘क्वचिन्मन्दराणि भिद्यन्ते क्वचित्तुलसीवनानि छिद्यन्ते, क्वचिद्दारा अपह्रियन्ते क्वचिद् धनानि लुण्ठयन्ते, क्वचिदार्तनादाः, क्वचिद्

रूधिरधाराः, क्वचिद्ग्निदाहः क्वचिद् गृहनिपातः'' इत्येव श्रूयतेऽवलोक्यते च परितः। (शिवराजविजय प्रथम निःश्वास)

व्यासजी शिवराजविजय में नाटकीय एवं प्रभावशाली सम्वादों तथा गीतियों की योजना किये। सन्यासी गौरसिंह तथा द्वारपाल के संवाद व तानरंग (गौरसिंह) अफजल खाँ के संवाद अत्यन्त रोचक हैं। अफजल खाँ एवं तानरंग का संवाद देखने योग्य है।

अपजलखाँ-(स्वयं हसन सर्वांश्च हसतः पश्यन्) सत्यं सत्यम् धन्यो भवान्, योऽल्पेनैव वयसैवं विदेश-भ्रमणैः चातुरीं कलयति

तानरंगः धन्य एव यदि युष्मादृशैरभिनन्द्यो।

अफजलखाँ- (क्षणानन्तरम्) अथ भवान् मूर्छनाप्रधानं गायति, तानप्रधानं वा ?

तानरंगः ईदृशं तादृक्षञ्च।

व्यास जी ने इसकी रचना में संस्कृत गद्य की प्राचीन परम्पराओं का पालन करते हुए कादम्बरी की अतिशयिता से बचने की शैली का प्रयोग किया है। इसमें वाक्य विन्यास अलंकारों और रसों का समन्वय प्राचीन परम्पराओं के अनुसार है परन्तु इसका रूप विधान पाश्चात्य प्रणाली में लिखे जाने वाले उपन्यासों के तुल्य है। इसमें व्यास जी ने सभी पात्रों का नामकरण संस्कृत में किया है जैसे अवरंगजीवः (औरंगजेब) मायाजिह्मुः (मुअज्जम्), स्तन्यजीवः (तानाजी), रसनारी (रौशनआरा), अपजलखाँ (अफजलखाँ), रूष्टतमः (रूस्तम) आदि। यही नहीं मोहर्रम को मोहरमः, रमजान को रामयानम् गोलकुण्डा को गोलखण्डः आदि लिखकर इन्हें संस्कृत प्रतिपदिक बनाया है। इसमें कहीं प्रसाद और माधुर्य गुणमयी पदावली है, तो कहीं ओज और समास बहुलता का चमत्कार है। इसमें वैदर्भी और गौडी रीति का मणिकाञ्चन संयोग है। इसमें अनुप्रास मालोपमा उत्प्रेक्षा जैसे अलंकार समस्त पद क्रियाओं के गुच्छे लघुवाक्यांशों की माला आधुनिक शिल्प का सृजन करते हैं। इसका मुख्य रस वीर रस है, श्रृंगार आदि सहयोगी रस हैं।

व्यासजी ने देशजाति और धर्म के गौरव की प्रतिष्ठा और इससे जनमानस को आप्लावित करना अपना मुख्य लक्ष्य निर्धारित किया। उन्हीं के शब्दों में- ''परं मया तु सनातन धर्मधूर्वहशिवराजवर्णनेन रशना पावितैव, प्रसंगतः सदुपदेश निर्देशैः स्वब्राह्मण्यं सफलितमेव.....''। वस्तुतः इस उपन्यास का प्रमुख उद्देश्य स्वतन्त्रता के संग्राम में प्रत्येक हिन्दुस्तानी को भाग लेकर आजादी प्राप्त करने व धर्म की रक्षा करने की प्रेरणा देना है।इस ग्रन्थ का विष्णोर्माया भगवती ययासम्मोहितञ्जगत्, हिंस्रः स्वपापेन विहिंसितः खलःसाधुःसमत्वेनभयाद्विमुच्यते से प्रारम्भ हुआ है और यतो धर्मः ततः कृष्ण, यतः कृष्णः

ततो जयः से समपूर्त हुआ है।उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह सिद्ध होता है कथावस्तु चरित्र-चित्रण संवाद, वातावरण, शैली एवं उद्देश्य आदि सभी तत्वों की

उत्कृष्टता के कारण यह एक आदर्श उपन्यास है।

3.6.1 द्वा सुपर्णा की समीक्षा

प्रो0 रामजी उपाध्याय कृत 'द्वा सुपर्णा' पौराणिक

उपन्यास है। प्रस्तुत उपन्यास में वर्णित कृष्ण-सुदामा की मित्रता की कथा श्रीमद्भागवत् महापुराण में मूलरूप से प्राप्त होती है। इस उपन्यास के कथानक का आधार इस मंत्र को बनाया गया है- द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते तयोरन्यः पिप्पलं स्वादवत्यनश्नन्यो अभिचाकशीति।

इस कथा का शुभारम्भ उज्जैनी नगरी में सान्दीपनी गुरु के आश्रम में सुदामा और कृष्ण की मित्रता होती है। सुदामा जन्म से ही निर्धन ब्राह्मण हैं। वह ब्राह्मण के लिए ब्रह्म चिन्तन के मार्ग में धन को बाधक मानते हैं। उनका मत है कि ब्राह्मण को धनवान नहीं होना चाहिए। कृष्ण मित्र सुदामा की अकिंचनता दूर करना चाहते हैं सुदामा कृष्ण के विचारों को जानने के कारण ही उनसे कभी भी याचना नहीं करते हैं। सुदामा की पत्नी कौमुदी जो गर्गाचार्य की पुत्री हैं के माध्यम से अन्त में श्रीकृष्ण सुदामा की सहायता करने मेंसफल हो जाते हैं। कृष्ण कौमुदी की ग्राम विकास की योजनों के विस्तार हेतु पर्याप्त धन प्रदान करते हैं। कृष्ण की यह प्रतिज्ञा की मैं सुदामा की दरिद्रता दूर करूँगा पूरी हो जाती है।

इस उपन्यास के मुख्य पात्र कृष्ण, सुदामा और कौमुदी हैं। कृष्ण दानवीर के रूप में वे अपने मित्र सुदामा की दरिद्रता को दूर करने के लिए किस तरह से प्रयत्नशील हैं, यह चित्रित है। सुदामा जो कृष्ण का मित्र है वह नैष्ठिक ब्रह्मचारी होना चाहता है किन्तु गर्गाचार्य की पुत्री कौमुदी से विवाह के अवसर पर स्वसुर से दहेज के नाम पर कुछ भी नहीं लेता है। वह अपरिग्रही और आत्म संतोषी और अयाचक के रूप में चित्रित है। कौमुदी इस उपन्यास की नायिका है सुदामा के गुणों के प्रति अनुरक्त है। उसकी दरिद्रता से विचलित नहीं होती। सुदामा के ग्राम की स्थिति को सुधारने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील चित्रित की गयी है। वह अत्यन्त सुन्दर, शिल्प आदि के ज्ञान से परिपूर्ण, सफल गृहस्थ धर्म की निर्वाहिका है।

उपन्यासकार ने इसमें सरल एवं सरस रूप में सुदामा की कथा को चित्रित किया है। उन्होंने व्यावहारिक संस्कृत भाषा का प्रयोग किया है। इसमें प्रसाद गुणमयी सहज, सरल, बोधगम्य पदावली और अलंकारों से विभूषित शिल्प का प्रयोग किया गया है। अनुप्रास का यह उदाहरण वरबस ही आकृष्ट कर लेता है- विप्रकृष्टापि सा तरंगीणी तरंगहस्तैः दम्पत्योः आह्वानं कृतवतीव तयोर्मनसि। (द्वा सुपर्णा) इसमें उपमा, रूपक विरोधाभास व समासोक्ति अलंकारों का भी प्रयोग हुआ है। उपमा अलंकार का यह प्रयोग बहुत ही मंजुल है- तत्र महीकामिन्याः नलिनीनेत्राणीव तृणानि यौवनानीव कुसुमितोपवनानि च शुशुभिरे (द्वा सुपर्णा)। इसमें स्वल्प समासों वाली पदावली का प्रयोग हुआ है जो पाठक को निरन्तर पढ़ने में रोचकता बनाये रखती है। इस काव्य में वीर रस के सभी अंगों का वर्णन चतुरता पूर्वक किया गया है। साथ ही साथ शान्त, करूण आदि का भी प्रयोग हुआ है।

यह उपन्यास तत्कालीन सामाजिक परिदृश्य को भी चित्रित करता है। सुदामा की पत्नी कौमुदी द्वारा गाँव में पाठशालाओं, कन्याशालाओं इत्यादि की स्थापना कराकर उनके मन में शिक्षा के प्रति जागरूकता उत्पन्न करना एवं उन्हें आत्मनिर्भर बनाने का प्रयत्न करना चित्रित है। उस समय की शिक्षा पद्धति, गुरुकुल आदि का चित्रण भी हृदयावर्जक है।निम्न प्रसंग उपन्यास के उद्देश्य पर प्रकाश डालता है- त्यजेदेकं कुलस्यार्थे ग्रामस्यार्थेकुलं त्यजेत्। ग्रामं जनपदस्यार्थे पृथिवीं त्यजेत्। अहं तु आध्यात्मिकपथेन सर्वजनहितं साधयितुं ग्रामार्थं परित्यागं समीचीनं मन्ये। ग्रामस्योन्नतये कौमुदीयत्नं करिष्यतीत वरम्।

ग्रामकर्मणि व्यापृता सा यदि मम् सहयोगं वाञ्छेत्, तर्हि मया स्पष्टमेव व्याख्यातव्यम्- ग्रामस्याभ्युदययोजनानि त्वया स्वयमेव सर्वथा सम्पादनीयानि ग्रामाभ्युदयमिच्छन्नपि नोत्सहे तस्यां दिशि स्वशक्तिं नियोजयितुम। मम् समक्षमाचायदिशो वर्तते यमनुसृत्य मयान्यत्र श्रमः विधातव्यः। तथापि 'ग्रामेऽस्मिन् तव प्रयत्नेन सर्वे सुखिनः स्वस्थाश्च भवन्तु' इतिमेऽभिप्रायः (द्वा सुपर्णा)। वस्तुतः भारत गाँव का देश है। ग्राम में समुन्नयन से ही राष्ट्र का समुन्नयन होगा, ऐसा पवित्र विचार ही इस उपन्यास का उद्देश्य है। वर्तमान में शासन ग्रामों का अभ्युदय करे यह संदेश दिया गया है। यह उपन्यास पाठक को निश्चित रूप से आप्लावित करता है और एक सफल उपन्यास है।

अभ्यास प्रश्न-B

प्रश्न संख्या 1- शिवराज विजय की कथा विभक्त है-

A. 12 निःस्वासों में
B. 10 निःस्वास में
C. 11 निःस्वास में
D. 14 निःस्वास में

प्रश्न संख्या- 2 शिवराज विजय के नायक हैं-

A. अफजल खाँ
B. रघुवीर सिंह
C. गौर सिंह
D. वीर शिवाजी

प्रश्न संख्या 3- सुमेलित नहीं है-

A. रामायणसंग्रह- लक्ष्मणसूरि
B. राजम्मा- चन्द्रमौलि
C. सौदामिनी- नरसिंहाचार्य
D. जयपराजयम्-राजम्मा

प्रश्न संख्या 4- सुमेलित नहीं है-

A. आदर्शरमणी- भट्टमथुरानाथ शास्त्री
B. आदर्श दम्पति- बुद्धिचन्द्र शास्त्री
C. चन्द्रगुप्त-बलभद्र शर्मा
D. वियोगिनी बाला-बलभद्र शर्मा

प्रश्न संख्या 5- कपालकुन्डला के अनुवादक हैं-

A. बंकिमचन्द्र चटर्जी

B. हरिचरण भट्टाचार्य
C. मेधाव्रताचार्य
D. इनमें से कोई नहीं

प्रश्न संख्या 6- दरिद्राणाम् हृदयम् रचना है-

A. नारायण शास्त्री ख्रिस्ते की
B. गणपति शास्त्री मुनि की
C. इन्द्रनाथबन्द्योपाध्याय की
D. श्रीनाथहसूरकर की

प्रश्न संख्या 7- जग्गूबकुलभूषण की कृति है-

A. अष्टावक्रीयम
B. कमला कुमारी
C. दुःखिनी बाला
D. जयन्तिका

प्रश्न संख्या 8- विल्वमंगलम् उपन्यास है-

A. मोहनलाल पाण्डेय का
B. उमेश शास्त्री का
C. डा0 ओमप्रकाश शास्त्री का
D. रामकिशोर मिश्र का

प्रश्न संख्या 9- चन्द्रमहिपतिः उपन्यास है-

A. श्रीनिवास शास्त्री का
B. उपेन्द्रनाथ सेन का
C. नारायण शास्त्री भट्ट का
D. कृष्ण कुमार मिश्र का

प्रश्न संख्या 10- सबसे अधिक उपन्यास लिखा है-

A. भगीरथ प्रसाद त्रिपाठी ने
B. अप्पा शास्त्री ने
C. प्रो0 केशवचन्द्र दास
D. रामजी उपाध्याय

प्रश्न संख्या 11- माली की कथा दी गयी है-

A. हरिश्चन्द्रोदयम्

B. कुसुमलक्ष्मी
C. अर्जुनमालाकारम्
D. तिलोत्तमा

प्रश्न संख्या 12- जीवितोऽपि प्रेतभोजनम् रचना है-

A. गणेशराम शर्मा
B. गुलाबचन्द्र निर्मोही
C. विद्याधर द्विवेदी
D. श्रीनाथहसूरकर

प्रश्न संख्या 13- श्रीनाथहसूरकर का उपन्यास नहीं है-

A. सिन्धुकन्या
B. दावानल
C. अजातशत्रु
D. शशिप्रभा

प्रश्न संख्या 14-सुमेलित नहीं है-

A. तपोवनवासिनी-डा0 कृष्ण कुमार
B. वियोगवल्लरी-दुर्गादत्त शास्त्री
C. गुहावासी-डा0 सत्यप्रकाश सिंह
D. क्ण् विश्वामित्रम्- डा0 कृष्ण कुमार

प्रश्न संख्या 15- संस्कृतोपासिकायाः आत्मकथा की नायिका है-

A. सरला
B. सुलोचना
C. कल्पना
D. पद्मिनी

प्रश्न संख्या 16- सौप्रभम् उपन्यास है-

A. वेदव्यास शुल्क का
B. दुर्गादत्त शास्त्री का
C. डा0 सत्यप्रकाश सिंह का
D. इनमें से किसी का नहीं

प्रश्न संख्या 17- सौवर्णी की कथा मिलती है-

A. पद्मिनी में

B. वियोगवल्लरी में
C. शिवराज विजय में
D. इसमें से किसी में नहीं

प्रश्न संख्या 18- निर्मला नायिका है-

A. निर्मला उपन्यास की
B. मुहावासी की
C. पद्मिनी की
D. जयन्तिका की

प्रश्न संख्या 19- चन्द्रमहिपति उपन्यास विभक्त है-

A. 9 निःश्वास में
B. 13 निःश्वास में
C. 11 निःश्वास में
D. 10 निःश्वास में

प्रश्न संख्या 20- शिवराज विजय के रघुवीर सिंह का दूसरा नाम है-

A. श्याम सिंह
B. गौर सिंह
C. रामसिंह
D. इनमें से कोई नहीं

3.8 सारांश

उपन्यास का लेखन सर्वप्रथम आंग्ल भाषा में हुआ, फिर वहीं से प्रभावित होकर भारत में भी इस विधा में बंग भाषा तमिल, गुजराती एवं मराठी और संस्कृत में रचनायें प्रारम्भ हुई। संस्कृत में इस विधा की शुरूआत पं0 अम्बिकादत्त व्यास ने शिवराज विजय के माध्यम से किया। व्यास जीने ही उपन्यास को कथा एवं आख्यायिका का सम्मिलित रूप माना। रामायण और महाभारत आदि ग्रन्थों में उपन्यास शब्द मिलता है। उपन्यास शब्द उप और नि उपसर्ग पर अस् धातु से बना हुआ है। इसका अर्थ है- समीप में रखना। साहित्यिक विधा के अर्थ में यह उप + नि उपसर्ग पूर्वक आस् धातु से करण में घञ् प्रत्यय पूर्वक निष्पन्न होता है। ऐसा डा0 ओमप्रकाश शास्त्री का मत है। डा0 राजेन्द्र मिश्र ने इसे कथा और आख्यायिका का मिश्रित रूप माना है। अर्नेस्ट के अनुसार यह एक गद्य कथा है जो यथार्थ जीवन को चित्रित करती है। उपन्यास के तत्व छः हैं। उपन्यास के ऐतिहासिक, सामाजिक, पौराणिक, प्रणयकथा मूलक, आत्मकथापरक, आध्यात्मिक, क्रान्तिकारी तथा अनूदित ये आठ भेद हैं। अम्बिकादत्त व्यास से लेकर श्रीरामदवे तक 92 उपन्यासकार हैं, इसमें राशिवडेकर, बिलशेखर भट्टाचार्य, रामजी उपाध्याय, शैलताताचार्य, श्रीनिवास शास्त्री, जग्गूबकुल भूषन, केशवचन्द्र दास, गणेशराम शर्मा,

श्रीनाथ हसूरकर और वेदव्यास शुक्ल प्रमुख उपन्यासकार हैं। शिवराज विजय आजादी के लिए संघर्ष करने की प्रेरणा देने वाला ऐतिहासिक उपन्यास है। सती छाया उपन्यास ने फिल्मों की कहानियों को प्रभावित किया है।

3.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न- A की उत्तरमाला-

1. D	2. C	3. C	4. C	5. C
6. B	7. C	8. B	9. A	10. A
11. A	12. D	13. B	14. A	15. A
16. A	17. B	18. A	19. A	20. A

अभ्याय प्रश्न- B की उत्तरमाला-

1. A	2. D	3. D	4. C	5. B
6. A	7. D	8. B	9. A	10. C
11. C	12. A	13. D	14. D	15. C
16. A	17. C	18. A	19. A	20. C

3.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. विंशशाताब्दिकं संस्कृतगद्यम् पृ0 18
2. दी वल्ड आफ फिक्शन पृ0 150-151
3. दी थ्योरी आफ नावेल इन इंग्लैण्ड (1961) पृ0 11
4. दी हिस्ट्री आफ नावेल इन इंग्लैण्ड-पार्ट-1 पृ0 11
5. प्रेमचन्द और शरच्चन्द्र के उपन्यास पृ0 57
6. कथानकवल्ली (भूमिका)
7. अभिनवकाव्यांलकारसूत्र- 3.1.13
8. आधुनिक साहित्य पृ0 172
9. प्रेमचन्द और शरच्चन्द्र के उपन्यास पृ0 127
10. वही पृ0 59

3.11 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

इस इकाई के अध्ययन में आप निम्न ग्रन्थों का उपयोग कर सकते हैं-

1. संस्कृत वाङमय का वृहद् इतिहास सप्तम् खण्ड आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास।

2. प्रधान सम्पादक, पद्मभूषण आचार्य श्री बलदेव उपाध्याय सम्पादक डा0 जगन्नाथ पाठक

3. प्रकाशक उ0प्र0 संस्कृत संस्थान लखनऊ (2000 ई0)

4. विंशशाताब्दिकं संस्कृतगद्यम् लेखक डा0 ओमप्रकाश शास्त्री, प्रकाशिका श्रीमती कमलेश, श्रुतप्रकाशनम् श्रीकृष्णध्यानालयः, दीनदयालनगरम् (खदरा) सीतापुर मार्ग लखनऊ 1998।

5. आधुनिक संस्कृत साहित्य में उपन्यास एक अध्ययन- डा0 विवेकनाथ त्रिपाठी (अप्रकाशित शोधकार्य) दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय गोरखपुर।

6. आधुनिक संस्कृत साहित्य दशा एवं दिशा- डा0 मंजुलता शर्मा परिमल पब्लिकेशन्स नई दिल्ली।

3.12 निबन्धात्मक प्रश्न

प्रश्न- 1 उपन्यास शब्द के अर्थ व स्वरूप पर प्रकाश डालिये।

प्रश्न- 2 उपन्यास के भेदों का उल्लेख कीजिए।

प्रश्न- 3 शिवराज विजय की समीक्षा कीजिए।

इकाई- 04 आधुनिक संस्कृत लघुकथाकार
गिरधर शर्मा चतुर्वेदी, भट्ट मथुरा नाथ शास्त्री, देवर्षि कलानाथ शास्त्री, बिन्देश्वरी प्रसाद मिश्र, अभिराज राजेन्द्र, प्रभु नाथ द्विवेदी, राधावल्लभ त्रिपाठी, इच्छा राम द्विवेदी, अन्य प्रमुख

इकाई की रूप रेखा

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 आधुनिक संस्कृत लघुकथासाहित्य, परिभाषा एवं भेद
4.4 आधुनिक संस्कृत लघुकथाकार
    4.4.1 गिरधर शर्मा चतुर्वेदी
    4.4.2 भट्ट मथुरा नाथ शास्त्री
    4.4.3 देवर्षि कलानाथ शास्त्री
    4.4.4 बिन्देश्वरी प्रसाद मिश्र
    4.4.5 अभिराज राजेन्द्र
    4.4.6 प्रभु नाथ द्विवेदी
    4.4.7 राधावल्लभ त्रिपाठी
    4.4.8 इच्छा राम द्विवेदी
    4.4.9 अन्य प्रमुख
4.5 सारांश
4.6 शब्दावली
4.7 अभ्यासार्थ प्रश्न- उत्तर
4.8 उपयोगी पुस्तकें
4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

संस्कृत साहित्य की आधुनिक प्रतिभाएँ से सम्बन्धित यह प्रथम खण्ड की चतुर्थ इकाई है। इससे पूर्व की इकाई में आपने उन्नीसवीं एवं बीसवीं शताब्दी के आधुनिक संस्कृत गीतिकाव्य एवं उपन्यासकारों के परिचय से परिचित हुवे। प्रस्तुत इकाई में आप आधुनिक संस्कृत लघुकथाकारों के विषय में विस्तार से अध्ययन करेंगे। संस्कृत साहित्य में महाकाव्य, नाटक, गद्यकाव्य, गीतिकाव्य, उपन्यास के अतिरिक्त जितने भी प्रकार के संस्कृत काव्य रचे गये, वे सभी सामान्यत: लघुकाव्य की संज्ञा में ही आते हैं। लघुकाव्य अपने अन्तर्गत अर्वाचीन संस्कृत साहित्य के विशाल भाग को स्वयं में समाविष्ट करता है। यह काव्य केवल कथा आदि के द्वारा मनोरंजन ही नहीं करता अपितु यह सशक्त अभिव्यक्ति के माध्यम से समाज को दिशा दिखाने का कार्य भी करता है। साहित्यदर्पणकार इस सन्दर्भ में कहते हैं कि— **'रामादिवत्प्रवर्तितव्यं न रावणदिवत्'** काव्य हमें कथा के माध्यम से राम के चरित्र के समान प्रवृत्त होने व रावण के समान अनाचार न करने का ही सन्देश देते हैं। इसी आचरण का अनुकरण कर आधुनिक संस्कृत लघुकथाओं ने भी समाज को दिशा प्रदान करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। भारत में कथा का इतिहास बहुत प्राचीन है। वेद एवं पुराणों से प्राप्त होने वाले आख्यान कथा का ही प्रारूप हैं। पंचतन्त्र, बेतालपंचविंशति आदि कहानियां प्राचीन काल से भारत में प्रसिद्ध रहे हैं। परन्तु समय के साथ तथा पाश्चात्य प्रभावों से संस्कृत कथा की विषय वस्तु व शैली में बहुत अधिक परिवर्तन दिखाई देता है।

लघुकाव्य कथाकारों तथा उनकी रचना करने वाले प्रमुख कवियों के विषय में महत्वपूर्ण उनके योगदान से सम्बन्धित जानकारी इस इकाई के माध्यम से प्राप्त होगी। साथ ही आधुनिक संस्कृत साहित्य में हो रही नवीन सर्जना से भी परिचित होंगे।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप—

- ❖ आधुनिक संस्कृत के विषय में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- ❖ लघुकथाकारों के विषय में जान सकेंगे।
- ❖ लघुकथा के विषय में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- ❖ संस्कृत लघुकथाओं के परिवर्तीत व विकसीत स्वरूप से परिचित हो सकेंगे।

4.3 आधुनिक संस्कृत लघुकथासाहित्य, परिभाषा एवं भेद

विश्व में सबसे प्राचीन भाषा संस्कृत का प्राचीन साहित्य विपुल रूप से समृद्ध है, किन्तु आज संस्कृत साहित्य के अनेक परिवर्तन हो रहे हैं तथा अनेकों विधाओं में संस्कृत कवियों द्वारा साहित्य लिखा जा रहा है। जहां एक और संस्कृत पत्र- पत्रिकाएँ समाचार पत्र संस्कृत में प्रकाशित हो रहे हैं, वहीं दूसरी ओर कवि लेखक इस भाषा में निरन्तर कविता, नाटक, कहानी, उपन्यास आदि लिख रहे हैं। उसी प्रकार कथासाहित्य में भी अनेक परिवर्तन दिखाई दे रहे हैं। प्राचीन संस्कृत साहित्य में गद्य काव्य के कथा (कल्पनाओं के आधार पर) व आख्यायिका (इतिहास परक) दो ही भेद प्राप्त होते हैं, किन्तु वर्तमान में इन दोनों भेदों को उपन्यास विधा के अन्तर्गत रखते हुए इसे चार भागों में विभक्त किया है— **(1) उपन्यास (2) कथनिका (3) लघुकथा (4) दीर्घकथा ।**

अग्निपुराणकार ने इसके पांच भेद स्वीकार किए हैं। **(1) कथा (2) अख्यायिका (3) खण्डकथा (4) परिकथा (5) कथनिका।**

आनन्दवर्धन ने भी इसके पांच भेद माने है। **(1) कथा (2) अख्यायिका (3) परिकथा (4) खण्डकथा (5) सकलकथा।**

प्राचीन संस्कृत साहित्य में कथा साहित्य के भेद तो प्राप्त होते हैं परन्तु लघुकथा तथा कथानिका के उदाहरण ग्रन्थ प्राप्त नहीं होते। आधुनिक समय में जो लघुकथा-कथानिका-दीर्घकथा लिखी जा रही हैं उस पर पाश्चात्य साहित्य का प्रभाव दिखाई देता है। लघुकथा में जीवन दर्शन का आंशिक वर्णन होता है। तथा कथानिका में देशकाल एवं उस समय के वातावरण का वर्णन होता है। लघु कथा के विषय में अनेक पाश्चात्य साहित्यकारों के मत इस प्रकार हैं—

एम.जी.वेल्स के अनुसार—"Any piece of short fiction which can be read in twenty minutes wold be a short story"

एडगर एलेन के अनुसार— "A short story in a narrative short enough to be read in a single sitting written to make an impression on the reader excluding all that does'nt forward that impression complete and final in itself"

डॉ राजेन्द्र मिश्र के अनुसार— लघुकथायां वर्णितं वृत्तं विस्तृतं न भवती। तत्र पात्राणामनेकेषामपि प्रसतुति न दृष्यते। प्रायेण लघुकथा भवति एक पात्र पर्यवसायिवृत्ता। लघुकथा भवति मार्गोद्घाटनमात्रपर्यवसायिनी कामं लघु कथाया: कलेवरं पृष्टमितं स्यात्, पृष्ठद्वयमितं वा परन्तु मूललघुकथा तु एकवाक्यमितैव भवति।

आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी जी के अनुसार—जीवनस्यैकदेशनिरूपणपरमाख्यानंकथा। इस प्रकार कहानी में उपन्यास की तरह जीवन के सर्वांगीण नहीं वरन् एक देश का निरूपण होता है। संस्कृत साहित्य की जो लघुकथाएं प्राप्त हैं वह प्राचीन कथाओं से परिवर्तित रूप में हमारे समक्ष हैं। आधुनिक लघुकथाओं के लेखन का काल 21 वीं शताब्दी के अंतिम दशक से माना जाता है। तब से लेकर वर्तमान तक जितने लघुकथायें प्राप्त होती हैं उनमें संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं का विशेष योगदान है।

आधुनिक संस्कृत में कथा न केवल लघुकथा वरन् टुप् कथा, पुट्कथा, स्पशकथा, व्यग्यकथा, हास्यकथा, चित्रकथा, विनोद कथा आदि अनेक रूपों में प्राप्त है।

(1) **टुप् कथा**— टुप् कथा अत्यन्त सीमित शब्दों में लिखी जाती है। डा0 बनमाली विश्वाल टुप् शब्द को लघ्वार्थवाचक मानते हैं। सम्भाषण संदेश नामक पत्रिका के कई अंकों में टुप् कथायें प्रकाशित हुई हैं। कथासप्तति: इसका उदाहरण है।

(2) **स्पश कथा**— स्पशकथा से अभिप्राय है जासूसी कहानी जिसे अपराध साहित्य या परिसोंधनात्मक साहित्य कहते हैं। 'आवृत्ते घनान्धकारे' , शान्तला आदि इसके उदाहरण हैं।

(3) **पुट कथा**— पुटकथा टुप् से दीर्घा होती है। यह कथाएं एक पृष्ठ में होती हैं। 'विलक्षण: पाठ: इसके उदाहरण हैं।

(4) **चित्र कथा**—आधुनिक संस्कृत साहित्य की अत्याधुनिक प्रवृत्ति चित्रकथा (कामिक्स) है। इसके उदाहरण डायमंड कामिक्स, नागराज कामिक्स आदि हैं।

इस प्रकार विश्व में प्रचलित कथाओं के आधार पर संस्कृत कथासाहित्य में अनेक प्रकार के परिवर्तन हो रहे हैं। आधुनिक काल में संस्कृत चन्दिका, संस्कृत रत्नाकर से लेकर भारती जैसी पत्रिकाओं में कई कहानियां प्रकाशित हुई। आजकल संस्कृत प्रतिभा, सवरमंगला, दुर्वा, उशती, कथासरित, संभाषणसंदेश तथा भारती आदि पत्रिकाओं में अनेकों संस्कृत की लघु कथाएं प्रकाशित हो

रही हैं। लघुकथा वर्तमान में संस्कृत साहित्य की सर्वाधिक प्रचलित विधा है। इसमें आप देखेंगे कि वर्तमान लघुकथा में नायक नायिका के चित्रण ही नहीं जीवन के यथार्थ घटनाओं का भी चित्रण किया गया है। इस इकाई के माध्यम से आप लघुकाव्यकारों तथा उनकी रचना करने वाले प्रमुख कवियों के विषय में महत्वपूर्ण जानकारी आगे क्रमश: प्राप्त करेंगे।

4.4 आधुनिक संस्कृत लघुकथाकार

कुछ विद्वानों का मानना है कि पण्डित राज जगन्नाथ के पश्चात् संस्कृत काव्यशास्त्र की धारा शिथिल पड़ गयी थी यह कथन अकारण नही है। वास्तव में पण्डित राज (1620 ई-1670 ई0) के समय मुगल वंश के अन्तिम बादशाह औरंगजेब के मृत्यु के अनन्तर अनेक कमजोर उत्तराधिकारियों के कारण वह काल ऐतिहासिक उथल-पुथल का काल रहा। उक्त काल खण्ड में मराठा राजसत्ता के साथ अंग्रेजों के जोरदार राजनैतिक संघर्ष के कारण काव्यशास्त्रीय रचनाधर्मिता का वातावरण ही नही रहा। स्वस्थ साहित्य रचना की धारा शुष्क होकर रह गयी। देववाणी का अस्तित्व ही क्षीण होने लगा। लार्ड मैकाले के शिक्षा-नीति ने तो अंग्रेजी भाषा का वर्चस्व पूर्ण तथा शासन-प्रशासन एवं न्यायालयों में स्थापित करा दिया। दैवयोग से लार्ड हेस्टिंग्ज संस्कृत भाषा के अपार ज्ञान से प्रभावित होकर इसका प्रबल पक्षधर सिद्ध हुआ। उन्होंने न्यायालयों में वादों के निर्णय का आधार याज्ञवल्क्य स्मृति एवं उसकी टीका 'मिताक्षरा' को बनाया। यही नही उन्होंने तत्कालीन संस्कृत अध्येता चार्ल्स विल्किन्स को प्रेरित करके श्रीमद्भगवतगीता का अंग्रेजी रूपान्तर भी करवाये। इसी क्रम में हेस्टिंग्ज ने कुछ आचार्यों एक दल गठित कर ''इप्रलैण्डीय व्याकरणसारः'' नामक एक व्याकरण ग्रन्थ की संरचना भी करवाये ताकि भारतीय संस्कृतज्ञ अंग्रेजी भाषा सरलतया सीख सकें। लार्ड ने इस ग्रन्थ को अंग्रेजी में अनुवाद भी किया। सन् 1784 ई0 में कलकत्ता उच्च न्यायालय के न्यायाधीश सर विलियम जोन्स ने पं0 रामनाथ तर्कालड़कार के चरणों में बैठकर संस्कृत भाषा का विधिवत अध्ययन किया तथा कालिदास की सुप्रसिद्ध नाटक 'अभिज्ञानशाकुन्तल' का अंग्रेजी में अनुवाद किया। तद्नन्तर 1793 ई0 में जर्मन विद्वान जॉन फॉस्टर ने उक्त ग्रन्थ को जर्मन भाषा में अनूदित किया। इस कालजयी रचना को जब महान् जर्मन कवि गेटे ने पढ़ा तो वह मन्त्रमुग्ध हो गया। उसने शाकुन्तल के कथानक को स्वर्ग एवं पृथ्वी का संगम स्थल घोषित किया। महाकवि गेटे के पढ़ने के पश्चात् सम्पूर्ण यूरोपीय विद्वतसमूह में तूफान आ गया। देखते ही देखते सैकड़ों अंग्रेज, जर्मन, फ्रैन्च, इटैलियन एवं अनेक विद्ववत्जन देववाणी संस्कृत के अध्ययन में रत हो गये। ग्रिम, ग्रासमान एवं वर्नर जैसे मूर्धन्य विद्वानों ने भाषाशास्त्रीय नियमों के माध्यम से प्रमाण सहित बता दिया कि संस्कृत भारोपीय परिवार की मूल भाषा है। समस्त यूरोपीय भाषाएँ संस्कृत से ही निर्गत है। यह संस्कृत भाषा के पुनर्जागरण काल था। संस्कृत विश्व भाषा के रूप में प्रतिष्ठित हो चुकी थी। कीथ, राथ, विल्सन, व्युहलर, स्टेनकोनो, ल्यूडर्स, पिशेल, फार्ग्युसन, जॉली, कॉवेल, मैकडानेल फादर जिमरमैन, मोनियर, विलियम्स, हम्बोल्ट, मैक्समूलर, वेबर, टकर, वेनिस, ग्रिफिथ, कपलर, हर्मन, जैकोबी, विन्टर नित्स, वान श्रोयडर, पीटर्सन, ह्विटिनी आदि सैकड़ों पाश्चात्य विद्वान मनीषी संस्कृत के निष्ठावान अध्येता बन गये थे। विशाल संस्कृत वाङ्गमय जिसकी अविरल धारा शुष्क हो चली थी तथा ज्योतिषियों, कर्मकाण्डियों, पुरोहितों तक सीमित रह गयी थी एक बार पुनः उन्मुक्त गति से प्रवाहित होने लगी उस काल में भारतीय ज्ञान-विज्ञान की प्रतिष्ठा पूरे संसार में स्थापित हो गयी तत्पश्चात् दुनिया को अपनी लघुता का बोध होने लगा। इस प्रकार अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से पुनः एकबार संस्कृत की रचनाधर्मिता पल्लवित, पुष्पित होने लगी। अठारहवीं, उन्नीसवीं एवं बीसवीं शताब्दी का लेखा-जोखा किया जाय तो महाकाव्य, खण्डकाव्य, कथा, आख्यायिका, गीतिकाव्यस, उपन्यास, चम्पू, यात्रा प्रबन्ध,

संस्मरण, नाटक, प्रकरण, लघुकथा तथा काव्यशास्त्री ग्रन्थों की संख्या लगभग दस हजार पहुँच चुकी थी। पण्डितराजोत्तर जिन मूर्धन्य आचार्यों की परम्परा प्रतिष्ठित हुई उनके जीवन वृत्त एवं उनकी रचना आदि की संक्षिप्त चर्चा यहाँ आवश्यक है।

4.4.1 गिरधर शर्मा चतुर्वेदी

गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी का जन्म 29 दिसम्बर, सन 1881 ई. को जयपुर, राजस्थान में हुआ था। गिरिधर शर्मा पंजाब विश्वविद्यालय में शिक्षा-शास्त्री, जयपुर विश्वविद्यालय में व्याकरणाचार्य तथा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के वाचस्पति थे। शर्मा जी को हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा साहित्यवाचस्पति, भारत सरकार द्वारा महामहोपाध्याय की उपाधि से विभूषित तथा राष्ट्रपति द्वारा सम्मानित किया गया था।

गिरिधर शर्मा सन 1908 से 1917 ई. तक ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम, हरिद्वार के आचार्य थे। फिर उन्होंने सन 1918 से 1924 ई. तक गिरिधर सनातन धर्म संस्कृत कालेज, लाहौर के आचार्य का पद ग्रहण किया। सन 1925 से 1944 ई. तक जयपुर, के महाराजा संस्कृत कालेज में दर्शन के प्राध्यापक पद पर थे। गिरिधर सन 1940 से 1954 ई. तक काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में संस्कृत अध्ययन एवं अनुशीलन मण्डल के अध्यक्ष के पद पर कार्यरत रहे। 1960 ई. से वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय के सम्मानित प्राध्यापक का पद ग्रहण किया। उसके वाद सन 1951-52 ई. में भारत सरकार की संविधान संस्कृतानुवाद समिति के सदस्य रहे। सन 1930 और 1940 ई. में हिन्दी साहित्य सम्मेलन के दर्शन-परिषद के सभापति के पद पर कार्यरत रहे।

गिरिधर शर्मा वेद, दर्शन तथा संस्कृत साहित्य के प्रकाण्ड पण्डित, महान् व्याख्याता, समर्थ लेखक तथा अनेक पत्र-पत्रिकाओं के सम्पादक थे। इन्होंने बहुत से महत्त्वपूर्ण ग्रंथों का सम्पादन किया है। गिरिधर जी की संस्कृत तथा हिन्दी की कृतियाँ इस प्रकार हैं- महाकाव्य संग्रह, महर्षि कुलवैभव, ब्रह्म सिद्धांत , प्रमेयपारिजात, चातुर्वर्ण्य, पाणिनीय परिचय, स्मृति विरोध परिहार, गीता व्याख्यान, वेद विज्ञान विन्दु, वैदिक विज्ञान, भारतीय संस्कृति, पुराण पारिजात, गीता व्याख्यान, पुराण पारिजात इनकी नवीनतम कृतियाँ हैं।

4.4.2 भट्ट मथुरा नाथ शास्त्री

कविशिरोमणि भट्ट मथुरानाथ शास्त्री (23 मार्च 1889 - 4 जून 1964) बीसवीं सदी पूर्वार्द्ध के प्रख्यात संस्कृत कवि, मूर्धन्य विद्वान, संस्कृत सौन्दर्यशास्त्र के प्रतिपादक और युगपुरुष थे। उनका जन्म 23 मार्च 1889 (विक्रम संवत 1946 की आषाढ़ कृष्ण सप्तमी) को आंध्र के कृष्णयजुर्वेद की तैत्तरीय शाखा अनुयायी वेल्लनाडु ब्राह्मण विद्वानों के प्रसिद्ध देवर्षि परिवार में हुआ, इनके पिता का नाम देवर्षि द्वारकानाथ, माता का नाम जानकी देवी था। प्रकाण्ड विद्वानों की वंश परम्परा में भट्ट मथुरानाथ शास्त्री ने अपने विपुल साहित्य सर्जन की आभा से संस्कृत जगत् को प्रकाशमान किया। आधुनिक संस्कृत साहित्य के विकास के भी तीन युग - अप्पा शास्त्री राशिवडेकर युग (1890-1930), भट्ट मथुरानाथ शास्त्री युग (1930-1960) और वेंकट राघवन युग (1960-1980) माने जाते हैं। उनके द्वारा प्रणीत साहित्य एवं रचनात्मक संस्कृत लेखन इतना विपुल है कि इसका समुचित आकलन भी नहीं हो पाया है। अनुमानतः यह एक लाख पृष्ठों से भी अधिक है। राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली जैसे कई संस्थानों द्वारा उनके ग्रंथों का पुनः प्रकाशन किया गया है तथा कई अनुपलब्ध ग्रंथों का पुनर्मुद्रण भी हुआ है। भट्ट मथुरानाथ शास्त्री का देहावसान 75 वर्ष की आयु में हृदयाघात के कारण 4 जून 1964 को जयपुर में हुआ। विलक्षण प्रतिभावान मथुरानाथ की शिक्षा प्रमुखतः महाराजा संस्कृत कॉलेज, जयपुर में हुई।

आपने सन् 1901 में संस्कृत साहित्य में उपाध्याय, 1903 में संस्कृत व्याकरण में उपाध्याय तथा 1907 में व्याकरण शास्त्री की परीक्षा सर्वोच्च अंकों के साथ उत्तीर्ण की। उससे पूर्व 1906 में उन्होंने पंजाब विश्वविद्यालय से शास्त्री की स्नातक परीक्षा भी सर्वप्रथम स्थान के साथ उत्तीर्ण की। तदनन्तर 1908 में श्रीकृष्ण शास्त्री द्राविड़ के विद्यार्थी के रूप में आपने महाराजा संस्कृत कॉलेज जयपुर से साहित्याचार्य की स्नातकोत्तर डिग्री सर्वोच्च अंकों के साथ ली। मूर्धन्य विद्वान मधुसूदन ओझा के शिष्यत्व में आपने वेदों, ब्राह्मणों, उपनिषदों, दर्शन आदि ग्रंथों का अध्ययन किया। अपने 1947 में प्रकाशित काव्य-ग्रन्थ "जयपुर-वैभवम्' में भट्ट जी ने 'नागरिक वीथी' खंड में अपने कुछ अध्यापकों का सादर कवितामय विवरण अंकित किया है।

भट्ट मथुरानाथ शास्त्री ने 1925 से 1931 तक जयपुर के महाराजा कॉलेज में, जहाँ अंग्रेज़ी के अतिरिक्त अन्य विषयों की भी शिक्षा दी जाती थी, संस्कृत के प्राध्यापक के रूप में पढ़ाया। सन् 1931 से 1934 तक आपने तत्कालीन जयपुर राज्य के संस्कृत विद्यालयों के मुख्य परीक्षक व इंस्पेक्टर ऑफ़ स्कूल्स (निरीक्षक संस्कृत पाठशाला) के पद पर कार्य किया। तदनंतर 1934 में आप महाराजा संस्कृत कॉलेज में साहित्य के प्रोफ़ेसर और विभागाध्यक्ष के पद पर आसीन हुए जहाँ से सन् 1942 में आप सेवानिवृत्त हुए।

एक कवि, संपादक, उपन्यासकार, आलोचक, कथाकार, वक्ता, टीकाकार, लेखक और पत्रकार के रूप में भट्ट मथुरानाथ शास्त्री का विशाल कृतित्व विस्मयकारी है। इनके द्वारा प्रकाशित ग्रन्थ इस प्रकार हैं।– जयपुर वैभवम् , साहित्य वैभवम् , गोविन्द वैभवम् , गीतिवीथी , भारत वैभवम् , संस्कृत सुबोधिनी, संस्कृत सुधा, सुलभ संस्कृतम्, गीतगोविन्दम् आदि के अलावा कथा साहित्य में मनोवैज्ञानिक, विविध, हास्य, प्रतीकात्मक, प्रणय, सामाजिक, एवं ऐतिहासिक श्रेणियों के अंतर्गत लगभग 80 कहानियां प्रकाश में आई हैं। शास्त्री जी की लघु कथायें संस्कृत रत्नाकर 1904 से लेकर 1949 तक जयपुर से निकलती थी। शास्त्री जी ने इसका सम्पादन भी किया। भट्ट जी ने बहुत से सामाजिक समस्याओं व नारी जीवन की व्यवस्थाओं पर बहुत सी कहानियां लिखी जिनमें— दयनीया, विवशा, आनाद्रता, आबला आदि साथ ही फाल्गुन गोष्ठी, चम्प टुक:, मामध्यापनम् आदि व्यंग्य विनोद पूर्ण कथायें हैं।

इसी प्रकार 'करुणा कापोती' में बालिका की नादानी से बिल्ली एक कबूतर को खा जाती है, उसका मनोवैज्ञानिक वर्णन एवं चित्रण शास्त्री जी ने किया है। 'दानी दिनेश' में एक बच्चे द्वारा अपने प्राण प्रिय खिलौने को गरीब बच्चे को देने का वर्णन किया गया है। 'पश्यतोहर:' कहानी में ठग अंधविश्वासी व्यवसायिक को ठगने है। अत: सामाजिक कुरीति पर पड़ने वाले प्रभाव का वर्णन यहां किया गया है। इसी प्रकार 'विपशा समस्या' असमसाहसम्, अद्भुतफलम्, दीक्षा आदि शास्त्री जी की सौ से भी अधिक कहानियां प्राप्त होती हैं। जो अनेक विषयों पर आधारित विविध शैली व अनेक भाषाओं में एक नए युग का प्रतिनिधित्व करती हैं। आधुनिक संस्कृत साहित्य के कथा लेखन में विद्योदय, सूर्योदय एवं उद्यान पत्रिका, सहृदया, संस्कृत रत्नाकर, संस्कृत चंद्रिका, संस्कृत प्रतिभा आदि पत्रिकाओं का 20 वीं एवं 21 वीं शताब्दी में बहुत योगदान रहा।

4.4.3 देवर्षि कलानाथ शास्त्री

आधुनिक संस्कृत साहित्यम के प्रतिष्ठित जाने माने विद्वान, भाषाविद् कलानाथ शास्त्री जी का जन्मस जयपुर में 15 जुलाई सन् 1936 को भट्ट मथुरानाथ शास्त्री जी के यहॉ हुआ । कलानाथ शास्त्री

जी को राष्ट्रपति द्वारा वैदुष्य के लिए अलंकृत, केन्द्रीय साहित्य अकादमी, संस्कृत अकादमी आदि से पुरस्कृत, अनेक उपाधियों से सम्मानित किया गया हैं।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से संस्कृत साहित्य में साहित्याचार्य तथा राजस्थान विश्वविद्यालय से अंग्रेजी साहित्य में एम. ए. परीक्षा प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण की। आपने संस्कृत साहित्य का अध्ययन अपने विद्वान पिता श्री भट्टमथुरानाथ शास्त्री तथा वहाँ के शिखर विद्वानों म.म. पं. गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी, पं. पट्टाभिराम शास्त्री, आचार्य जगदीश शर्मा, आशुकवि पं. हरिशास्त्री आदि से किया। अंग्रेजी साहित्य के प्राध्यापक के रूप में आपने दशकों तक राजस्थान विश्वविद्यालय के विभिन्न महाविद्यालयों में अध्यापन कार्य किया। आपनें अंग्रेज़ी साहित्य के अलावा वेद, भारतीय दर्शन, भाषाशास्त्र आदि का गहन अध्ययन करते हुए बंगला, गुजराती, तेलुगु आदि लिपियों पर मौलिक शोधकार्य किया है। आप बचपन से ही संस्कृत के छन्दों के लेखन और गायन में प्रवीण रहे। आपनें संस्कृत साहित्य का अवगाहन करते हुए एक नए छन्द का निर्माण भी किया जिसका नाम पण्डित पद्मशास्त्री जी ने आप ही के नाम से 'कलाशालिनी' रखा। यह सम्पूर्ण संस्कृत जगत के लिए एक महान उपलब्धि रही है।

आपके द्वारा हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी भाषा और भारतीय संस्कृति विषयक अनेक ग्रंथ प्रकाशित हुए हैं जिनमें प्रमुख ग्रंथ निम्न हैं- 'जीवनस्य पृष्ठद्वयम्' (उपन्यास), आख्यानवल्लरी, (कथा संग्रह) 'नाट्यवल्लरी' (नाटक), 'सुधीजनवृत्तम्' (जीवनी संग्रह), कवितावल्लरी' (काव्य संग्रह), आधुनिक काल का संस्कृत गद्य साहित्य, मानक हिन्दी का स्वरुप, संस्कृत साहित्य का इतिहास,भारतीय संस्कृति-स्वरूप और सिद्धान्त, संस्कृति के वातायन, पोयट्री ऑफ जगन्नाथ पंडितराज, हॉराइज़न्स ऑफ़ संस्कृत आदि प्रमुख रहें हैं।

सन् 2002 में प्रकाशित इनकी 'कथानकवल्ली' में एक उपन्यास व पांच कथाओं का संकलन है। 'दिग्भ्रम:' कहानी युवाओं के लिए भ्रमित न होने का संदेश देती है तो 'अस्पृश्यता' कहानी में अस्पृश्यता का विरोध किया गया है। दम्भज्वकर: में नए नए बने प्रशासनिक सेवा में आए नवयुवक की कथा है जो धोती पहने अंग्रेजी प्रोफेसर की आलोचना करता है, परंतु बाद में उसे पता चलता है कि यह तो कमिश्नर के गुरु हैं जिसके नीचे वह काम करने जा रहा है।

कलानाथ जी की कथानववल्ली ही आख्यानवल्लरी नाम से कुछ परिवर्धन के साथ प्रकाशित हुई है। यह तीन भागों में विभक्त है। प्रथम में 'जीवनश्य पाथेयम्' नामक उपन्यास है। द्वितीय में दश लघुकथायें हैं तथा तृतीय भाग में ललित निबन्ध हैं। यह कृति साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित है। इसी में आह्वानम् शरणार्थी, आकृष्णेन रजसा, निर्णयनतु भवन्त एव शीर्षक के पांच कथाएं और जुड़ी है। दो कथाएं 'शत्रुमित्रे वा' तथा 'मर्यादा' है। 'निर्णयन्तु भवन्त एव' वृद्धों के निराश्रित होने की समस्या तथा 'शून्याथ आसन्दी' नायक सोचता ही रहा कि पास में बैठी लड़की मैं न प्रेम, न घृणा, न उत्सुकता कुछ भी नहीं लेकिन कोई नहीं जानता कि वह बचपन में ही नेत्र गवा चुकी है अतः वह पास बैठे युवक की उपस्थिति से अनजान है। 'आवाहनम्' में धूर्त तान्त्रिकों की, आकृष्णेन रजसा' में किशोर जीवन की चपलता तथा 'शरणार्थी' में बाढ़ से विस्थापितों की कथा है।

4.4.4 बिन्देश्वरी प्रसाद मिश्र

बिन्देश्वरी प्रसाद मिश्र जी का जन्म 18 मार्च 1956 में हुआ। मिश्रा जी ने सागर विश्वविद्यालय, सागर, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन तथा बनारस हिंदू विश्वविद्यालय वाराणसी में आचार्य पद को अलंकृत किया हैं। इनका 'सारस्वतसमुन्मेजष:' नामक कविता संग्रह प्रकाशित है तथा अनेक पत्रिकाओं में इनकी रचनाएं प्रकाशित होती रहती हैं। नवगीतविधा हिंदी के नवीन छंदों में इनहोंने ललित

रचनाएँ की हैं, लय, सौकुमार्य तथा रागात्मलकता इनके काव्य का वैशिष्ट्य है। इन्होंने नवगीत विधा में अनेक रचनाएं की हैं, जिनमें कहीं गहरा व्यंग्य, कहीं मनोवेदना तो कहीं सामाजिक अंतर्विरोध का उद्घाटन है। इनके दो काव्यमसंलन 'सारस्वतसमुन्मे ष:' तथा 'गीतिवल्लएरी' देववाणी परिषद् दिल्ली से प्रकाशित है।

4.4.5 अभिराज राजेन्द्र

अभिराज राजेन्द्र ने महाकाव्य, लोकगीत, गज़ल, कथा, काव्य, नाट्य, कहानी, निबन्ध, एकांकी, खण्डकाव्य, लघुकथायें आदि विद्याओं में विपुल साहित्य रचकर संस्कृत साहित्य भण्डार को अतिशय समृद्ध किया है। इनका जन्म जौनपुर (उ0प्र0) जनपद के द्रोणीपुर नामक ग्राम में 2 जनवरी 1943 को हुआ। पिता पं0 दुर्गाप्रसाद मिश्र तथा माता अभिराजी देवी थी। इलाहाबाद विश्वविद्यालय की एम0ए0 संस्कृत की परीक्षा में उन्होंने न केवल प्रथम स्थान प्राप्त किया अपितु सम्पूर्ण कला संकाय में प्रथम स्थान (स्वर्ण पदक) प्रदाप किया। 1967 ई0 में उन्होंने डी0फिल्0 की उपाधि भी प्राप्त किया। सन् 1966 में वे इलाहाबाद विश्वविद्यालय में संस्कृत के प्रवक्ता नियुक्त हुए। 1984 में रीडर बन गये। उदयन विश्वविद्यालय बालीद्वीप में वे विजिटिंग प्रोफेसर के रूप में कार्यरत रहे। शिमला विश्वविद्यालय में प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष का पद स्वीकार किया। अन्ततः वे डा0 सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी में वे कुलपति के पद पर आसीन हुए। आपको संस्कृत जगत् के समस्त सम्मान एवं पुरस्कार प्राप्त हो चुके हैं। यहाँ उनके समस्त कृतियों का उल्लेख करने में बहुत ही विस्तार हो जाएगा। प्रो0 राजेन्द्र का काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ 'अभिराजयशोभूषण' है जो पाँच उन्मेषों में विभक्त है। आधुनिक काव्य के प्रवाह में इनका योगदान कम करके नहीं आँका जा सकता है।

डॉ0 राजेंद्र मिश्र के तीन कथा संग्रह भी प्रकाशित हो चुके हैं इक्षुगन्धा, राङ्गडा और चित्रपर्णी। इनकी कथाओं में कुछ ऐतिहासिक कथाओं को छोड़कर शेष सभी वर्तमान जीवन की समस्याओं व यथार्थ से जुड़ी हैं।

(1) इक्षुगन्धा— इक्षुगन्धा डॉ. राजेंद्र मिश्र के प्रथम कथा संग्रह है। जो 1986 में इलाहाबाद से प्रकाशित हुआ तथा इस पर साहित्य अकादमी द्वारा उन्हें पुरस्कृत किया गया। इसमें कुल 8 कथायें संकलित हैं। इस संग्रह की कथा भग्नपञ्जर संस्कृत प्रतिभा में भी प्रकाशित है। इसकी नायिका विधवा होने के कारण जब समाज से उत्पीड़ित होने लगती है तो अपने प्रेमी से संबंध जोड़ लेती है।

इक्षुगन्धा में नायक का प्रेम जिस ग्रामीण कन्या से होता है, वह किसी और से ब्याह दी जाती है। संयोग से नायक कलेक्टर बनकर वही आ जाता है तथा विट्टी उसके यहां नौकरानी का काम करती है। अंत में नायक अपनी पत्नी प्रभावती को बताता है कि निर्धन होने के कारण विट्टी का विवाह उसके साथ नहीं हो सकता तथा वह अपने लड़के के लिए विट्टी की सुंदर, सुशील, निर्धन कन्या को मांग लेता है। इस प्रकार सभी कहानियां नारी समस्या पर आधारित हैं परंतु इन सभी का अंत सुखान्त है।

(2) रांगडा— रांगडा कथासंग्रह में नौ कहानियों का संग्रह है।

(3) चित्रपर्णी— चित्रपर्णी में 62 लघुकहानियों का संग्रह है।

4.4.6 प्रभु नाथ द्विवेदी

आधुनिक संस्कृत के उच्च शिखर पर प्रतिष्ठित आचार्य प्रभुनाथ द्विवेदी का जन्म 25 अगस्त 1947 ई.को मीरजापुर, उत्तरप्रदेश के भैसा (कछवा) ग्राम में हुआ था । इनके पिता का नाम श्री नन्दकिशोर द्विवेदी तथा माता का नाम श्रीमति रामकुमारी देवी था । बचपन से ही द्विवेदी जी का विशेष लगाव संस्कृत भाषा साहित्य से था। जिसके कारण स्नातक विज्ञान विषय से उत्तीर्ण होने के बाद भी इन्होंने संस्कृत विषय में स्नातकोत्तर और पी–एच .डी .की उपाधि प्राप्त कर महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ,वाराणसी, उ.प्र. में जनवरी 1978 सहायक आचार्य के पद पर न्यूक्त हो गए , यहीं सह आचार्य एवं आचार्य पद पर रहते हुए संकायाध्यक्ष जैसे महत्वपूर्ण पद का निर्वाह करते हुए जून 2010 ई. में सेवा निवृत्त हो गए लेकिन उनके उपरान्त भी वे संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी, शंकरशिक्षायतन, नई दिल्ली, विश्वभारती, शान्तिनिकेतन (प.ब.) कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र एवं रानी पद्मावतीतारायोगतंत्र आदर्श संस्कृत महाविद्यालय, शिवपुर, वाराणसी में मानद आचार्य के रूप में अध्यापन करते रहे ।

द्विवेदी जी के अध्यापन के सामान ही लेखन कार्य भी महत्त्वपूर्ण है । उन्होंने कथासंग्रह के रूप में श्वेतदुर्वा, कथाकमौदी, अंतरध्वनि , कनकलोचन, शालिवीथी आदि के साथ लगभग 60 ग्रन्थों का प्रणयन किया है । कोरोना महामारी पर भी इनके द्वारा कोरोनशतकम काव्य लिखा गया है । जिसमे 108 श्लोक है । यह काव्य विषेश रूप से कोरोना से बचाव तथा वैश्विक परिदृश्य के साथ ही राजनीतिक दृष्य को भी उपस्थित करता है । 2018 ई. में इनके द्वारा स्वच्छताशतकम काव्य की रचना की गयी जिसमे सम्पूर्ण भारत को स्वच्छ रखने की कमना की गयी है । इनके द्वारा इसके अतरिक्त 229 शोध निबन्ध, 245 ललित निबन्ध भी द्विवेदी जी के प्रकाशित हैं ।

प्रभु नाथ द्विवेदी जी के दो कथा संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। कथाकौमुदी 1988 में तथा श्वेतदुर्वा 1997 में प्रकाशित हो चुके हैं। कथाकौमुदी में 11 कथायें तथा श्वेतदूर्वा में 21 कथायें संकलित हैं जो भिन्न भिन्न परिस्थितियों, मनोदशा व कार्य व्यापारों को दर्शाती हैं।

(1) **कथाकौमुदी**— कथाकौमुदी में गंगास्नानम्, मतदानम, वरान्वेषणं, दूरभाष:, योगीराज: यौतुक-कौतुकम् आदि प्रसिद्ध कहानियां है। इसमें वर्तमान जीवन के यथार्थ चित्रण हैं।

(2) **श्वेतदुर्वा**— श्वेतदुर्वा में किशोरवय की कोमल भावनाओं का चित्रण है। कायाकल्प, अतिथि: कर्म विपाक, अलातचक्रम, नवावतार, श्रवणकुमार आदि कथाओं जीवन के विभिन्न संबंधों तथा समस्याओं को कुशलता से चित्रित करती हैं। इनकी कथाओं में दहेज की समस्या, वर्तमान चुनाव प्रक्रिया, प्रदूषण की समस्या, जीवन की जटिलताओं, दुखों व अभावों का वर्णन है।

डा. प्रभुनाथ द्विवेदी के साहित्यिक अवदान पर विभिन्न संस्थाओं से 34 पुरस्कार दिए गये है जिनमें राष्ट्रपति पुरस्कार साहित्य अकादमी पुरस्कार बाल्मिकीय पुरस्कार, बाणभट्ट पुरस्कार, कालिदास पुरस्कार, श्रीरामानंदचार्य पुरस्कार मुख्य हैं । 15 नवम्बर , 2021 को अपने नश्वर शारीर कि छोड़कर शिवसायुज्य के लिए अनन्त पथ के गामी हो गए |

4.4.7 राधावल्लभ त्रिपाठी

राधावल्लभ त्रिपाठी का जन्म 15 फ़रवरी 1949 को मध्य प्रदेश के राजगढ़ ज़िले में हुआ। उनके पिता संस्कृत और हिंदी के मर्मज्ञ और कवि-समीक्षक थे। उन्होंने सागर विश्वविद्यालय से संस्कृत

कवियों के व्यक्तित्व के विकास विषय पर पीएच.डी. और प्राचीन बारात में रंगमंच के उद्गम एवं विकास विषय पर डी.लिट्. की उपाधि प्राप्त की। वर्ष 1970 से उन्होंने अध्यापन कार्य शुरू किया और इस यात्रा में शोध अध्येता से आचार्य तक और अधिष्ठाता से विभागाध्यक्ष तक विभिन्न भूमिकाओं का निर्वहन किया। उन्होंने शिल्पाकार्न विश्वविद्यालय, बैंकॉक एवं कोलंबिया विश्वविद्यालय, न्यूयॉर्क में संस्कृत के अतिथि आचार्य और राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान में कुलपति के रूप में भी सेवा दी है। इसके अतिरिक्त उन्होंने देश-विदेश में आयोजित विभिन्न संस्कृत सम्मेलनों में भी भागीदारी की है।

लेखन की प्रवृत्ति उनमें किशोर वय से ही उभरने लगी थी और 6 दशकों में विस्तृत अपनी रचना-यात्रा में गद्य, पद्य, नाटक, कथा, उपाख्यान, उपन्यास, राग-काव्य, अलंकारशास्त्र, समीक्षा, शोध, अनुवाद जैसी विभिन्न विधाओं में विपुल योगदान किया है। संस्कृत, हिंदी और अँग्रेज़ी में उनकी सौ से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हैं जिनमें 'संस्कृत कविता की लोकधर्मी परंपरा', 'काव्यशास्त्र और काव्य', 'लेक्चर्स ऑन नाट्यशास्त्र विश्वकोश' (चार खंड) आदि विशेष चर्चित रहे हैं।

'सन्धानम्', 'लहरीदशकम्', 'सम्प्लवः', 'समष्टि' आदि उनके प्रमुख संस्कृत काव्य-संग्रह हैं। इसके अतिरिक्त संस्कृत में उनके तीन मौलिक उपन्यास, दो कहानी-संग्रह, तीन पूर्णाकार नाटक तथा एक एकांकी-संग्रह भी प्रकाशित हैं जिनमें 'प्रेमपीयूषम्', 'प्रेक्षणसप्तकम्', 'नाट्यमण्डपम्', 'विक्रमचरितम्', 'अभिनवशुकसारिका' आदि शामिल हैं। 'दमयन्ती' एवं 'भुवनदीप' (नाटक), 'पूर्वरंग', 'पागल हाथी' एवं 'जो मिटती नहीं है' (कहानी-संग्रह), तथा 'सत्रन्त' एवं 'विक्रमादित्य कथा' (उपन्यास) हिंदी में रचित उनकी मूल रचनाएँ हैं। उन्होंने संस्कृत की करीब दो दर्जन कृतियों के हिंदी अनुवाद भी किए हैं जिनमें 'वेदांतसार', 'कुमारसंभवम्', 'कुंदमाला', 'वेणीसंहार' आदि शामिल हैं। उन्होंने 'कामसूत्र' का अँग्रेज़ी अनुवाद किया है और उसपर टीका लिखी है। 'नवस्पंदः', 'आयाति', 'षोडसी', 'शुकसारिका' आदि उनके द्वारा संपादित कृतियाँ हैं। समय-समय पर विभिन्न राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय विद्वत-सम्मेलनों के आयोजनों में उनकी मुखर भूमिका रही है और उन्होंने नाट्य परिषद्, मुक्तस्वाध्यायपीठ, शास्त्रानुशीलनकेंद्र, पांडुलिपि संग्रहालय आदि अनेक अकादमिक संस्थाओं, अध्ययन केंद्रों एवं परिषदों की स्थापना में योगदान किया है।

उन्हें साहित्यिक-सांस्कृतिक योगदान के लिए साहित्य अकादेमी पुरस्कार, शंकर पुरस्कार, मीरा सम्मान सहित विभिन्न संस्थाओं एवं अकादमियों के तीन दर्जन से अधिक पुरस्कार एवं प्रशस्तियाँ प्रदान की गई हैं।

4.4.8 इच्छा राम द्विवेदी

प्रो० द्विवेदी उत्तरप्रदेश के जनपद इटावा के यमुना तटवर्त्ती ग्राम इकनौर (एकचक्रापुरी) में वैदिक परंपरानुयायी, ब्राह्मण कुल में आचार्य श्री लालबिहारी द्विवेदी एवं उनकी धर्मपत्नी श्रीमती कृष्णादेवी के यहां 15/11/1961 को श्री इच्छाराम द्विवेदी का जन्म हुआ। प्रपितामह आचार्यवर्य श्री कालिकाप्रसाद द्विवेदी वैयाकरण, पितामह आचार्य श्री वेणीमाधव द्विवेदी, वैयाकरण तथा पिताश्री लालबिहारी द्विवेदी व्याकरण, ज्योतिष, कर्मकाण्ड, धर्मशास्त्र एवं पुराणों के विश्रुत विद्वान् थे जिन्हें सन्1974 में भारतगणराज्य के तत्कालीन महामहिम राष्ट्रपति श्री फखरुद्दीन अली अहमद द्वारा राष्ट्रपति पुरस्कार से सम्मानित किया गया । ऐसे विद्यावंश में श्री इच्छाराम द्विवेदी की शिक्षादीक्षा संपन्न हुई। नव्यव्याकरण, साहित्य, धर्मशास्त्र, पुराणेतिहास, दर्शनशास्त्र, भारतीय संस्कृति और संस्कृत भाषा के तलस्पर्शी अध्ययन के साथ ही अंग्रेजी, उर्दू और हिन्दी साहित्य में धाराप्रवाह लेखन,भाषण,साहित्यसृजन, तथा अनुसंधान श्री द्विवेदी का व्यसन रहा है । 1971 से 1983 तक

अध्ययन पूर्ण करने के पश्चात् श्री एकरसानन्द आदर्श संस्कृत महाविद्यालय मैनपुरी उ०प्र० में 1 सितम्बर 1983 से 7 अगस्त 2000 ई० तक व्याख्याता, वरिष्ठ व्याख्याता, एवं पुराणेतिहास विभागाध्यक्ष के रूप में सेवाऐं प्रदान की। तदनन्तर 8/8/2000 से 9.03.2019तक प्रो० द्विवेदी प्रवाचक, प्रोफेसर, विभागाध्यक्ष तथा संकायप्रमुख के रूप में श्री लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीठ मानित विश्व विद्यालय नव देहली मे सेवाऐं दे रहे थे। अभी वे वरिष्ठ प्रोफेसर के रूप में इसी संस्था में कार्यरत थे। बहुमुखी प्रतिभा के धनी प्रो० द्विवेदी अपनी किशोरावस्था से ही साहित्य सृजन में संलग्न रहे हैं । इनकी प्रथम रचना 1973 में इटावा से छपने वाले दैनिक समाचारपत्र "दिनरात" में छपी थी जो ब्रजभाषा में छन्दोबद्ध शारदा स्तवन के रूप में थी।1975 में आपके दो हिन्दी उपन्यास गीता तथा टूटती रूढियाँ नाम से धारावाहिक रूप में प्रकाशित हुए। 1974 में अपने पिता के अस्वस्थ होने से द्विवेदी जी को श्रीमदभागवतम् के व्यासपीठ पर उपस्थित होना पडा ।आज तक वे संपूर्ण भारत एवं विदेशों में श्रीमद्भागवतम् के 500 से अधिक साप्ताहिक व्याख्यान दे चुके हैं। इसके अतिरिक्त पुराणेतिहास के मर्मज्ञ विद्वान् होने के कारण वेदव्यास.कृत अष्टादश महापुराणों की कथायें संपन्न कर चुके हैं । उनके प्रवचन में एक सम्मोहन रहता है ।उनकी भाषा, शैली, भावप्रवणता, व्याख्या, श्रोताओं को मंत्रमुग्ध कर देती है । आज देश विदेश में उनके लाखों प्रशंसक हैं ।

एक साहित्यकार के रूप में प्रो० द्विवेदी अब तक पचासी ग्रन्थों की रचना कर चुके हैं । खण्ड काव्य, महाकाव्य, दूतकाव्य, गीत संग्रह, अन्योक्ति, स्तोत्र, लघुकथा,कथा, हास्य व्यंग्य चम्पूकाव्य, उपन्यास, समीक्षा, निबन्ध ,जैसी सभी विधाओं में संस्कृत में 55,हिन्दी में 15 उर्दू में 7 तथा अंग्रेजी में 4 पुस्तकें लिख चुके हैं । इनके अतिरिक्त ब्रह्मज्योति, सुरभारती, वैशारदी, पुराणपीयूषम् ,आचार्यश्री अभिनन्दनग्रन्थ, देववाणीसुवास,तथा हीरकप्राभृतकम् जैसे विपुलकाय ग्रन्थों का संपादन कर चुके हैं।उनकी प्रमुख रचनाओं में दूतप्रतिवचनम्, मित्रदूतम्, वामनचरित महाकाव्यम्, सुदामचरितमहाकाव्यम्, अन्योक्तिरत्नावली, गीतमन्दाकिनी, समुज्ज्वला, प्रश्नचिह्नम्, तंत्रभागवतम्, प्रणवभागवतम्, कर्मसंजीवनी, धर्मसंजीवनीनित्यसंजीवनी, द्वादशज्योतिर्लिंगस्तोत्रम्, रामार्चामाहात्म्यम्, महागणपति वरिवस्यारहस्यम्, जयभीमसेनशिव,पंचदेवोपासनारहस्यम्, हा हा ,एकादशी, वोढा, ओ महाकवि!, प्रेरणा के रंग, समुद्र मन्थन, सोनमछरी, ओ मछेरे , प्रतिध्वनि, निर्भया, तुम हो या नहीं हो , मृत्यु मेरी सहचरी है, शिवेतरक्षतये, जैसी रचनाऐं प्रमुख हैं।

4.4.9 अन्य प्रमुख

पण्डित क्षमा राव—

पण्डित क्षमा राव जी द्वारा रचित 'कथापंचकम्' मुंबई से 1933 में प्रकाशित हुई। इस कथा संग्रह की विशेषता है कि यह अनुष्टुप छंद में लिखा गया है। सामान्यतः कथायें गद्य में ही लिखी जाती हैं। इस संकलन में 'बलीकोद्वाह सम्पुटम् कहानी में विधवा की दुर्दशा वर्णित है। इनकी कथाओं में सामाजिक कुरीतियां तथा विवस, बन्यासम्प तथा परित्यक्ता महिलाओं की दु:खभरी गाथा है।

कथामुक्तावली 1994 मुंबई से प्रकाशित है। इनमें 15 गद्य कथायें संकलित हैं। इनमें अधिकतर कथायें दु:खान्त हैं। 'हैम समाधि:' में प्रेम प्रेमी प्रेमिका का मिलन अंत में मृत्यु में ही दिखाया गया है। 'प्रेमरसोद्रेक:' में एक पिता अपने बच्चे को देखने के लिए तरस जाता है। 'मत्स्यजीव्येव केवलम्' में एक मां अपने बिछड़े पुत्र को पहचान लेती है किंतु वह सन्यासी के रूप में उसके सामने आता है। मायाजालम् चार ऐसी महिलाएं की कहानी है जो अपने पति और प्रेमी द्वारा परित्यक्ता है। डॉ0 वनमाली विश्वाल द्वारा अनुवादित रत्ना बासु में एक लेख में पण्डित क्षमा राव की कथाओं के विषय में कहा गया है कि—'कुल

मिलाकर भाषा शैली तथा विषय विन्यास की दृष्टि से पण्डित क्षमा राव की कथाओं को सही अर्थ में आधुनिक संस्कृत लोककथा की संज्ञा दी जा सकती है'।

डॉ0 बनमाली विश्वाल—

डॉ0 बनमाली विश्वाल आधुनिक संस्कृत कथा साहित्य के सर्वश्रेष्ठ कथाकार हैं। उनके चार कथा संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। निरवस्वन, बुभुक्षा, जगन्नाथचरितम्, जिजीविषा।

निरवस्वचन:—यह इनका प्रथम कथा संग्रह है। यह पद्मजा प्रकाशन, इलाहाबाद से 1998 में प्रकाशित हुआ है। इसमें 31 कथायें संकलित हैं। निरवस्वहन एक मूक व बधिर बालिका की कहानी है। कभी-कभी मौन रहकर भी व्यक्ति बहुत कुछ कह जाता है ठीक उसी प्रकार कम शब्दों में बनमाली जी ने जीवन की विसंगतियों पर तीखे प्रहार किये हैं।

बुभुक्षा—यह इनका द्वितीय कथा संग्रह है। यह इलाहाबाद से 2001 में प्रकाशित हुआ। इसमें 24 कथायें संकलित है। बुभुक्षा, अपूर्वपारिश्रमिक, दुश्चरित्रा, दीपावली आदि कथाओं में बेरोजगारी, बालश्रम तथा आम आदमियों के संघर्ष की कथायें हैं।

जगन्नाथचरितम्—यह इनका तीसरा कथा संग्रह है जो 2003 में संस्कृत प्रचार परिषद आरा से प्रकाशित हुआ। इसमें जगन्नाथ संस्कृति पर आधारित छोटी-छोटी कथायें हैं जो बुभुक्षा एवं निरवस्वतन की कथाओं से भिन्न है।

जिजिविषा—कथा संग्रह पद्यजा प्रकाशन, इलाहाबाद से ही 2006 में प्रकाशित हुआ है। इसमें जीवन की विष्म ताओं व अभावों के बीच जीने की अदम्य लालसा को दिखाया गया है।

4.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप जान चुके हैं कि आधुनिक संस्कृत लघु कथा आज अपने नए रूप में हमारे सामने हैं। जैसा कि लघु शब्द से ही परिभाषित हो रहा है कि कम समय में साहित्य के मूल को जनमानस के सम्मुख रखना साथ ही जीवन के लिए नए आयामों को तलाशना भी है। वर्तमान में लघु कथा आपने विभिन्न स्वरूपों में हमारे समक्ष है। जिसमें बृहद वर्णन न होकर एक देश का वर्णन होता है।

संस्कृत की सर्वप्रथम लघुकथा 'रत्नाष्टक' को माना जाता है। इसके बाद ही कथा साहित्य प्रकाश में आया। आधुनिक संस्कृत लघुकथा के विकास में पत्र-पत्रिकाओं का विशेष योगदान रहा है। जिसमें संस्कृत भवितव्यम्, संस्कृत रत्नाकर, भारती, कथासरित आदि पत्रिकाओं का विशेष योगदान है। वर्तमान में लघु कथा अपने पूर्ण विकास क्रम में है। जिसमें भट्ट मथुरा नाथ शास्त्री, अभिराज राजेन्द्र, प्रभु नाथ द्विवेदी, राधावल्लभ त्रिपाठी, गिरधर शर्मा चतुर्वेदी, बिन्देश्वरी प्रसाद मिश्र, देवर्षि कलानाथ शास्त्री, इच्छा राम आदि कथाकारों का प्रमुख योगदान है।

वर्तमान में लघु कथाओं में जीवन के विभिन्न संघर्षों, समस्याओं, विषमताओं का वर्णन देखने को मिलता है। उक्त सभी विषयों को जानने का अवसर आपको इस इकाई के अध्ययन से प्राप्त होगा।

4.6 शब्दावली

शब्द	अर्थ
गद्य	छन्द रहित
पद्य	नियमों में बद्ध
कथा	कल्पित कथा
आख्यायिका	इतिहास परक

लघु कथा	जिसमें जीवन के एक देश का वर्णन हो
टुप् कथा	अत्यंत छोटी कथा
स्पश	जासूसी कथा
चित्र कथा	जिसमें कहानी के साथ चित्र भी हो
पुट् कथा	टुप् कथा से बड़ी
कथानिका	कहानी
दीर्घ कथा	कथनिका व उपन्यास के बीच की कथा

4.7 अभ्यासार्थ प्रश्न- उत्तर

1. संस्कृत कथा को चार भागों में किसने विभक्त किया है।
   क- डॉ. राजेन्द्र मिश्र
   ख- डॉ. राधा वल्लभ त्रिपाठी
   ग- डॉ. अम्बिकादत्त व्यास
   घ- डॉ. कलानाथ शास्त्री
2. संस्कृत का प्रथम लघुकथा संग्रह है।
   क- कथानकवल्ली
   ख- कथाद्वादशी
   ग- रत्नाष्टक
   घ- अभिनवशुकरारिका
3. पद्य में कथा लेखन किया ।
   क- अम्बिकादत्त व्यास
   ख- पण्डिता क्षमा राव
   ग- नलिनी शुक्ला
   घ- कालानाथ शास्त्री
4. लघुकथा किस को समान मानी गयी है।
   क- कथानिका
   ख- खण्डकथा
   ग- सकल कथा
   घ- उपन्यास

अभ्यासार्थ उत्तर:-

1. क
2. ग
3. ग
4. ख

4.8 उपयोगी पुस्तकें

1. संस्कृत वाङमय का वृहद् इतिहास सप्तम् खण्ड आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास । प्रधान सम्पादक, आचार्य श्री बलदेव उपाध्याय सम्पादक डा0 जगन्नाथ पाठक, प्रकाशक उ0प्र0 संस्कृत संस्थान लखनऊ (2000 ई0)

2. आधुनिक संस्कृत साहित्य दशा एवं दिशा- डा0 मंजुलता शर्मा परिमल पब्लिकेशन्स नई दिल्ली।

3. आधुनिक संस्कृत साहित्य डा0 राधा बल्लभ त्रिपाठी (युवराज पब्लिकेशन्स मथुरा रोड आगरा)।

4. सस्कृत साहित्य का इतिहास डा0 कलानाथ शास्त्री ,जयपुर ।

4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. लघु कथा के विकास पर निबन्ध लिखिए ।

2. वर्तमान लघु कथा के भेदों को बतलाइए।

3. आधुनिक संस्कृत लघु कथा की परिभाषा एवं भेद बताइए।

इकाई- 05 संस्कृत साहित्य की आधुनिक विधाएं

गजल, आधुनिक छन्द, सानेट, हाईको, लोकगीत, युगबोधपरक कविताएं, रेडियो रूपक

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 संस्कृत साहित्य की आधुनिक विधाएं
    5.3.1 संस्कृत साहित्य की आधुनिक विधाओं का सामान्य परिचय
5.4 प्रमुख विधाएं
5.5 गज़ल
    5.5.1 - गज़ल का स्वरूप (परिभाषा)
    5.5.2 - गज़ल की संरचना
    5.5.3 - प्रमुख संस्कृत गज़लकार
5.6 आधुनिक छन्द
    5.6.1 सॉनेट
    5.6.2 हाइकु
5.7 लोकगीत
5.8 युगबोधपरक कविताएं
5.9 रेडियो रूपक
5.10 सारांश
5.11 शब्दावली
5.12 अभ्यासार्थ प्रश्न- उत्तर
5.13 उपयोगी पुस्तकें
5.14 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

संस्कृत भाषा में साहित्य सृजन की धारा वैदिक काल से लेकर आधुनिक काल तक निरन्तरता के साथ प्रवहमान है। वैदिक काल से लेकर आज तक सतत गतिशील रहने वाला एवं वैश्विक जन समूह को सकारात्मक रूप में प्रभावित करने वाला यह संस्कृत साहित्य सम्पूर्ण साहित्यों मे प्राचीन, अविच्छिन्न व्यापक और कलापूर्ण होने के कारण अद्वितीय है। मध्यकालीन यवन साम्राज्य की विद्वेषपूर्ण व संकीर्ण मनोवृत्ति के कारण संस्कृत की साहित्य संपदा को नुकसान हुआ पर फिर भी साहित्य का अविराम निर्माण होता रहा है।

उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ काल से संस्कृत साहित्य रचना में एक नवीनता व परिर्वतन दिखायी पड़ता है। काव्य रचना की शैली, विषयवस्तु एवं काव्यनिर्मिति के प्रयोजन की दृष्टि से एक नवोन्मेष दृष्टि में आता है और लेखन पद्धति में अधिक व्यापकता और स्वाभाविकता का समावेश दिखाई पड़ता है। ''भारतपारिजातम्'' नामक महाकाव्य में प्रणेता भगवदाचार्य ने 'संस्कृत के प्रति मोह' को काव्य रचना का प्रयोजन बताया है। श्रीपाद हरसूरकर ने श्रीशिखगुरुचरितामृतम् की प्रस्तावना में लोक जाग्रति को प्रयोजन बताया है। इसी तरह यशःप्राप्ति, अर्थप्राप्ति से आगे बढ़कर समाजहित, छात्रहित, प्रेरणा, संस्कृति व संस्कृत की सेवा काव्य रचना मे नये प्रयोजन स्थापित किये गए हैं।

5.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप -

1. संस्कृत में आधुनिक रचनाओं के स्वरूप को जान सकेगें।
2. आधुनिक संस्कृत रचना में छन्दों को जान सकेगें।
3. संस्कृत गज़लो से परिचित हो सकेगें।
4. आधुनिक संस्कृत रचना के नवीन काव्य प्रयोजन जान सकेगें।
5. वैदेशिक छन्दों में संस्कृत साहित्य रचना से परिचित हो सकेगें।

5.3 संस्कृत साहित्य की आधुनिक विधाएं

5.3.1 संस्कृत साहित्य की आधुनिक विधाओं का सामान्य परिचय

संस्कृत साहित्य रचना परम्परा के आधुनिक कालखण्ड में विविध नूतन विधाओं के आविर्भाव व रूपान्तरित विधाओं के प्रयोग के साथ यह परम्परा निरन्तर पल्लवित व पुष्पित हो रही है। समृद्ध शब्दकोश एवं परम वैज्ञानिक व्याकरण होने से अत्यन्त विश्वसनीय संस्कृत भाषा प्राचीन शैली और भावबोध परम रचनाओं सहित युगानुकूल नवोन्मेशी रचनाओं की नूतन विधाओं में सर्जना के अप्रतिम अवसर प्रदान करती है। आधुनिक कालखण्ड में भी निरन्तर नवीन शैली की श्रेष्ठ रचनाएं विशालतम शब्दकोश वाली संस्कृत भाषा की अद्भुत सृजन शक्ति व जीवन्तता का बोध कराती है। आधुनिक संस्कृत साहित्य रचना में प्राचीन छन्दों के साथ साथ नये छंद विधान एवं वैदेशिक छंदो का अनुकरण भी दिखाई पड़ता है। संस्कृत रचनाकारों मे छन्दोमुक्त नवकाव्य रचना के प्रति आकर्षण बड़ा है।

5.4 प्रमुख विधाएं

वस्तुतः अमरवाणी संस्कृत आदिकाल से ही साधना, निष्ठा एवं तपश्चर्या की भाषा रही है। संस्कृत में रचना धर्मिता की तापस प्रकृति के कारण ही इतिहास के सभी काल खण्डों में उसका प्रवाह

निरन्तर बना रहा है। संस्कृत रचना की प्रमुख आधुनिक विधाएं आत्मकथा, जीवनी, यात्रावृत्त, गज़ल, कव्वाली, गीतियां, उपन्यास, लघुकथा, हास्यकणिका, मुक्तककाव्य, रेडियो रूपक, सॉनेट, हाइकु, तान्का, सीजो आदि हैं।

5.5 गज़ल

भाषा और धरोहर का अनुपम मिश्रण संस्कृत की अद्वितीय विशेषता है। आधुनिक संस्कृत साहित्य मात्रा, विषय वैविध्य तथा विधा बाहुल्य के स्तर पर अन्य किसी भी भारतीय भाषा के समकक्ष है। संस्कृत कवियों ने नए नए प्रयोग कर पौराणिक मिथकों को पुनर्नवा रूप में प्रस्तुत कर संस्कृत की संजीवनी शक्ति को स्थापित किया है। संस्कृत गज़ल का एक समृद्ध परिदृश्य प्राप्त होता है। परन्तु गज़ल लोकधर्मी प्रयोग नहीं है यह आंचलिक न होकर वैदेशिक छन्द है। एवं गज़ल परम्परागत संस्कृत छन्दशास्त्र से इतर अस्तित्व लिये हुये है आधुनिक संस्कृत काव्य में गज़ल की एक सुदीर्घ परम्परा दिखाई दे रही है। गज़ल मूलतः अरबी शब्द है। काव्य विधा के रूप में गज़ल शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम ईरानवासी रौदकी (840 - 940) ने किया। कालांतर में फारसी भाषा में इस विधा का आगमन हुआ जो बाद में उर्दू की मुख्य साहित्य विधाके रूप में प्रसिद्ध हुई। यह अरवी साहित्य की सुप्रसिद्ध व लोकप्रिय काव्यविधा है। जो बाद में फारसी, उर्दू, हिन्दी, नेपाली और अब संस्कृत साहित्य में भी अत्यन्त लोकप्रिय हो रही है। ईरानी और भारतीय संगीत के सम्मिश्रण से इस विधा को गाने के लिए संगीत की अलग शैली निर्मित हुई।

5.5.1 - गज़ल का स्वरूप (परिभाषा)

गज़ल का सर्वसाधारण अर्थ प्रेमिका से बातचीत का माध्यम लिया जाता है। उर्दू के प्रसिद्ध साहित्यकार स्वर्गीय रघुपतिसहाय फिराक गोरखपुरी के अनुसार दर्द में निकले करुण स्वर को गज़ल कहते हैं। उनके शब्दो में **'विवशता का दिव्यतम रूप में प्रगट होना, स्वर का करुणतम हो जाना ही गज़ल का आदर्श है।'**

अंग्रेजों के शासनकाल के समय जयपुर के प्रसिद्ध विद्वान्, फारसी एवं संस्कृत दोनों भाषाओं के श्रेष्ठ कवि महामहोपाध्याय भट्ट मथुरानाथ शास्त्री ने गज़ल गीत को फारसी गज़लकारों की तरह ही संस्कृतभाषा में भी प्रतिष्ठित किया। अतः संस्कृत गज़लों के पहले रचनाकार भट्ट मथुरानाथ शास्त्री जी माने जाते हैं। तदनन्तर संस्कृत की गज़ल परम्परा को विकसित करने में आचार्य बच्चूलाल अवस्थी का नाम अग्रगण्य है। मुगलवंश के अन्तिम बादशाह बहादुरशाह जफर के शासनकाल में मिर्जा गालिब नाम के एक महान कवि थे जिन्हें गज़ल का बाहशाह कहा जाता है। मिर्जा गालिब की परम्परा में मीर आदि प्रसिद्ध गज़लकार हुए जिन्होंने फारसी से समानता रखने वाली उर्दू भाषा में गज़लें कीं। उर्दूभाषा की यही गज़ल परम्परा बीसवीं सदी के आरम्भ में भट्ट मथुरानाथ शास्त्री जी द्वारा संस्कृतभाषा में भी प्रचलित हुई। शास्त्री जी के साहित्यवैभवम् तथा गीतिवीथी नाम से प्रकाशित दो काव्य संग्रहों में लगभग 22 बहरों का प्रयोग करते हुए रची गई अनेकों गज़ल गीतियां संकलित हैं। संस्कृत में इस गज़ल परम्परा को विशेषरूप से आचार्य बच्चूलाल अवस्थी ने आगे बड़ाया। सहृदय मन को अभिव्यक्त करने वाली करुणतम रचना होने के कारण ही अभिराजराजेन्द्र मिश्र ने इस विधा का संस्कृत नामकरण गलज्जला या गलज्जलिका किया। ''अभिराजयशोभूषणम्'' नामक काव्य लक्षण ग्रन्थ में गज़ल का लक्षण प्रस्तुत करते हुए कहा- गज़ल नामक गीति सम्वेदना से ओत प्रोत होती है जिसमें प्रेम की गंभीरता तथा नैष्ठिकता वर्णित होती है। प्रो. मिश्र ने गज़ल का गलज्जलिका नामकरण भी किया है नेत्र जल की वृष्टि कराने के कारण इस गीति

को गलज्जलिका कहते हैं। आचार्य मिश्र जी ने इस बात का उल्लेख अपनी कृति वाग्वधूटी में करते हुए कहा कि- सर्वप्रथम मैंने ही गज़लगीति के लिए गलज्जलिका शब्द का प्रयोग किया है।

5.5.2 - गज़ल की संरचना(मतला, मक्ता, शेर)

सामान्यभाषा में जिसे मुखड़ा कहा जाता है गज़ल का वह प्रारम्भिक युगल वाक्य फारसी में मतला कहा जाता है। और यह मूल भाव को प्रकाशित करता है। अन्तिम बन्ध को मक्ता कहते हैं। मतला व मक्ता के मध्य आने वाले बन्ध शेर कहलाते हैं। जो मूलभाव के पोषक अथवा भिन्न अभिप्रायों के प्रकाशक हो सकते हैं। संस्कृत निष्ठ संरघटना में इसे मतला को आरम्भिका, शेर को मध्यिका, और मक्ता को अन्तिका कहते हैं। इस प्रकार मतला आदि से युक्त फारसी भाषा की गज़लगीति ही संस्कृतनिष्ठ आरम्भिका, मध्यिका, अन्तिका से सुशोभित गलज्जलिका है।

संस्कृत कविता की तरह अक्षर विस्तार की जो स्थिति गणों से प्रदर्शित होती है उसी तरह गज़ल की भी एक सुन्दर गण व्यवस्था है जिसे बहर कहते हैं। इस गीति विधा में नाना प्रकार का बन्ध विस्तर दिखाई पड़ता है। इसको प्रदर्शित करने लिए फारसी में बहर शब्द का प्रयोग किया जाता है। गज़ल गीति में कहीं छोटी तो कहीं बड़ी बहर दिखाई पड़ती हैं जो गज़लकारों की क्षमता की परिचायक होती हैं। यह सुनिश्चित है कि किस बहर में कौन सा गणक्रम प्रयोग में लाया जायेगा। संस्कृत छन्दशास्त्र में गणों के विस्तार का जैसा क्रम वार्णिक छन्दों में एक अक्षर से प्रारम्भ होकर 26 अक्षरों जैसा होता है उसी तरह बहर में विस्तारक्रम में अगणित वृत्त जन्म लेते हैं।

5.5.3 - प्रमुख संस्कृत गज़लकार

संस्कृत साहित्य में गज़ल के प्रवर्तक के रूप में महामहोपाध्याय भट्ट मथुरानाथ शास्त्री का नाम अग्रगण्य है। अनेक बहरों में गज़ल रचना करते हुए उन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि गज़ल किसी भाषा विशेष का एकाधिकार नहीं है अपितु यह एक ऐसा शिल्प है जो भावात्मक सम्वेदना की अभिव्यक्ति का सफल सन्धान करता। भट्ट मथुरानाथ शास्त्री ने ब्रज भाषा के दोहा, सोरठा, कवित्त सवैया, घनाक्षरी का संस्कृत भाषा में प्रयोग किया है इसके अतिरिक्त गज़ल को फारसी गज़लकारों जैसी प्रतिष्ठा के साथ संस्कृत में प्रणीत किया। भट्ट जी का गज़ल लेखन के प्रति जो दृष्टिकोण था उसमें उनकी शास्त्रीय दृष्टि और विधिवत सैद्धान्तिक प्रक्रिया अनुस्यूत थी। इन विधाओं के व्यापक फलक पर संस्कृत कविता को स्थापित करने के लिये भट्ट जी ने सार्थक प्रयत्न किये जिससे संस्कृत भाषा को युगानुरूप और सरल तरल आलोक में प्रस्तुत किया जा सके। उन्होंने अपने विशाल मुक्तक संकलन 'साहित्यवैभवम्' में 'उर्दू छन्दासि' शीर्षक अध्याय में छोटी-बड़ी 19 बहरों के नाम, लक्षण देकर स्वनिर्मित गज़लों को उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया। इन विविध भावभूमियों, विभिन्न छन्दों और शैलियों की गज़लों में कव्वालियाँ भी हैं, नात भी, प्रेम गीतियाँ हैं, नीति उपदेशात्मकगीतियाँ भी, युगीन विद्रूपताओं पर प्रहार भी हैं और क्रान्ति का आह्वान भी। उर्दू शैली की उनकी एक छोटी बहर की गज़ल दृष्टव्य है

रतिविगमोऽद्य मानसे कोऽयम्
अवमनुते मुधैव लोकोऽयम्
विरहकृशं विलोक्य मामाह
न परिचिनोमि वर्तते कोऽयम्?
अयि भिषजो! मुधा निदानं वः
दुरवगमो ममाऽस्ति रोगोऽयम् (गीतिवीथी - 56/30)

यहाँ विरहावस्था तो पूर्णतः उर्दू भावभूमि की है परन्तु बिम्ब भारतीय संस्कृति से जुड़े हुये हैं। इसी प्रकार निर्ममता का उलाहना और मन की पीड़ा को न समझने की अनुदारता को व्यक्त करती हुई

वस्तुतः इस कालखण्ड के बाद भट्ट जी की ही शैली में गिरिधर शर्मा नवरत्न, रामनाथ प्रणयी, जानकी वल्लभ शास्त्री, हरिशास्त्री आदि कवियों ने इस विधा को पल्लवित एवं पुष्पित किया, तदनन्तर पं० बच्चूलाल अवस्थी ने व्याकरण भाषा में सही वजन और चलन की गजलें लिखकर संस्कृत पाठकों को चमत्कृत कर दिया उनकी गजलों में संस्कृत भाषा की प्रौढ़ता के साथ-साथ गज़ल की नजाकत भी विद्यमान है। उन्होंने अपनी रचना प्रतानिनी में प्रेम, आशिकी, आँसू, वियोग से विलग नये भावबोध की गज़ल का रंग अत्यन्त विलक्षण प्रस्तुत किया है। वस्तुतस्तु बच्चूलाल अवस्थी ने विरह मिलन की अनुभूतियों को तो उर्दू काव्य परम्परा में रससिक्त होकर ही लिखा परन्तु कल्पना की मौलिकता और भारतीय मिथकों एवं बिम्बों के तीर सन्धान ने उसे और पैना बना दिया। इस सदी के अन्तिम दो-तीन दशकों में पं० जगन्नाथ पाठक और अभिराज राजेन्द्र मिश्र जैसे श्रेष्ठ कवियों ने नये रूप से पाठकों का परिचय कराया।

पं० जगन्नाथ जी की गजलों में मनोवेदना और सूक्ष्म भावों की व्यञ्जना है। उर्दू फारसी की गज़ल शैली पर आधारित गीतियाँ अपनी रागात्मकता से हृदय में अलौकिक आनन्द का संचार करती हैं। 'कापिशायिनी' में कवि ने वैयक्तिक प्रेम की सम्पूर्ण मधुशाला को एक ही चषक में पी लिया है। यह चषक प्रिया की ऐसी मधुर मुस्कान है जो पूरी मधुशाला पर भारी है। पाठकजी के काव्य में साधना चिन्तन और विकास की त्रिवेणी प्रवाहित होती है। वह समाज की विद्रूपताओं को किनारे खड़े रहकर देखते हैं और जब दृष्टा की चेतना साक्षीभाव से जुड़ जाती है तो उनका लौकिक भाव अलौकिक बन जाता है। आपकी गज़ल और रुबाइयों में सौन्दर्य, बोध, लय और बिम्बों की नवीनता बहुत ही चित्ताकर्षक है। गालिबकाव्य को 'गालिबकाव्यम्' बना देने वाले पाठक जी निस्संदेह स्मरणीय हैं। उनकी पिपासा में गज़ल की तृष्णामयी अनुभूति है। परन्तु अभिराज राजेन्द्र मिश्र बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी हैं। उनके काव्य में जहाँ सोहर, कजरी और क्षेत्रीय लोकगीतों की महक है वहीं मधुपर्णी, मत्तवारणी और शालभञ्जिका की गज़ल गीतियों में सम्पूर्ण विश्व की चेतना संरक्षित है। मिश्र जी की गज़लों में वेदना, अन्तर्द्वन्द और विरह का ताप ही नहीं अपितु वैयक्तिक अनुभूतियों का उदात्त चित्रण हैं। अभिराज ने गज़ल विधा को जिस नए भावबोध के साथ उतारा है उसमें संस्कृत भाषा की निष्ठा भी विद्यमान है और उर्दू, फारसी की परम्परा भी। यद्यपि उर्दू गज़ल में शब्दों की मात्राओं के साथ छेड़छाड़ करके गज़ल के वजन और चलन पर दृष्टि रखी जाती है परन्तु संस्कृत गज़ल लिखना तलवार की धार पर चलने जैसा है जिसमें सन्तुलन पर दृष्टि रखनी होती है। परन्तु अभिराज राजेन्द्र मिश्र ने रदीक और काफिए के आकर्षक संयोजन के साथ अपनी बहुरंगी गजलों के रंग काव्य क्षितिज पर बिखेरे हैं, मत्तवारणी की भूमिका में आपने स्वयं स्वीकार किया है कि मैंने गजलों को उनके पुश्तैनी बाड़े (हुस्न इश्क) से बाहर निकालने का यत्न किया है और उन्हें एक बड़ा कैनवास प्रदान किया है जिसमें व्यक्ति, समाज, राष्ट्रलोक तथा विश्वसमरस है।

वास्तव में अभिराज की गजलो में कथ्य की व्यापकता है, विषयवस्तु की विविधता है और अनेकों बिम्ब एवं प्रतीकों की सहजग्राह्यता है। वाग्वधूटी, मृद्वीका, श्रुतिम्भरा एवं मधुपर्णी के प्रणयी कवि ने प्रौढ़त्व के छैनी हथौड़े से शालभञ्जिका को गढ़ा है। इसमें झर-झर बहते आँसुओं में प्रिय बिछोह की पीड़ा नहीं, प्रिया से मिलने की तृष्णा नहीं और न ही भोग की चाह है, अब तो सांसारिक कामनाओं के अंकुर सूख गये हैं यह जीवन मुक्ति की तृष्णा में जिया जा रहा है।

शोषमापादिताः सर्वभावाडराः

जीवनं जीव्यते काम्यया साम्प्रतम्(शालभञ्जिका- 134/4)

यही मुक्ति हमारी धरोहर है, परम पुरुषार्थ है जिसके समक्ष लौकिक, यश-अपयश बौने हो जाते हैं। संस्कृत की गज़ल में भावबोध का यही नयापन उसे उर्दू की गज़ल से विलग करता है। संस्कृत साधक का उद्देश्य परमतत्व में एकाकार होना है। प्रेम की लौकिक बात भी अलौकिक प्रतीत होती है।

इसके अतिरिक्त समाज के गिरते मूल्य, दोहरे मानदण्ड और परपीड़ा के लिये अभिराज ने जो आचार संहिता निश्चित की है उससे कुछ सामाजिक विसंगतियाँ दूर की जा सकती हैं। आज व्यक्ति अपने दुःख से दुखी नहीं है अपितु दूसरों के सुख से दुःखी है, निरन्तर दूसरों के लिये अवरोध खड़े करता है -

कंटकशिखाऽप्यसह्या प्रतिभाति चेत्वदङ्गे
प्रतिवेशिनित्यमार्गे तदलं निखन्य शंकुम् (मत्तवारणी - 80/4).

आपको काँटे की पीड़ा भी असह्य है और दूसरे के मार्ग में खूँटा गाढ़ने में भी आपको लज्जा नहीं आती कैसा दोहरा व्यक्तित्व है। यहाँ इस शेर में गूढार्थ यह है कि काँटे के चुभने में और खूँटे के गाढ़ने में उद्देश्य भिन्नता है। प्रथमतः काँटा अनायास चुभता है और उसकी पीड़ा भी बहुत छोटे भाग पर होती है और फिर काँटा चुभने में दूसरे के द्वारा जानबूझकर कष्ट देना निहित नहीं होता। परन्तु इसके विपरीत खूँटा गाढ़ते समय हमें उस विशिष्ट स्थान की तलाश है जहाँ से हमारा प्रतिवेशी नित्य गुजरता है। और फिर खूँटे से टकराने पर पता नहीं चोट कहाँ-कहाँ लगे। यहाँ पड़ोसी को पीड़ा देने में हमारा कलुष चिन्तन कार्यरत है।

प्रेम काव्य की आत्मा है भले ही वह पति-पत्नी का दाम्पत्य प्रेम हो, प्रिया के प्रति समर्पण हो, मात-पिता के प्रति समादर हो, भाई बहिन के प्रति स्नेह हो अथवा अपने देश के लिये मर मिटने का संकल्प हो । प्रेम का सूक्ष्म तन्तु प्रत्येक सम्बन्ध में उसकी चेतना बनकर रहता है। अभिराज ने जिस प्रेम को स्थायी और प्रशंसनीय स्वीकार किया है वह क्षुप के समान धीरे-धीरे विकसित प्रीति है।

अभिराज की विशेषताओं के पुञ्ज को यदि एक शब्द में कहने की शर्त हो तो कहा जा सकता है कि वे बेवाक हैं। वास्तव में उनकी समस्त कृतियों में उनके व्यक्तित्व की पारदर्शिता झलकती है वे जो कहते हैं, वही करते हैं। बाह्य आडम्बर न तो उनके चरित्र और व्यक्तित्व में है और न ही वे ऐसे व्यक्तियों से प्रभावित होते हैं।

गज़ल के कैन्वस पर यद्यपि अन्य व्यक्तियों ने भी अपने रंगों को उतारने का प्रयास किया है परन्तु वह उतना स्पष्ट नहीं है। जनार्दन प्रसाद मणि की गोखराणां का कथा यद्यपि गज़ल के समीपवर्ती है परन्तु गीत और गज़ल के मध्य की क्षीणतर रेखा का स्पर्श करते हुये।

इच्छाराम द्विवेदी के प्रश्नचिह्न शीर्षक में लगभग 31 गज़ल संगृहीत हैं। जो भिन्न-भिन्न विषयों को अंगीकृत करके लिखी गई हैं जिसमें कहीं अपने देश की निदाघ कथा है तो कहीं सामाजिक मूल्यों के पतन का निदर्शन है। परन्तु इन गजलों को पढ़ने पर विशुद्ध गज़ल की अनुभूति नहीं होती। इनमें न तो उर्दू शायरी की नज़ाकत है और न ही उसकी लयात्मक गति। कई स्थान पर छोटी बहर की गज़लें बहुत ही सपाट और नीरस प्रतीत होती है। हाँ यह अवश्य है कि कुछ गज़लों में उनका प्रयास सराहनीय है। प्रणवरचनावली में चन्दनत्वं गताः की गेयता प्रभावित करती है।

प्रायः प्रणव की गज़लों में भी प्रेम एवं वियोग के स्थान पर सामाजिक विद्रूपताएँ ही जीवित हैं। राष्ट्रीय प्रेम समाज के गिरते मूल्य, चारित्रिक पतन एवं कुछ मिथकीय प्रयोग कवि ने अपनी गज़लों में किये हैं। सम्भवतः इसका उद्देश्य गज़ल के नवीन आयामों को प्रस्तुत करना रहा होगा।

5.6 आधुनिक छन्द

अर्वाचीन संस्कृत काव्य में जो क्रान्तिकारी परिवर्तन आया है उसमें छन्दों पर किये गये नवप्रयोग भी उल्लेखनीय है। भले ही वह देशी छन्दों की बात हो अथवा विदेशी छन्दों की कवि ने छन्द शास्त्र की परम्परा से चार कदम आगे बढ़कर स्वयं को लोकधर्मी सिद्ध करने का प्रयास किया है। अतः इस नवप्रयोग में जो भारत की जमीन से जुड़े छान्दस नवप्रयोग हैं उन्हें लोकधर्मी छन्द कहा गया है।

5.6.1 सॉनेट

संस्कृत में अनेकों नाट्यकृतियों के रचनाकार श्री वीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने संस्कृत कविता का सॉनेट छन्द से परिचय कराया। सॉनेट अंग्रेजी कविता का प्रसिद्ध छन्द है। एक सॉनेट में चौदह पंक्तियाँ होती हैं और एक ही छन्द में एक कविता पूर्ण हो जाती है। भट्टाचार्य जी ने अपने सॉनेट संग्रह को 'कलापिका' के नाम से कलकत्ता (1969 ई०) से प्रकाशित कराया। शेक्सपियर के सॉनेट विधान का प्रभाव इस संग्रह पर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। पहली एवं तीसरी में तथा दूसरी और चौथी पंक्ति में अत्यानुप्रास का निर्वाह और छन्दोविधान की रक्षा भी कवि ने यहाँ की है। वीरेन्द्र कुमार जी ने सॉनेट का संस्कृत नामकरण संस्तबक किया है। ये समस्त संस्तबक उनके पूर्ण समर्पण एवं साहित्य साधना का परिणाम है। उन्होंने अंग्रेजी के इस छन्द को उसी के विधान में संस्कृत भाषा का उत्तरीय पहनाकर अपनी कल्पना और भाषा सौष्ठव के समन्वय का पूर्णतः निर्वाह किया है। इस प्रकार भट्टाचार्य जी ने सॉनेट को संस्कृत साहित्य में उतारकर विदेशी छन्दों की रचनाधर्मिता का सूत्रपात किया।

इसी श्रृंखला में हर्षदेव माधव ने सॉनेट को उसी भावभूमि में लिखकर संस्कृत साहित्य को विश्वचेतना से जोड़ा है। यद्यपि हाइकू माधव का प्रिय छन्द है परन्तु सॉनेट को भी उन्होंने उतनी ही खूबसूरती से अपने साहित्य में उतारा है। हर्षदेव माधव प्रयोगधर्मी कवि कहे जाते रहे हैं। प्रत्येक छन्द, प्रत्येक विधा के साथ नये-नये प्रयोग करना उनकी जादूगरी है। वे कुछ भी लिख सकते हैं। शब्दों के खेल से कहीं नीचे गिरते शब्द चित्रकाव्य बन जाते हैं तो कहीं शब्दों का ऊँचा नीचा लेखा-जोखा उसे ग्राफ काव्य का रूप दे देता है। कहीं मदारी और जमूरे के संवाद कविता कह उठते हैं तो कहीं समुद्र और नदी टेलीफोन पर बात करते दिखाई देते हैं, कहीं पहेली है तो कहीं रिक्त स्थानों की पूर्ति, कहीं शब्दों का मेल करने का खेल कविता बन जाता है। अतः माधव कोई भी छन्द को सीधे-सीधे लिखने वाले कवि नहीं हैं। जहाँ सॉनेट सा में उन्होंने चौदह पंक्तियां लिखकर उसकी गति यति का पूर्णतः निर्वाह किया है वहीं छन्दोविधान के दायरे में रहकर भी उन्होंने अन्य स्थान पर सॉनेट का वार्तालाप रूप प्रस्तुत किया है। इसमें प्रिय और प्रियतमा का पारस्परिक संवाद है। प्रिया अपनी रूपराशि पर गर्वित है अतः उसे लगता है कि प्रियतम का स्नेह भ्रमर सदृश है जो फूल के म्लान होने पर नष्ट हो जाता है परन्तु प्रियतम का प्रत्युत्तर बहुत ही सटीक है कि हे प्रिया यौवन श्री भले ही नष्ट हो जाये परन्तु स्मृतियों की सुगन्ध सदैव बाँधती है। अतः यदि उन यादों को संजोकर रखा जाए तो व्यक्ति जीवन भर उसी ऊष्मा में जीता है। स्मृति सुगन्ध के सदृश ही माधव ने पुष्पं परन्तु सॉनेट भी लिखा है ये दोनों ही सॉनेट संवादात्मक शैली में लिखे गये हैं। "पुष्पं परन्तु" में प्रिया को आशंका है कि प्रिय भ्रमर द्वारा भुक्त पुष्प के समान उसकी देह को ही चाहता है और आनन्द के उपरान्त उसे त्याग देता है परन्तु हर्षदेव कहते हैं कि वास्तव में भ्रमर को तो पल भर का सुख मिलता है परन्तु पुष्प का तो जीवन ही सफल हो जाता है।

डॉ० राधावल्लभ त्रिपाठी ने यद्यपि बहुलता से इस छन्द का प्रयोग नहीं किया है परन्तु सन्धानम् के लक्ष्य में सॉनेट आ ही गया है। उन्होंने है दो सॉनेट सन्धानम् में लिखे हैं। इससे प्रतीत होता है कि डॉ० त्रिपाठी अर्वाचीन छन्दोविधान के ऐसे सहयात्री हैं जो देशी विदेशी सभी छन्दों का सहज प्रयोग करने में

सिद्धहस्त हैं। उनके गद्य में ही आधुनिकता का संचरण नहीं है अपितु काव्य की गति भी समयानुकूल सज्जित होती है। अन्वेषणम् सॉनेट में यति और गति का पूर्ण निर्वाह करते हुये चौदह पंक्तियों में उसे नियमबद्धता से समायोजित किया है। परन्तु एक बात निश्चित रूप से आधुनिक संस्कृत कवियों में दिखाई देती है कि इस प्रकार के नवप्रयोग उन्होंने अपनी बहुआयामी प्रतिभा को सिद्ध करने के लिये ही किये हैं। उनमें उनके काव्य की स्वाभाविकता के स्थान पर कृत्रिमता दिखाई देती है।

5.6.2 हाइकु

जापानी काव्य विधा का सफल प्रयोग हाइकु कहा जा सकता है। इसमें 17 अक्षरों का प्रयोग करके सूत्र के सदृश भावाभिव्यक्ति होती है। यह अक्षर 5-7-5 के क्रम में तीन पंक्तियों में होते हैं इस विषय में झीणाभाई देसाई कहते हैं पाँच-पाँच की पहली और तीसरी पंक्ति से सधने वाला संवाद एवं बीच की टेढ़ी पंक्ति मानो दो पलड़ों को सन्तुलित रखने वाला केन्द्र ! एक बार इस आकार से हमारी रसवृत्ति अभ्यस्त हो जाए तो फिर उसमें से नये-नये उन्मेष जन्मने लगते हैं। यह भी हाइकु सृष्टि का एक अनूठा आनन्द है।

डॉ० अरुणोदय जानी हाइकु के विषय में कहते हैं कि **पादत्रयात्मके सप्तदशाक्षरेऽस्मिन पंक्ति 5-7-5 संख्याका वर्णा सन्तिः। अतः हाइकु इत्यपरपर्यायस्यास्य सत्तरी, सत्तराक्षरी, त्रिदलम् इति नामान्तराणि। हर्षदेवस्तु एतस्य बिल्वपत्रम् इवान्वर्धकं नाम कल्पयति।**

हर्षदेव माधव हाइकु की तीन पंक्तियों को त्रिगुणात्मक विश्वव्यापकता के साथ रखते हैं और हाइकु को बिल्वपत्र कहना पसंद करते हैं। **हाइकुकाव्यमपि त्रिचरणमयं तस्यापि त्रीणि चरणानि वर्तन्ते, अतः सूचयति त्रिगुणसमन्वितं विश्वदर्शनप्रभुत्वम्। हाइकु-होऽकु-सत्तरी-सत्तराक्षरी-त्रिदलं-बिल्वपत्रं इत्यादि बहूनि नामानि वर्तन्ते हाइकुमहोदयस्य, किन्तु बिल्वपत्रमेव कथयिष्यामि।**

वस्तुतः हाइकु में कवि स्वयं कुछ नहीं कहता छोटा सा यह त्रिदल सब कुछ कह जाता है। यद्यपि सुभाषितों में भी अन्योक्ति भाव को कम शब्दों में व्यक्त किया जाता है परन्तु उनका काव्य उद्देश्य केवल सदाचार एवं उपदेश की सर्जना करना होता है जबकि हाइकु में क्षण भर की संवेदना सम्पूर्ण जीवन का दर्शन समझा जाती है। वास्तव में इसमें बिम्बदृप्रतिबिम्ब का संयोजन बहुत प्रभावी होता है। हर्षदेव माधव ने हाइकु के लक्षण इस प्रकार निर्देशित किये हैं

1. चमत्कृति - ऐसी चमत्कृति जिसमें ध्वनि हो।
2. लाघव - ऐसा लाघव जो शब्द स्वामी ही साधसके। लाघव हो परन्तु काव्यार्थ के लिये हानिकारक न हो।
3. जिसमें काव्य की विविध वाक्छटाएँ भरी हों तथा कल्पना वैभव हो।
4. उसमें प्रकृति सहित सर्व विषय स्वीकार्य हों।
5. हाइकु स्वयं एक सौन्दर्य का अनुभव है।
6. हाइकु में स्वतन्त्र होने पर भी किसी भी छन्द के साथ योजना की जा सकती है।

वस्तुतः कल्पना की सृष्टि से युक्त होने के कारण हाइकु कल्पनावादी कवियों के लिये एक श्रेष्ठ छन्द योजना है। परन्तु यह कल्पना परम्परिक न होकर नवीनता लिये होती है मेघ का इन्द्रधनुष के कंधे से बाल संवारना दृश्यकल्पन की मनोहारी योजना है।

हाइकु में टेलीग्राफिक भाषा का प्रयोग होता है। इसमें एक वाक्य शब्द में और एक खण्ड वाक्य में समाहित हो जाता है। यही उसका वैशिष्ट्य है और यही अर्थगौरव भी। परन्तु हाइकु के भावक का

सूक्ष्मदृष्टा होना आवश्यक है जिससे वह अन्तःस्थल में प्रवेश कर सके। इस प्रकार जापानी काव्यविधा हाइकु सूचना, ध्वनि और व्यञ्जना प्रधान काव्य कला का सूक्ष्म शिल्प है। इसमें कम से कम शब्दों में काव्य सिद्धि की जाती है। अतः हाइकु के पाठक को बहुत ही धैर्य के साथ उसकी भावभूमि पर उतरना पड़ता है। इसमें बिम्ब, प्रतीक एवं मिथकों द्वारा गागर में सागर समाने की कला का प्रयोग किया जाता है। जब भी इसे अन्योक्ति, व्यंग्य और कटाक्ष के साथ उतारा जाता है तब यह और भी वेधक बन जाता है।

घुणा खादिता ग्रन्थाः कपोताः सुप्ताः पुस्तकालये।(ऋषेः क्षुब्धे चेतसि 32/317)

ग्रन्थों में घुन का लगना और पुस्कालय में अनेकों कबूतरों का सोना वहाँ की जनशून्यता को दर्शाता है। यह शून्यता घुन खाई किताबों के कारण थी अथवा व्यक्तियों के द्वारा उपयोग में न लेने के कारण किताबों में घुन लगा यह भावक की भावयित्री प्रतिभा पर निर्भर है। कारण कई हो सकते हैं सम्भवतः वे पुस्तकें बहुत उपयोगी नहीं हैं, पुस्तकालय शहर से बहुत दूर है, सरकारी अनुदान के अभाव में कर्मचारियों की नियुक्ति नहीं हो पा रही अथवा ग्रन्थालय का वातावरण प्रतिकूल है। इन सब बातों को यह हाइकु अपने में सहेजे हुये है आप जैसा सोचते हैं वैसा ही अर्थ उसमें से निकाल सकते हैं।

हर्षदेव माधव ने हाइकु की विविधता से भी पाठकों का परिचय कराया है। वे परम्परागत छन्द-शिखरिणी, शार्दूलविक्रीडित, स्रग्धरा, वसन्ततिलका आदि को भी हाइकु के स्वरूप में उतारने हेतु प्रयास कर रहे हैं। भले ही इसके लिये छन्दों को खण्डित करने का दोष भी उन पर लगाया जाता रहा है परन्तु छान्दस तत्व को दृष्टि में रखकर उन्होंने इस चुनौती को स्वीकार करके प्रयोगशीलता को निभाया है और ऐसे प्रयोगों द्वारा हाइकु में व्याप्त सम्भावनाओं की ओर संकेत भी किया है।

अतः उन्होंने जापानी छन्द हाइकु को भी भारतीय परिवेश में लिखा है। वात्सायन के कामसूत्र की अभिसारिका जब इस लघुछन्द में कैद की जाती है तो कितनी सरल हो जाती है -

अभिसारिका
हस्ते दीपः नेत्रयो
राग्नेयकीटरू (ऋषेः क्षुब्धे चेतसि 4/33)

रात में उपपति के पास जाने की उत्कण्ठा आँखों में जुगनू की चमक उत्पन्न करती है हाथ में नन्हा दीपक जो हथेली की ओट में भी सुरक्षित नहीं है तेज वायु से कभी भी बुझ सकता है। नायिका के नेत्रों में विविध भाव जुगनू की चमक के समान स्पन्दित हैं। कभी किसी के देख लेने का भय तो कभी मिलन का आनन्द । दीपक आशा का प्रतीक है और जुगनू अस्थायित्व का । वस्तुतः एक छोटा सा हाइकु एक पूरी प्रेम कथा का गवाह बन जाता है। यही है बिम्ब प्रतिबिम्ब और कवि की संवेदनात्मक दृष्टि का प्रवाह। यद्यपि अन्य कवियों ने भी हाइकु पर कुछ प्रयोग किये हैं परन्तु माधव के द्वारा लिखे गये हाइकु बहुत ही स्वाभाविक एवं मुखर हैं।

5.7 लोकगीत

अर्वाचीन संस्कृत काव्य में जो क्रान्तिकारी परिवर्तन आया है उसमें छन्दों पर किये गये नवप्रयोग भी उल्लेखनीय है। भले ही वह देशी छन्दों की बात हो अथवा विदेशी छन्दों की कवि ने छन्द शास्त्र की परम्परा से चार कदम आगे बढ़कर स्वयं को लोकधर्मी सिद्ध करने का प्रयास किया है। अतः इस नवप्रयोग में जो भारत की जमीन से जुड़े छान्दस नवप्रयोग हैं उन्हें लोकधर्मी छन्द कहा गया है।

अभिराजयशोभूषणम् में डॉ० मिश्र ने गीतभेद निरूपण करते हुये लिखा है कि कर्ण कुहरों के लिये जो गीत अमृत तुल्य होता है वह धातु और मातु से समन्वित होकर नादात्मक एवं अक्षरात्मक इन दो रूपों में विभक्त है। धातुज गीत उसे कहते हैं जो वेणु तथा वीणा आदि यन्त्र समूह से प्रस्फुटित होता है।

मातुज गीत को मुँह से कढ़ने वाला भी कहते हैं जो कि गायन के रूप में विद्यमान है। यही गीत जब शास्त्रसम्मत रागों के माध्यम से गाया जाता है तो उस प्रकार के गीत काव्यों को रागकाव्य कहते हैं और जो गीत स्वतन्त्र रीति से सम्प्राप्त कण्ठध्वनि के अनुसार सुखपूर्वक तथा जनपद, ग्राम, कुल, जाति की परम्परा के अनुसार गाया जाता है वह संगीतशास्त्र नियमों से रहित बन्धनमुक्त आनन्द देने वाला गीत लोकगीत कहा जाता है।

तच्च सघोरसानन्ददायकं गतबन्धनम्
शास्त्रनियमनिर्मुक्तं लोकगीतं समुच्चते (254/7)

यहाँ पर रागकाव्य के लिये संगीत शास्त्रसम्मत होने की बात कही गई है और लोकगीतों के लिये जो राग प्रयुक्त किये जाते हैं उनका लोकसम्मत होना आवश्यक है। परन्तु लोकधर्मी छन्दों को प्रयोग करने का उद्देश्य परम्परागत छन्दशास्त्र का उल्लंघन करना अथवा उसकी अवहेलना नहीं था अपितु संस्कृत को जन-जन से जोड़ना है। जब संस्कृत के छन्दों में तत्कालीन समाज और संस्कृति की महक सुवासित होती है जो वह व्यक्तियों को खुद से जोड़ लेती है। वहाँ के आंचलिक छन्द लय के कारण अपरिचित भाषा को भी आत्मसात करने की क्षमता रखते हैं। इन छन्दों में सोहर, रसिया, लोरी, गज़ल, लावनी, ठुमरी, कजरी, कव्वाली आदि लोकगीत सम्मिलित हैं। क्योंकि यह गीत जनपद, गाँव, कुल तथा स्वजातीय परम्परा के अनुसार कण्ठ- ध्वनि के वैशिष्ट्य से गाये जाते हैं अतः इन्हें लोकगीत कहते हैं। जनपद के अनुसार रसिक (रसिया) लोकगीत ब्रजक्षेत्र में बाउल बंगाल में, पण्डवानी छत्तीसगढ़ में, रागिणी हरियाणा में, सोहर, स्कन्धहारीय चैत्रक, नकटा, पचरा, वटुक, फाग उत्तर प्रदेश में, डाँडिया गुजरात में और अभंग महाराष्ट्र में गाया जाता है। परन्तु ब्रजक्षेत्र में प्रचलित लोकगीतों को संस्कृत में यथावत रूप से उतारकर जन-जन में लोकप्रिय बनाने का श्रेय ब्रज के मूर्धन्य साहित्यकार वासुदेव कृष्ण चतुर्वेदी को है उन्होंने इस प्रकार के अनेकों लोकगीतों को संस्कृत की ऊष्मा से और भी आकर्षक बना दिया है, एक प्रसिद्ध गीत है -

मैं तौ गोवर्धन कूं जाऊं मेरे वीर नाय मानै मेरौ मनुआ।
अहं तु गोवर्धनं गमिष्यामि मनुते नैव मनो मे(ब्रजगन्धा)

इसके अतिरिक्त उन्होंने संस्कृत भाषा की लोकप्रियता और जन-जन के कर्णमाधुर्य के लिये कुछ संस्कृत गीतियों को फिल्मी धुन आधारित करके लिखा। उनकी एक प्रसिद्ध सरस्वती वन्दना विद्यार्थियों में बहुत लोकप्रिय रही। जिसकी मूलधुन थी - तेरी प्यारी प्यारी सूरत को किसी की नजर ना लगे उस पर सरस्वती वन्दना का यह रूप दृष्टव्य है-

धनसारतुषार सुहारसिते
वरवीणा निनादकरी पाहिमात!।
मधुमञ्जुलतामधुमञ्जुलता
सुतनौ सुतनौ सुतनोतुतता।
सततं सतता सुमहास्ययुता
मकरन्दसुधाश्रितरागरता।
सितवारिजवारिजवेशवृते
वरवीणा निनादकरी पाहिमात!(ब्रजगन्धा)

लोकगीतों की इसी परम्परा में श्रावणगीत, रसिया बटुकगीत आदि का उल्लेख भी आधुनिक संस्कृत काव्य में मिलता है।

5.8 युगबोधपरक कविताएं

बीसवीं शताब्दी में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में मानव जगत ने आश्चर्यजनक उपलब्धियां प्राप्त की है,जिनके कारण इस सदी की जीवन पद्धतियों में अत्यंत तीव्र वेग से परिवर्तन दिखाई पड़ते हैं। मनुष्य का सारा परिवेश परिवर्तित हुआ है और एक नए कलेवर में उपस्थित हुआ है। इसका प्रभाव संस्कृत साहित्य सर्जना पर भी पड़ा है। आधुनिक समय की इन परिस्थितियों में संस्कृत कवियों ने कविता में नए वातावरण के अनुरूप नए नए मानक गढे हैं व नए नए विषयों का चयन किया है। इस प्रवृत्ति के आरंभ का श्रेय आचार्य भट्ट मथुरा नाथ शास्त्री, कुलभूषण, हर्ष देव माधव, रहसबिहारी द्विवेदी आदि कवियों को जाता है। आधुनिकता के इस कालखंड में अनेक संस्कृत साहित्यकार कवि, गद्यकार मार्क्सवाद, अस्तित्ववाद और उत्तर आधुनिकतावाद की नई वैश्विक विचारधाराओं से अभिप्रेरित व प्रभावित होकर रचना में संलग्न हुए हैं ।मानव जीवन की यह बीसवीं सदी न केवल उसके औद्योगिक व वैज्ञानिक विकास के लिए अपितु नई-नई समस्याओं के जन्म के लिए भी जानी जा सकती है। मानव समाज की मुखर अभिव्यक्ति के लिए आधुनिक संस्कृत साहित्यकार भी पीछे नहीं हैं। संस्कृत साहित्यकारों को युगबोध की जितनी सूक्ष्म पकड़ होती है शायद वह अन्यत्र दुर्लभ हो। आज के समय में पर्यावरण संरक्षण ,जिसमें कि जल संरक्षण, वायु संरक्षण, मृदा संरक्षण आदि महत्वपूर्ण विषय शामिल किए जा सकते हैं । आचार्य निरंजन मिश्रा रचित गंगापुत्रावदानम् युगबोध परक रचनाओं का एक उत्कृष्ट निदर्शन है। वर्तमान समय में घटित निर्भया कांड जैसी अत्यंत दुःखदाई घटनाएं, जो कि मानव समाज को उद्वेलित करती हैं, साथ ही कन्या भ्रूण हत्या, सांप्रदायिक विद्वेष ,महंगाई, शिक्षा का गिरता स्तर, आज के युगबोध के विषय हैं जिन पर संस्कृत कवियों ने अपनी ललित लेखनी को बड़ी ही उत्कृष्टता के साथ बढ़ाया है।

बीसवीं शताब्दी में लिखी जा रही संस्कृत कविताएं न केवल भारत देश में अपितु सारे विश्व में सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक स्थलों पर हो रहे विभिन्न प्रकार के परिवर्तनों व परिस्थितियों के प्रभाव का प्रमाण देती हैं। जिस तरह पारंपरिक रूढ़ विषयों पर संस्कृत साहित्यकारों की लेखनी अविराम गति से चलती आ रही है उसी तरह नवीन स्थितियों और नवीन विषयों पर संस्कृत कविता ने सीधी प्रतिक्रिया देना प्रारंभ किया है ।स्वतंत्रता प्राप्ति के समय व तत्पश्चात के वातावरण को प्रतिबिंबित करते हुए बहुसंख्यक काव्य संस्कृत में लिखे गए हैं । विदेशी आक्रमणों और बांग्लादेश के मुक्ति संग्राम आदि के विषय को लेकर भी संस्कृत कवियों ने काव्य लिखे हैं । इस युग में गांधीवाद का प्रभाव व अन्य विचारधाराओं का प्रभाव भी देखा जा सकता है जिसका प्रभाव संस्कृत कविता पर पड़ा है। यद्यपि तात्कालिक युगबोध की दृष्टि से की जाने वाली इन रचनाओं में साहित्य के शाश्वत मूल्यों और शाश्वत सौंदर्य बोध का प्रभाव कम ही परिलक्षित होता है तथापि समकालीनता को समझने के लिए यह साहित्य अत्यंत महत्वपूर्ण है। आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी अपनी पुस्तक आधुनिक संस्कृत साहित्य की प्रमुख प्रवृत्तियों में लिखते हैं कि "रस बोध की दृष्टि से अवश्य चीन तथा पाकिस्तान के संग्राम के अवसर पर लिखी गई रचनाओं में वीर रस और राष्ट्र के प्रति प्रेम का परिपाक हुआ है। इस दृष्टि से हम कह सकते हैं कि पारंपरिक रस बोध की कविता समकालीन सर्जना की धारा से जुड़ कर राष्ट्र के प्रति चिंता और विश्वजनीन मानवता के प्रति जागरूकता की भावना से संचालित हुई है।" आचार्य त्रिपाठी का यह मानना एकांगी हो सकता है परंतु यदि संस्कृत कविता के आधुनिक परिप्रेक्ष्य में दृष्टिपात करें तो संस्कृत कविता हर युग में प्रासंगिक और नवीन रही है और उसमें समसामयिक युगबोध के साथ सर्वकालिक व सार्वभौम युगबोध की प्रवृत्ति रही है। युगबोध परक रचनाओं के लिए विशेष रूप से हम

पंडित बटुकनाथ शास्त्री खिलाते, डॉ. बीआर राघवन, पंडित राम करण शर्मा, प्रोफेसर शिवजी उपाध्याय, अभिराज राजेंद्र मिश्र, डॉ राधा वल्लभ त्रिपाठी ,हर्षदेव माधव, डॉक्टर निरंजन मिश्रा, पंडित शिवदत्त शर्मा चतुर्वेदी, प्रोफेसर कमला पांडे, प्रोफेसर कौशलेंद्र पांडे आदि की रचनाओं को देख सकते हैं। युगबोध परक दृष्टि से की जा रही संस्कृत साहित्य की सर्जना अत्यंत मार्मिक, प्रभावशाली व लोक कल्याणकारी है। इन रचनाओं छंद विधान की बाध्यता से भी मुक्त होकर जो रचनाएं की जा रही हैं, उनसे वर्तमान समय की समस्याओं व उनसे उत्पन्न विकराल परिस्थितियों के प्रति तीव्र प्रतिक्रिया का सहज बोध प्राप्त होता है, जिसमें मानव मन की संवेदनाएं धैर्य की सीमा को अतिक्रमण कर फूटने को तैयार हैं।

पंडिता क्षमा राव का सत्याग्रह गीता, स्वराज्य, रामकुमार शर्मा का वृक्कयौतुकम् ,निरंजन मिश्र के महाकाव्य व लघु काव्य और इसी प्रकार बहुतेरे कवियों का काव्य संसार संस्कृत कविता में युगबोध का परिचायक दिया है। निरंजन मिश्र अपने गङ्गापुत्रावदानम् तथा ग्रन्थिबन्धनम् आदि महाकाव्य में समाज की बहुविध प्रवृत्तियों, रूढ़ियों का मार्मिक चित्रण करते हैं ।विवाह की विधियों के निरूपण में लोकजीवन की सरस छटा से अब उसमें आधुनिक रीतिरिवाज भी सम्मिलित हो गये हैं। यथा –

क्वचित्तु विद्युल्लतिकाविधानं
क्वचिच्च दीर्घं चलचित्रगानम्।
क्वचिल्लताभिः शुभसंविधानं
क्वचिच्च सङ्गीतकलानिदानम्।।

धान्यकुट्टन का मनोहर वर्णन निरंजन मिश्रा कवि ने ग्रन्थिबन्धनम् में इस प्रकार किया है-

श्रेष्ठा वदन्ति भो वत्स गार्हस्थ्यं धान्यकुट्टनम्।
कुरु लज्जां विहायाद्य मार्गोऽयं बुधवन्दितः ।।
श्रेष्ठैर्मुसलदण्डस्य ग्रहणैनैव जीवने।
गार्हस्थ्यस्वीकृतिं मन्ये वरो दिशति कर्मणा।।

5.9 रेडियो रूपक

रेडियो रूपक के रूप में आधुनिक काल की प्रचलित वालों का प्रिय साहित्य विधा है किस विधा का प्रयोग अब संस्कृत साहित्य लेखन में भी प्रगति पर है रेडियो फीचर ही अंग्रेजी का शब्द है इसके लिए हिंदी में रेडियो रूपक शब्द का प्रयोग किया जाता है रेडियो रूपक एक ऐसी विधा है जिसमें तथ्यों और उनकी प्रस्तुति के लिए प्रयोग शील तकनीको विशेष महत्व पूर्ण रूप से प्रयोग किया जाता है अनेक प्रसिद्ध रेडियो रूपक प्रस्तुतकर्ता ओं ने रेडियो रूपक की जो परिभाषाएं दी हैं उन्होंने किसी न किसी रूप में इनके प्रयोग से प्रयोग शील तकनीकी पक्षों को विशेष महत्वपूर्ण माना है स्टैनले फील्ड नए प्रोफेशनल ब्रॉडकास्ट ट्राइटर हैंडबुक नामक पुस्तक में रेडियो फीचर की परिभाषा देते हुए लिखा है कि रेडियो फीचर का प्राथमिक उद्देश्य श्रोताओं को जानकारी देना है और मनोरंजन करना है।

लुई मैथिली द्वारा दी गई रूपक की परिभाषा के अनुसार रेडियो रूपक वास्तविकता की वह नाटक की प्रस्तुति होती है जिसमें रिपोर्टर या कैमरामैन की बनिस्बत अधिक संवेदनशील चयनकर्ता होना चाहिए रेडियो रूपक प्रस्तुतकर्ता को वास्तविक सामग्री का चुनाव करते समय भिन्न भिन्न दृष्टिकोण अपनाना चाहिए ताकि संपूर्ण प्रस्तुति नाटक जैसी प्रभावकारी साबित हो सके। सुप्रसिद्ध रेडियो रूपककार व प्रसारणकर्मी जीसी अवस्थी ने अपनी पुस्तक ब्रॉडकास्टिंग इन इंडिया में लिखा है रेडियो

रूपक लेखन एक तकनीकी काम है। आज संस्कृत साहित्य सर्जन कर्ताओं में भी रेडियो रूपक कि यह साहित्य विधा अत्यंत लोकप्रियता को हासिल कर रही है।

रेडियो रूपक की विभिन्न परिभाषा ओं पर विचार करने पर रेडियो रूपक के संदर्भ में निम्नांकित तथ्य उभरकर सामने आते हैं रेडियो रूपक साहित्य लेखन की एक विशेष तकनीक है रेडियो रूपक का आलेख पत्थरों पर आधारित होना चाहिए।

5.10 सारांश

इस पाठ में हमने संस्कृत साहित्य की लंबी विकास यात्रा को ध्यान में रखते हुए आधुनिक काल में संस्कृत साहित्य की प्रमुख प्रचलित विधाओं का विशेष परिचय प्राप्त किया है। आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी आदि आधुनिक काल के प्रमुख संस्कृत काव्य के इतिहासकारों के अनुसार 19वीं शताब्दी के साथ संस्कृत साहित्य के आधुनिक काल का आरंभ माना गया है। 19 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से संस्कृत साहित्य की सर्जना में गद्य तथा वस्तु परकता की ओर झुकाव बढ़ता हुआ देखा जाता है। तथापि पद्य विधा की लोकप्रियता कम नहीं रही है। राष्ट्रीय नवजागरण तथा पुनरुत्थानवाद का गहरा प्रभाव इस कालखंड में लिखे गए संस्कृत साहित्य में विशेष रूप से परिलक्षित होता है। धीरे-धीरे संस्कृत का रचनाकार अपनी सामाजिक चेतना को प्रखर करता आया है। 19 वीं शताब्दी के अंतिम तथा बीसवीं शताब्दी के आरंभिक दशकों में राष्ट्रवाद की चेतना व समाजवाद की चेतना में संस्कृत के अनेक गीत व काव्य रचे गए हैं। इनमें सामाजिक चेतना, यथार्थ बोध, व्यक्तिवाद का उदय, वैश्विक विचारधाराओं का प्रभाव, विडंबना शैली व विषयों की नवीनता दिखाई पड़ती है। हमने इस पाठ में बड़ी सहजता के साथ पारंपरिक विधाओं में नव भाव बोध और नवीन छंद विधान का परिचय प्राप्त किया है। नवीन छंदोविधान की दिशा में बीसवीं शताब्दी के संस्कृत साहित्य में सर्वाधिक नए प्रयोग किए गए हैं। आधुनिक इतिहास ग्रंथों के अनुसार फारसी उर्दू काव्य परंपरा के छंदों का संस्कृत कविता में बीसवीं शताब्दी के संस्कृत साहित्य रचना की एक अलग विशेषता है। जिसका सूत्रपात भट्ट मथुरानाथ शास्त्री से होता है। भट्ट मथुरानाथ शास्त्री ने दोहा, सोरठा ,कवित्त, सवैया, घनाक्षरी इत्यादि के साथ-साथ उर्दू के काव्य से गजल छंद को लेकर अपने काव्य वैभव का चमत्कार संस्कृत रचना में प्रकट किया है। जगन्नाथ पाठक, राजेंद्र मिश्र, बच्चू लाल अवस्थी, इच्छा राम द्विवेदी आदि इस विधा के चमत्कारी कवि संस्कृत में हुए हैं । इस कालखंड में अनेक कवियों ने लोकगीतों की मधुरिमा से आकृष्ट होकर संस्कृत काव्य रचना में नए नए प्रयोग किए। श्री भाष्यम् विजयसारथी नामक कवि ने तेलुगु भाषा के लोकप्रिय प्रचलित छंदोंको संस्कृत भाषा में कविता के लिए अपनाया। अभिराज राजेंद्र मिश्र की लोकगीत की परक रचनाएं अत्यंत लोकप्रिय हुई हैं।

वीरेंद्र कुमार भट्टाचार्य नाम के एक कवि ने अपने कविता संग्रह कलापिका में सानेट का प्रयोग संस्कृत रचना में किया है। प्रसिद्ध कवि हर्ष देव माधव ने तीन हजार के लगभग जापानी भाषा के हाइकु छंद संस्कृत में लिखे हैं। इसी तरह हाइकु की भांति ताका छंद भी जापानी काव्य का एक प्रचलित छंद है, जिसमें माधव तथा कुछ अन्य कवियों ने अपनी रचनाएं की हैं। इसी प्रकार हर्ष देव माधव ने कोरिया देश की कविताओं से शिजो नामक छंद को लेकर भी संस्कृत कविताएं रची हैं । इस प्रकार हमने इस पाठ में संस्कृत साहित्य रचना के आधुनिक काल खंड में हुए नए-नए प्रयोगों को नवीन विषय विधान व नवीन छंदोविधान की दृष्टि से जाना है।

5.11 शब्दावली

अविच्छिन्न - युक्त

नवोन्मेषी	-	नवीनता प्रकट करने वाला
मिथक	-	भ्रान्ति
पुनर्नवा	-	पुनः नवीन हुई
अभिव्यक्ति	-	विचार प्रगट करना
वैयक्तिक	-	व्यक्तिगत
असह्य	-	न सहने योग्य
सिद्धहस्त	-	प्रवीण
जनशून्यता	-	मानव रहित होना
अवहेलना	-	अपमान

5.12 अभ्यासार्थ प्रश्न- उत्तर

बोध/अभ्यास प्रश्न

प्रश्न.1 आधुनिक संस्कृत रचना में प्रयुक्त होने वाले 4 छन्दों के नाम लिखिए।

उत्तर - गजल, सॉनेट,शीजो, हाइकु।

प्रश्न.2 गज़ल की शुरूआत मूलतः किस भाषा में हुई थी ?

उत्तर - अरबी फारसी में।

प्रश्न.3 संस्कृत साहित्य में गज़ल को लाने का श्रेय किस आचार्य को जाता है ?

उत्तर - भट्ट मथुरा नाथ शास्त्री को।

प्रश्न.4 हाइकु मूलरूप से किस देश का छन्द माना जाता है ?

उत्तर- जापान का।

प्रश्न.5 अभिराजराजेन्द्र मिश्र के अनुसार गज़ल को संस्कृत भाषा में क्या कहते हैं ?

उत्तर- गलज्जलिका।

5.13 उपयोगी पुस्तकें

1. साहित्यवैभवम् - भट्ट मथुरानाथ शास्त्री, निर्णय सागर प्रेस मुम्बई 1930
2. गीतिवीथी - भट्ट मथुरानाथ शास्त्री निर्णय सागर प्रेस मुम्बई 1930
3. वाग्वधूटी - प्रो. अभिराजराजेन्द्र मिश्र
4. मत्तवारणी - प्रो. अभिराजराजेन्द्र मिश्र
5. शालभञ्जिका - प्रो. अभिराजराजेन्द्र मिश्र
6. मृद्वीका - प्रो. अभिराजराजेन्द्र मिश्र
7. प्रतानिनी - पं० बच्चूलाल अवस्थी
8. निष्क्रान्ता सर्वे - हर्षदेव माधव
9. कलापिका - श्री वीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य
10. संस्कृत का अर्वाचीन समीक्षात्मक काव्यशास्त्र- प्रो.अभिराजराजेन्द्र मिश्र, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी प्रथम संस्करण 2010 ईस्वी
11. आधुनिक सस्कृत काव्य परम्परा - श्री केशवराव मुसलगावकर, चौखंबा विद्याभवन वाराणसी प्रथम संस्करण 2004
12. संस्कृत साहित्य: बीसवीं शताब्दी - राधावल्लभ त्रिपाठी, राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान 1999
13. आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र समीक्षाएं- डॉ. रमाकांत पाण्डेय जगदीश संस्कृत पुस्तकालय

जयपुर नूतन संस्करण 2009
14. आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र- डॉ. आनंद कुमार, श्रीवास्तव ईस्टर्न बुक लिंकर्स दिल्ली प्रथम संस्करण 1990

5.14 निबन्धात्मक प्रश्न

प्रश्न.1 रेडियो रूपक का शिक्षा में योगदान बताइये।

प्रश्न.2 सॉनेट की परिभाषा व संस्कृत में सॉनेट रचना पर प्रकाश डालिए।

प्रश्न.3 भट्ट मथुरानाथ शास्त्री का आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र में क्या योगदान है ?

प्रश्न.4 हाइकु की परिभाषा एवं प्रसिद्ध आचार्यों के विषय में लिखिए।

चतुर्थ सेमेस्टर/SEMESTER-IV
खण्ड–द्वितीय
संस्कृत काव्य के आधुनिक सिद्धान्त

इकाई .1 सौंदर्य एवं रस सिद्धान्त

गोविन्द चन्द्र पाण्डेय, चन्द्रमौली द्विवेदी, गिरधारीलाल शर्मा

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 गोविन्द चन्द्र पाण्डेय

1.3.1 गोविन्द चन्द्र पाण्डेय का जीवन परिचय एवं रचनाएं

1.3.2 गोविन्द चन्द्र पाण्डेय का सौन्दर्य सिद्धान्त

1.3.3 गोविन्द चन्द्र पाण्डेय का रस सिद्धान्त

1.4 चंद्रमौली द्विवेदी

1.4.1 चन्द्रमौली द्विवेदी का जीवन परिचय एवं रचनाएं

1.4.2 चन्द्रमौली द्विवेदी का सौन्दर्य सिद्धान्त

1.4.3 चन्द्रमौली द्विवेदी का रस सिद्धान्त

1.5 गिरधारी लाल शर्मा

1.5.1 गिरधारी लाल शर्मा का जीवन परिचय एवं रचनाएं

1.5.2 गिरधारी लाल शर्मा का सौन्दर्य सिद्धान्त

1.5.3 गिरधारी लाल शर्मा का रस सिद्धान्त

1.6 सारांश

1.7 शब्दावली

1.8 अभ्यास प्रश्न उत्तर

1.9 उपयोगी पुस्तकें

1.10 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

संस्कृत साहित्य की विविध विधाओं में वर्तमानकालीन आचार्यों ने विपुल साहित्य का सर्जन किया है। काव्य की रचना कवि के आन्तरिक भावों एवं संवेगों के प्रस्फुटित होने तथा बौद्धिक विकास के परिणाम स्वरूप होती है। काव्यसर्जन के लिए हृदयगत भावों का प्रस्फुटन, विषय गत सामग्रियों की उपस्थिति, भावाभिव्यक्ति करने में समर्थ परिष्कृत भाषा, विषय प्रतिपादन के निमित्त कवि की प्रवृत्ति इत्यादि समस्त तत्त्वों की उपस्थिति अनिवार्य होती है। इन समस्त तत्त्वों में से किसी एक के भी अभाव में काव्यरचना सम्भव नहीं होती। काव्यकर्त्ता पूर्वकृत ग्रन्थों के अध्ययन से शाखाभ्यास कर अपनी प्रतिभा के द्वारा काव्यरचना करता है।

अर्वाचीन संस्कृत साहित्य में जिस प्रकार विद्वान् आचार्यों ने काव्य की अन्यान्य विधाओं यथा- नाटक, खण्डकाव्य, महाकाव्य आदि में ग्रन्थ रचनाएँ की हैं, उसी प्रकार काव्यशास्त्र की पूर्ववर्ती परम्परा के अनुरूप 20 वीं शताब्दी (वर्तमान तक) के भी विभिन्न विद्वान् काव्यशास्त्र विचक्षणों ने काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों की रचना की है। किन्हीं विद्वानों ने काव्यशास्त्र के किसी एक विषय तथा कतिपय ने लगभग सम्पूर्ण विषयों पर अपनी मौलिक अवधारणाओं को अभिव्यक्त किया है।

प्रस्तुत इकाई में गोविंद चंद्र पांडेय, गिरधारी लाल शर्मा, चंद्रमौली द्विवेदी जी का जीवन, रचनाएं , रस सिद्धांत और सौंदर्य सिद्धांत के विषय में प्रकाश डाला गया है ।

1.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप—

- ❖ गोविंद चंद्र पांडेय के जीवन, रचनाएं, रस सिद्धांत और सौंदर्य सिद्धांत को जान सकेगें ।
- ❖ चंद्रमौली द्विवेदी के जीवन, रचनाएं, रस सिद्धांत और सौंदर्य सिद्धांत को जान सकेगें ।
- ❖ गिरधारी लाल शर्मा के जीवन, रचनाएं, रस सिद्धांत और सौंदर्य सिद्धांत को जान सकेगें ।

1.3 गोविन्द चन्द्र पाण्डेय

1.3.1 गोविंद चंद्र पांडेय का जीवन परिचय एवं रचनाएं—

महामहोपाध्याय की उपाधि से विभूषित प्रोफेसर गोविन्द चन्द्र पाण्डेय का जन्म सन् 1923 ई० में उत्तर प्रदेश के प्रसिद्ध नगर प्रयागराज (इलाहाबाद) में हुआ था। इलाहाबाद विश्वविद्यालय से शिक्षा प्राप्त कर प्रो० पाण्डेय ने इलाहाबाद तथा गोरखपुर विश्वविद्यालय में गुणवत्तापूर्ण अध्यापन कार्य किया। आचार्य गोविंद चंद्र पाण्डेय गोरखपुर विश्वविद्यालय, राजस्थान विश्वविद्यालय और प्रयाग विश्वविद्यालय के प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति विभाग के अध्यक्ष तथा राजस्थान विश्वविद्यालय एवं इलाहाबाद विश्वविद्यालय के कुलपति भी रहे। वेद, इतिहास, धर्म, दर्शन, संस्कृति, पुरातत्त्व आदि प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा पर वर्तमान संदर्भों के अनुरूप अनेक पुस्तकों की रचना करने वाले प्रो० पाण्डेय की भक्तिदर्शनविमर्श, सौन्दर्यदर्शनविमर्श तथा एकंसद्विप्रा बहुधा वदन्ति आदि प्रमुख संस्कृत कृतियाँ हैं।

राष्ट्रपति पुरस्कार, सरस्वती सम्मान, कविवर सम्मान एवं विश्वभारती पुरस्कार जैसे अनेक प्रतिष्ठित पुरस्कारों से सम्मानित प्रो० पाण्डेय को विभिन्न विश्वविद्यालयों द्वारा विद्यावारिधि (डी० लिट्), साहित्यवाचस्पति, साहित्य सम्मान वाक्पति एवं महामहोपाध्याय आदि उपाधियों से भी सम्मानित किया गया है। प्रो० पाण्डेय संस्कृत सुरभारती की सेवा में समर्पित हैं।

रचनाएं—

• भक्ति दर्शन विमर्श

• एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति

• सौन्दर्यदर्शनविमर्श- काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ है, जो तीन भागों में विभक्त है-

(i) सौन्दर्यशास्त्र स्वरूपालोचन

(ii) रूपतत्त्वविमर्श

(iii) रसतत्त्वविमर्श।

प्रस्तुत ग्रन्थ में कुल 129 कारिकाएँ हैं, जिनमें विद्वान् आचार्य ने सौन्दर्य तथा सौन्दर्यशाल की दार्शनिक व्याख्या के साथ रूपतत्त्व और रसतत्त्व की भी दार्शनिक व्याख्या की है। इसके प्रथम भाग में 87 कारिकाएँहैं, जिनमें सौन्दर्यशाख स्वरूपालोचन है। द्वितीय भाग में 27 कारिकाएँ हैं, जिनमें रूपतत्त्वविमर्श तथा अन्तिम तृतीय भाग की 15 कारिकाओं में रसतत्त्व का विवेचन किया गया है। सौन्दर्यमीमांसा स्वरूप की झलक प्रस्तुत कारिकाओं में परिलक्षित होती है।

1.3.2 गोविंद चंद्र पांडेय का सौंदर्य सिद्धांत—

आचार्य गोविंद चंद्र पांडे का सौंदर्य दर्शन आधुनिक काव्यशास्त्र में महत्वपूर्ण स्थान रखता है न केवल भारत भारत में परंपरागत संस्कृत काव्यशास्त्र की पद्धतियों में अपितु वैश्विक रूप से संस्कृत के काव्यशास्त्र पर किए जाने वाले अध्ययनों में गोविंद चंद्र पांडे के सौंदर्य सिद्धांत का प्रभाव परिलक्षित होता है। उदाहरण के रूप में कतिपय कारिकाओं पर दृष्टि डालनी चाहिए- उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत कारिकाएँ द्रष्टव्य हैं।

सौन्दर्यशास्त्रं नापूर्व नैकरूपं सदैव वा।
वाह्यार्थविषयं नैव लक्षणैकाश्रयं च न।।
पुरुषार्थविशेषस्य यान्वीक्षा साम्प्रदायिकी।
ज्ञेया सौन्दर्यमीमांसा सापेक्षा सेतिहासतः।।

रूपतत्त्व का अनुपम निदर्शन विद्वान् की अधोलिखित कारिकाओं में द्रष्टव्य है-

विलक्षणैवोक्ता कैश्चित् सौन्दर्यस्य पुमर्थता।

रसतत्व पर इसी प्रकार आचार्य ने अपनी दार्शनिक मनोवृत्ति को प्रस्तुत किया है। इस प्रकार आचार्य ने प्रस्तुत ग्रन्थ में सौन्दर्य को चमत्कार पर पर्याय बतलाया है तथा सौन्दर्यशास्त्र को दर्शन के रूप में ग्रहण किया है विज्ञान रूप में नहीं। रूपतत्त्व और रसतत्त्व की भी गम्भीर दार्शनिक-मीमांसा इस ग्रन्थ में की गई प्रथम कारिका में 'सौन्दर्य को एक 'विलक्षण अर्थ' बताते हुए आचार्य गोविन्द चन्द्र पाण्डे जी उससे आनन्द के अनुभव की बात करते हैं तथा उसकी उपलब्धि के तीन स्रोतों की चर्चा करते हैं- एक

तो सभी कलाएं, जैसे संगीत, चित्र आदि, दूसरे काव्य। आचार्य ने यहाँ स्पष्ट ही काव्य को भी इस सन्दर्भ में कलाओं का सजातीय माना है। और तीसरा प्राकृतिक दृश्य, जैसे सूर्य या चन्द्र के उदय आदि। इससे स्पष्ट है कि कलाओं (जिनमें काव्य अर्भूत है) और प्राकृतिक दृश्य सौन्दर्य-बोध के स्रोत हैं, और सौन्दर्य-बोध (या सौन्दर्यानुभूति) आनन्द के अनुभव का साधन।

दूसरी तथा तीसरी कारिकाओं में, उस आनन्द के हेतु दृश्य या विषयगत हैं, अर्थात् जो अक्षों या इन्द्रियों का गोचर है उसकी 'अन्वीक्षा" (अर्थात् उपलब्ध ज्ञान का आलोचनात्मक अनुसन्धान) करते हुए आचार्यों ने उसकी संज्ञा 'ईस्थैटिक' दी है। 'ईस्थैटिक' इस नाम से नूतन (स्वतन्त्र) एक विद्या प्रस्थान का जर्मनी देश के, अठारहवीं शती में उत्पन्न बाउमगार्टन् (वृक्षोद्यान) नामक आचार्य ने इदम्प्रथमतया प्रवर्तन किया।

कहते हैं कि ग्रीक भाषा से लिया गया मूल शब्द ग्रीक धातु "aisthesthai" = प्रत्यक्ष करना, बाद में Aesthesis बना। इसका अर्थ है ऐन्द्रिय संवेदना या ऐन्द्रिय सुख की चेतना। बाद में इससे 'एस्थेटिक' शब्द निष्पन्न हुआ और यही एस्थेटिक्स के रूप में, हिन्दी में प्रायः 'सौन्दर्यशास्त्र' के रूप में अनूदित किया गया और अधिक प्रचलित हुआ। है।

किसी शब्द के दो प्रकार के अर्थ होते हैं- व्युत्पत्तिनिमित्त अर्थ औ प्रवृत्तिनिमित्त अर्थ। जैसे गौः काव्युत्पत्तिमूलक अर्थ हुआ 'वह जो चलत है' (गच्छतीति गौः), किन्तु प्रवृत्तिमूलक अर्थ के अनुसार सास्नादिमान प्राणी हुआ। आचार्य पाण्डे जी के अनुसार व्युत्पत्ति की दृष्टि से इस ईस्थैटिक/सौन्दर्यशास्त्र का मुख्य प्रतिपाद्य ऐन्द्रिय प्रत्यक्ष द्वारा आस्वाद्य विषय-विशेष है और प्रवृत्ति की दृष्टि को 'स्वलक्षण' * की भाँति, जो अतुलनीय तथा अनिर्वाच्य जैसा होकर भी समालोचना के योग्य कोई अर्थाकार से अवच्छिन्न अतिशय-विशेष है, जिसका पर्याय 'चमत्कार' है और जो 'सौन्दर्य' शब्द से अभिहित होता है।

यहाँ 'सौन्दर्य' को 'स्वलक्षण' जैसा कहा गया है। स्वयं आचार्य ने सौन्दर्य को अतुल और अनिर्वाच्य बताकर एक प्रकार से उसका 'स्वलक्षण' जैसा होना सूचित कर दिया है। बौद्धों के यहाँ 'स्वलक्षण' सामान्य विशेषात्मक द्रव्यों से भिन्न है। द्रव्यादि व्यावहारिक पदार्थों से भिन्न कोई चीज़ है जिसका शब्द के द्वारा निर्देश करना सम्भव नहीं है, तथा वह प्रत्यक्ष निर्विकल्प बुद्धि में प्रतिभासित होता है। यहाँ उसे ही 'स्वलक्षण' कहा गया है।

1.3.3 गोविंद चंद्र पांडेय का रस सिद्धांत—

रसविमर्श—

शृङ्गारादौ विषे वीर्ये गुणे रागे द्रवे रसः । वेदेष्वपि स नानार्थो देवोपासनसङ्गतः ।। १ ।।

रसयुक्तिः समाख्याता सोमसामविधानयोः । दिव्या प्रीतिः स आनन्दो भाव्यो व्यङ्ग्यश्च संविदः ।। २ ।।

वाक्प्राणमिथुनीभावः स्वच्छन्दः सामरस्यतः । शिल्पमात्मकृतिस्तस्मात् ज्योतिषा स्वेन सृज्यते ।। ३।।

कोऽयं नाट्यरसस्तावन् मनोरञ्जनमेव किम्।आस्वाद्यो वा सहृदयैरुत्कर्षः कश्चिदिष्यते ।। ४ ।।

मुनिना नाट्यसन्दर्भे रसतत्त्वं निरूपितम्। दृष्टान्तीकृत्य लोकं तन् नाट्यं बोधयते सतः ॥ ५ ॥
प्रबोधनं भवत्यत्र स्वरूपोन्मीलनात्स्फुटम्। स्थगितायामहंबुद्धौ भावे रूपान्तरीकृते ॥ ६ ॥
बह्वर्थसमवायेऽपि रसो नाट्ये प्रधानताम्। भजति द्रव्यसंस्कारो यथा भक्तविदां मते ॥ ७ ॥
चित्तमेव भवेन्मूलद्रव्यं भावस्तु संस्कृतिः। लोकार्थकृतसंकोचापाये संविदरसोदयः ॥८॥

'रस' का प्रयोग शृङ्गार आदि, विष, वीर्य, गुण, राग और द्रव के अर्थ में होता है। वह देवोपासना के सम्बन्ध से, वेदों में भी नाना अर्थों में प्रयुक्त हुआ है ॥ १ ॥

सोम और साम के विधानों में रस-युक्ति कही गयी है। वह आनन्द दिव्या प्रीति है, भाव्य और संवित् का व्यङ्ग्य है।२ ।

सामरस्य से स्वच्छन्द वाक् और प्राण का मिथुनीभाव शिल्प है, उससे आत्मकृति अपनी ज्योति द्वारा निर्मित होती है।३।

'रस' शब्द की अनेकार्थता सुविदित है, जैसा कि अमर सिंह ने कहा है- **"शृङ्गारादौ विषे वीर्ये गुणे रागे द्रवे रसः"** (३३.२२) धातु-पाठ में भी रसधातु आस्वादनार्थक और स्नेहनार्थक है। प्राचीनतम वैदिक प्रयोगों में, 'रस' से 'अन्तःसारभूत द्रव रूप अर्थ अभिधीयमान प्रतीत होता है। जैसे, **"तमासोमे रसमादधुः, ," "यो वः अन्तरिक्षमापृणाद् रसेन," "यो नो रसं दिक्षति पित्वो अग्ने यो अश्वानां यो गवां, यस्तनूनाम्"।** इस प्रकार 'रस' शब्द का प्रयोग सार, मधुर, शुभ और अमृत के अर्थ में उपलब्ध होता है। उपनिषदों में 'रस' सार-तत्त्व को कहते हैं, जैसे

"एषा भूतानां पृथिवी रसः। पृथिव्या आपो रसः। अपाम् ओषधयो रसः। ओषधीनां पुरुषो रसः। पुरुषस्य वागू रसो वाचो ऋग्रसः, ऋचः साम रसः, साम्न उद्गीथो रसः स एष रसानां रसतमः, परार्धोऽष्टमोऽयमुद्गीथः।" (छान्दोग्य ११२-३) परमः

'रस' शब्द के ये प्रयोग सोम की उपासना और साम के उपासन से सम्बद्ध हैं। जैसा कि कहा गया है- "ओमित्युद्गायतीति लिङ्गाच्च सोमयाग इति गम्यते।" सोम-रस हर्ष देने वाला और आह्लाद का हेतु विदित है, और, देवताओं का मुख्य आहार है। सोम को केवल बाह्य द्रव्यमात्र नहीं समझना चाहिए; "हविर्वै यजमानः' इस वचन से यजमान का आत्मनिवेदनात्मक भाव ही सोम का मुख्य अर्थ समझना चाहिए। इस प्रकार सोमरस का तात्पर्य भक्तिरस में ही समझना चाहिए। "हविर्वै यजमानः" इस उक्ति को अर्थवाद नहीं कहना चाहिए। क्योंकि भावनात्मक अन्तर्याग में द्रव्यात्मक हविष् ग्राह्य नहीं होता। और, अन्तर्याग में ही बाह्य याग का तात्पर्य ग्रहण करने में औचित्य है। क्योंकि देवता होकर विग्रहवान् मनुष्यों की भाँति भौतिक द्रव्यों को ग्रहण करते हुए नहीं देखे गये हैं। पुरुष के साक्षीभूत वे अन्तर्मुख, उसके भाव से ही तृप्त होते हैं।

अतः सोम का उपासन, स्वात्मनिवेदनात्मक भाव से साक्षिचैतन्य रूप देव का तर्पण है। और इस सोमोपासन से सम्बद्ध सामोपासन है, और वह नाद का उपासन ही है। नाद का मूलभूत प्रणव ही परमात्मा के प्रतीक रूप में प्रस्तुत है। और, उद्गान करते हुए (व्यक्ति) का स्फुरित होता हुआ चैतन्यात्मक प्राण और अभिव्यक्तिरूपा छन्दोमयी वाक् दोनों मिथुनीभाव को प्राप्त होते हैं। छन्दोमयी वाक् से युक्त प्राण ही रस है।

इस प्रकार रस संविद्विश्रान्ति रूप, भावसाक्षात्कार द्वारा आहित विलक्षण आस्वाद वाला, विभावादिसमूहालम्बनात्मक और उससे अभिव्यक्त होता है। और व्यक्त होना अर्थात् व्यंजना का विषय होना और चैतन्य का विषय किया जाना होता है। विभावादि के व्यापार द्वारा भग्नावरण चित् ही अन्तःकरण के धर्म स्थायिभाव को अपने प्रकाश से प्रकाशित करती हुई साक्षात्कार करती है। इससे निष्कर्ष निकला भग्नावरण चैतन्य विशिष्ट रति आदि स्थायीभाव ही रस है। स्वाभासमय भी विश्व को न समझती हुई, जाड्य से आहत चिति सीमित प्रभातृ-भाव को धारण करती हुई, सुखदुःखात्मक भोग-चक्र में भ्रमण करती हुई, सौभाग्य से साधारण्य के प्रतिभान वाली, सहृदयता की प्राप्ति से, व्यञ्जक भग्न आवरणवाली, स्वाकार की भाँति, भावलोक का साक्षात्कार करती हुई अपने में विश्रान्ति लाभ करती है। कवि और सहृदय में प्रतिभाओं का मूल समान ही होता है। कहा भी है- कवि सामाजिक के समान ही है।" और भी, "कविगत साघारणीभूत संवित् ही परमार्थतः रस है।" कविगत प्रतिभा ही, साधारण्य के कारण, विभावादि विषयों के आकारों को प्रतिबिम्बित करती हुई, उनसे संलग्न भाव-लोक को विवृत करती है और संविन्मय सहृदय उसी भावमय लोक का साक्षात्कार करता है।

1.4 चन्द्रमौली द्विवेदी

1.4.1 चंद्रमौली द्विवेदी का जीवनपरिचय व रचनाएं—

प्रो. चन्द्रमौलि द्विवेदी का जन्म 9 मार्च 1948 को औराई, सन्त रविदास नगर भदोही के ग्राम नरेथुआ में पण्डित अम्बिका प्रसाद द्विवेदी जी के यहाँ हुआ। आपकी माता श्रीमती आनन्दी थी। आप बाल्यावस्था से अत्यन्त कुशाग्र बुद्धि एवं अध्ययनशील थे। आपके पिता जी संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् थे और उन्होंने प्रो. द्विवेदी जी को संस्कृत की प्रारम्भिक शिक्षा देते हुए हाईस्कूल तक गणित और विज्ञान विषयों का भी अध्ययन कराया। तदुपरान्त उन्होंने इन्हें उच्च एवं पारम्परिक संस्कृतशिक्षा के लिए 1966 में वाराणसी भेज दिया। यहाँ ये तत्कालीन वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय में अध्ययन करते हुए 1970 में साहित्य की शास्त्री उपाधि प्राप्त की तदनन्तर आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी जी की प्रेरणा से काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्कृतविद्या धर्मविज्ञान संकाय में स्नतकोत्तर कक्षा में प्रविष्ट हुए और साहित्याचार्य की उपाधि के बाद यहीं से पी-एच.डी. की उपाधि भी आपने प्राप्त की। इस समय तक प्रो. द्विवेदी संस्कृत साहित्य के एक श्रेष्ट नवोदित विद्वान् के रूप में प्रतिष्ठित हो रहे थे। जिसे देख काशी की अनेक प्रतिष्ठित शैक्षणिक संस्थाओं ने अध्यापनार्थ आपको आमन्त्रित किया। कुछ वर्षों तक सन्यासी संस्कृत कालेज और शास्त्रार्थ महाविद्यालय में विभागाध्यक्ष रूप में अध्यापन करने के पश्चात् 20 अप्रैल 1980 को काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के साहित्य विभाग में लेक्चरर के रूप में आपकी नियुक्ति हुई तब से अप्रैल 2013 तक क्रमशः लेक्चर, रीडर, प्रोफेसर के रूप में कार्य करते हुए 30 जून 2013 को विश्वविद्यालयीय सेवा से अवकाश प्राप्त किया। आपको विश्वविद्यालय ने दो बार छात्रावास के प्रशासनिक संरक्षक का दायित्व दिया जिसका आपने सफलतापूर्वक निर्वहन किया तथा 18 वर्षों तक साहित्य विभागाध्यक्ष के गुरुतर दायित्व का वहन करते हुए विभाग को सर्वाधिंत किया।

प्रो. द्विवेदी जी ने अपने लगभग 38 वर्षों के अध्यापन काल में पारम्परिक संस्कृत साहित्य की शिक्षा देते हुए अनेक महत्वपूर्ण कार्य किये लगभग 25 शोध प्रबन्धों के सफल निर्देशन के साथ 50 से भी अधिक शोध पत्रों का आपने लेखन किया तथा लगभग 15 पुस्तकों का भी आपने प्रणयन किया। इनमें से कुछ आपके मौलिक काव्य हैं और कुछ प्राचीन ग्रन्थों के टीका ग्रन्थों के रूप में सुविदित हैं। आपने भारत के विभिन्न विश्वविद्यालयों, संस्थानों, नगरों में साहित्य शास्त्र से सम्बद्ध विषयों पर अत्यन्त गम्भीर व्याख्यान भी दिये जिससे काशी की पाण्डित्य पताका एक बार पुनः सम्पूर्ण देश में लहरा उठी। प्रो. द्विवेदी जी ने अनेक सम्मेलनों में, शोध संगोष्ठियों में अध्यक्षता करते हुए शास्त्रीय विषयों की गम्भीरता को सरल रूप में भी प्रतिपादित किया। आपकी विद्वत्ता से जो लोग परिचित हैं वे इन्हें अनेक शास्त्रों के तत्त्वदर्शी विद्वान् के रूप में मान्यता प्रदान करते हैं। सम्प्रति न केवल भारत में अपितु भारत से बाहर भी आचार्य द्विवेदी जी के शिष्य साहित्य शास्त्र की परम्परा का संवर्धन कर रहें हैं। इस अवसर पर आचार्य द्विवेदी जी के कुछ प्रमुख कृतियों के नाम का स्मरण करना चाहूँगा जो इस प्रकार है व्यक्तिविवेक की विवेकालोक टीका लगभग 900 पृष्ठ भारतजीवनम् खण्डकाव्य संग्रह, रसवसुमूर्ति मौलिक साहित्य शास्त्रीय ग्रन्थादि । सम्प्रति आचार्य द्विवेदी जी साहित्य शास्त्र के अन्य ग्रन्थों के समाधान के लिए और आने वाली अध्ययनशील पीढ़ियों के लिए अनेक मौलिक काव्यों एवं शास्त्र ग्रन्थों के निर्माण में संलग्न हैं।

1.4.2 चंद्रमौली द्विवेदी का सौंदर्य सिद्धांत—

प्रोफेसर चंद्रमौली द्विवेदी का सौंदर्य सिद्धांत- प्रोफ़ेसर द्विवेदी आधुनिक युग के परंपरावादी काव्य शास्त्री आचार्य हैं। संस्कृत काव्यशास्त्र परंपरा में काव्य में सौंदर्य के उत्पादक विभिन्न तत्वों को लेकर रस संप्रदाय ,अलंकार संप्रदाय ,रीति संप्रदाय, वक्रोक्ति संप्रदाय, औचित्य संप्रदाय आदि प्रमुख संप्रदाय हुए हैं ,व इन संप्रदायों को अपनी गहन व सूक्ष्म दृष्टि के द्वारा संपोषित करने वाले उनके आचार्य हुए हैं । आचार्य द्विवेदी भी आधुनिक युग में इस परंपरा के एक महनीय आचार्य हैं। यदि आचार्य द्विवेदी के सौंदर्य सिद्धांत की विवेचना करें तो स्पष्ट रूप से यह कहा जा सकता है कि वे काव्य सौंदर्य का प्राण भूत तत्त्व रस को ही मानते हैं। रस विषयक अपने ग्रंथ रसवसुमूर्त्ति में उन्होंने प्राचीन आचार्यों की परंपरा से प्राप्त सिद्धांतों वह उनके व्याख्यानों को लेकर भरत प्रतिपादित रस सिद्धांत की एक नवीन विवेचना प्रस्तुत की है, जिससे काव्य में उनके सौंदर्य बोध विषयक पुष्ट भावना का निदर्शन मिलता है। यद्यपि आचार्य ने पृथक् रूप से सौंदर्य सिद्धांत का प्रतिपादन नहीं किया है तथापि जिस प्रकार से अत्यंत सूक्ष्म दृष्टि से उन्होंने काव्य विषयक रस की विवेचना की है और काव्य का सर्वोत्कृष्ट प्राणभूत तत्त्व रस को स्वीकार करने की प्रवृत्ति का प्रदर्शन किया है उससे उनके सौंदर्य विमर्श का बोध हो जाता है ।तथापि काव्य का अस्तित्व यदि किसी तत्त्व से होता है तो वह सौंदर्य तत्व है।और यदि वह तत्त्व रस है तो रस ही सुंदर है वही काव्य का सौंदर्य है ।इस तरह आचार्य के अंतर्निहित प्रतिपाद्य को समझना चाहिए। आचार्य द्विवेदी रस को शिव का ही स्वरूप मानते हैं और सत्यं शिवं सुंदरम् की उनकी अंतर्निहित भावनाओं को रसवसुमूर्त्ति में उनके द्वारा विरचित मंगल पद्य प्रकट करता है जो कि इस प्रकार है-

अनिदमिति निषेधे मूलतत्त्वं यदीयं श्रुतिसुमतिभिरुक्तं सदरसो वै शिवः सः।

द्रुहिणमुनिहृदिप्राकाशि ऋक्सूत्रबद्ध तदिह विवरितुं कः स्यात्क्षमः चेन्न शेषः ।।

1.4.3 चंद्रमौली द्विवेदी का रस सिद्धांत—

काशी की संस्कृत साहित्य परंपरा के आधुनिक कालखंड में वर्तमान प्रोफेसर चंद्रमौली द्विवेदी जीने साहित्य शास्त्र में रस वसु मूर्ति नामक ग्रंथ लिख कर रस सिद्धांत विषयक विभिन्न मतों का समालोचन किया है तारिका तथा गद्य में लिखी गई इस पुस्तक में ध्वनि प्रस्थान के परम अचार्य आनंद वर्धन के मत का अवलंबन करते हुए अंगरक्षक क्रम व्यंग्य के आठ वेदों का सम्यक् निरूपण किया है इस ग्रंथ में आचार्य चंद्रमौली ने भारत के द्वारा प्राणी तरस सूत्र पर विशद रूप से विचार किया है एवं विचारणीय नए प्रश्न प्रस्तुत किए आचार्य द्विवेदी ने अंततोगत्वा अपनी शंकाओं का आधार आचार्य अभिनव गुप्त के रस सूत्र पर दिए गए व्याख्यान को ही माना है सरस्वती मूर्ति में प्रोफेसर द्विवेदी ने यह स्पष्ट रूप से सिद्ध किया है कि उत्पत्ति बाद स्वयं भरतमुनि का मत है परम परम तू आचार्य अभिनव गुप्त ने उससे भक्त लोलक एवं दंडी के नाम से प्रस्तुत कर दिया आचार्य द्विवेदी के अनुसार अभिनव गुप्त ने अपने शिवा गम की रस निष्पत्ति के सिद्धांतों को छुपाते हुए अभिव्यक्ति वाद का सिद्धांत दिया जिसे परवर्ती आचार्य भाव प्रकाशन कार शारदा तनहाई एवं विश्वेश्वर कविचंद्र ने प्रकट कर दिया इस प्रकार आचार्य द्विवेदी ने रस विवेक प्रस्तुत करने के लिए सभी आचार्यों के मतों का खंडन मंडन करते हुए रस निष्पत्ति की प्रक्रिया को सरलता से व स्पष्ट रूप से पाठकों के समक्ष रखा है।

आचार्य चंद्रमौली द्विवेदी का रस सूत्र विवेक-

रसबसुमूर्ति में आचार्य द्विवेदी ने रस सिद्धांत को स्पष्ट करने के लिए न केवल पूर्व आचार्यों के मतों का समालोचन किया है अपितु नए-नए प्रश्न भी उठाए हैं भूमिका भाग में विषय को स्पष्ट करते हुए इन प्रश्नों को वे इस प्रकार से लिखते हैं -

रस क्या है? क्या नाट्य में जो रस शब्दतः कहे गये हैं, वे स में हैं या वाद्यादि की ध्वनि से जो प्रस्तुत है वह रस है? क्या रस सभी नाट्यार्थों का प्रवर्तक या सभी नाट्यार्थ रसों के प्रवर्तक हैं? तथा **'विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः'** इस सूत्र का क्या अभिप्राय है?

यहाँ विभाव रामादि हैं, अथवा रामादि का अनुकर्त्ता नट है, नट में रामत्व की प्रतीति है, न कि नटत्वादि की प्रतीति है। विभाव कारण है या लिङ्ग (लीनमर्थ गमयतीति) है। यदि कारण है तो किसका कारण है स्थायि का या रस का, या दोनो का। यदि लिङ्ग है तो किसका लिङ्ग है। लिङ्ग होने पर भी सत्यतया है या असत्यतया है। लिङ्ग के असत्य होने पर कैसे लिङ्गि रत्यादि की सत्यतः सुखात्मकता है? विभाव का काव्यानुसन्धान हैं कि नहीं? अनुकार विभाव में घटित होता है या नहीं? अनुकार भी वंषभूषादि का है या वस्तुवृत्त का है? सांख्य की दृष्टि क्या सुखदुःखजनन युक्त बाह्य सामग्री है या नहीं? विभाव, प्रत्यायक हैं, उत्पादक हैं, अभिव्यञ्जक हैं, या भावक हैं? इत्यादि अनेक प्रश्न सम्भावित हो सकते हैं। इन सभी प्रश्नों का यथावकाश स्फोरण ग्रन्थ में वर्णित हैं।

'विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः' इस रस सूत्र के विषय में अपने ग्रंथ की भूमिका में आचार्य द्विवेदी लिखते हैं की इस सूत्र में दो पद हैं। पूर्व पद में पञ्चमी तथा उत्तर समस्त पद में प्रथमा विभक्ति है। समस्त पूर्वपदों में चार पद है, तथा उत्तर समस्त पद में दो पद हैं। प्रत्येक पद के क्या

अर्थ हैं एवं विभक्ति का क्या अर्थ है इसे बहुत से आचार्यों ने प्रदर्शित किया है। यहाँ हेतौ इस सूत्र से निर्दिष्ट पञ्चमी विभक्ति है। इसके अर्थ प्रतिपादन में जो जो हेतु सम्भावित हैं ,वे अनेक है कहीं अभिधा कहीं तात्पर्या, कहीं अनुमिति, कहीं भुक्ति कहीं अभिव्यक्ति, कहीं दोष विशेष आदि है। संयोग भी विभावादि तीन पदों में सम्यकयोग तथा प्रत्येक में मिश्रित होकर अपने उत्तरोपात्तविभक्त्यर्थ हेतु के साथ योग को नाना प्रकार से धारण करता है। इन सभी का योग अनुपात्त स्थायी के साथ है या रस के साथ द्वितीय पद रस भी अनेक प्रकार का है। जिस जिस हेतु के द्वारा वह सम्बद्ध होता है उस उस प्रकार से अपने को परिणमित करता है। वह सिद्ध है, व्यापार रूप वाला है, चर्वणा, रसनादि में उपचरित है। आचार्य द्विवेदी अपनी भूमिका में यह बात लिखते हैं कि अनेक विद्वानों द्वारा अनेक प्रकार से इस सूत्र का व्याख्यान किया गया है। यह नाट्य रस हैं अतः नाट्याद्रसः, नाट्यमेवरसः, नाट्ये रसः, नाट्यमाश्रित्य रस आदि अनेक प्रकार से विभाग किया गया है। इन सभी के मतो का प्रतिपादन आचार्य चंद्रमौली द्विवेदी ने अपने रस विषयक ग्रंथ रस वसु मूर्ति में किया है।

आचार्य द्विवेदी की व्याख्या के अनुसार सूत्रस्थ विभावादि प्रत्येक में रस है, ऐसा स्वीकार करने वालो के मत में शुद्ध विभाव रस है, शुद्ध अनुभाव रस है, शुद्ध व्यभिचारिभाव रस है तथा इनका संयोग रस है ऐसा विकल्प करते है। द्वन्द्वान्त में श्रूयमाण जो विभक्ति है उसका निर्वाचन करते हुए आचार्य द्विवेदी कहते हैं कि वह प्रत्येक के साथ मिलकर विभावाद्रसनिष्यत्तिः, अनुभावाद्रसनिष्यत्तिः, व्यभिचारिभावाद्रसनिष्यन्तिः तत्संयोगाद्रसनिष्यत्तिः इत्यादि सूत्र की व्याख्या करके कार्यकारण में अभेदोपचार से विभाव ही रस है, इत्यादि स्वीकृत है। इनके मतों में शुद्ध विभावादि से भी रसनिष्यत्ति देखी जाती है क्योंकि विभावादि प्रत्येक भावरूप है और भाव से रस निष्पत्ति देखी जाती है।

अपने रस सिद्धांत में आचार्य द्विवेदी किसी अन्य आचार्य के मत को ग्रहण करते हुए कहते हैं कि कि तत्संयोग भी रस है। जिसका अभिप्राय वे यह बताते हैं कि अनौचित्यादि से प्रवृत्त विभावादि रस नहीं है अपितु औचित्य से प्रवृत्त विभावादि से स्थायि संयुक्त होती है। अतः तत्संयोग (स्थायिसंयोग) ही रस है। अन्यथा विभावादि में कहीं भी रस नहीं है।

इस प्रकार रस क्या है इस प्रश्न के उत्तर में आचार्य द्विवेदी ने स्पष्ट किया है कि उक्त तीनों में जो चमत्कारी है वही रस है अन्यथा तीनों नहीं है। जैसा कि ध्वन्यालोकलोचन में भी कहा है- "अन्ये तु शुद्धं विभावं, अपरे शुद्धमनुभावं केचित्तु स्थायिमात्रं इतरे व्यभिचारिणम्, अन्ये तत्संयोगम् एके अनुकार्यम् केचन सकलमेव समुदायम् रसमाहुरिति"।

आचार्य द्विवेदी के अनुसार तीनों का संयोग रस है ऐसा स्वीकार करने वाले आचार्यों में प्रथम अभिधा द्वारा रसनिष्पत्ति स्वीकार करने वाले आचार्य भट्टलोल्लट हैं। आचार्य चंद्रमौली द्विवेदी जी के रस विषयक सिद्धांत का अध्ययन करके उनके द्वारा किए गए सूक्ष्म विवेचन से मम्मट की रस का प्रतिपादन करने वाली कारिका का प्रसिद्ध चार मतों के अनुसार अलग-अलग समन्वय किया जा सकता है। उनके द्वारा कई गूढ़ प्रश्नों को समाहित किया है। उदाहरण के तौर पर 'व्यक्तः स तैर्विभावाद्यैः स्थायी भावो रसः स्मृतः ।' यहाँ 'तैर्विभावाद्यैः' इस पद से यह शङ्का उत्पन्न होती है कि 'तैः' पद से पूर्वोक्त विभावादि का

ग्रहण हो जाने पर पुन: 'विभावादि' का शब्दत: ग्रहण करने से पुनरूक्त दोष प्रतीत होता है। ऐसे ही अनेक प्रश्न का उद्घाटन व समाधान यथास्थान इस ग्रन्थ है।

आचार्य द्विवेदी जी प्रमुख विशेषता यह है कि उनके द्वारा दिए गए सभी उदाहरण उनके स्वनिर्मित उदाहरण हैं। ग्रन्थकार ने नवीन शस्त्रसम्मत स्वरचित लक्षणोदाहरण द्वारा रस भाव रसाभास, भावाभास, भावशान्ति भावोदय, भावसन्धि, भावशबलता का भेदोपभेद पूर्वक विवेचन किया है। इन्हीं आठों को लेकर प्रस्तुत ग्रन्थ के नाम में 'वसु' शब्द उपात्त है।

अन्त में रस का नाट्यादि में बोध कराने वाली वृत्तियों का अत्यन्त सूक्ष्म विवेक किया गया है ये वृत्तियाँ है अभिधा, लक्षणा व्यञ्जना तात्पर्या भावना, रसना। इस सभी वृत्तियों के गम्भीर शास्त्रीय (मम्मट, जयदेव दीक्षित, पण्डितराज आदि आचार्यो के) मतों की उपस्थापना तथा यथोचित समर्थन, और समालोचना दिखलायी गयी है।

1.5 गिरधारी लाल शर्मा

1.5.1 गिरधारी लाल शर्मा का जीवनपरिचय व रचनाएं —

आचार्य पंडित गिरधारी लाल व्यास के पितामह का नाम श्री गंगाधर व्यास था। पं.गिरधारी लाल व्यास के पितामहा श्री गंगाधर व्यास मेणार ग्राम से उदयपुर आकर महाराज श्री सज्जन सिंह के पिता श्री शक्ति सिंह बागोर महाराज की सेवा में नियुक्त थे। श्री गंगाधर व्यास के पुत्र श्री गोवर्धन लाल गिरधारी लाल व्यास के पिता थे और इनकी माता श्रीमती रत्नाबाई थी। श्री रत्नाबाई और श्री गोवर्धन लाल की संतति के रूप में चैत्र मास के कृष्ण पक्ष में एकादशी तिथि को विक्रमी संवत 1950 को प्रातः कविवर श्री गिरधारी लाल शास्त्री ब्यास का जन्म हुआ। इनके जन्म के विषय मंद प्रताप दुर्ग के पंडित श्री जगन्नाथ शास्त्री ने लिखा है-

वर्षे व्योमशराङ्क-भू परिमिते श्रीवैक्रमे सौख्यदे मासे कृष्णमघैर्दिवाकरयुते चैकादशीवासरे।
नाना - नव्यनिबन्ध - निर्मितकरः प्रत्नेतिवृताकरः साहित्योदधि-मन्दरो गिरिधरः शास्त्री जनिं लब्धवान् ॥

पंडित कविवर गिरधारी लाल व्यास ने हिंदी संस्कृत मेदपाटी आदि भाषाओं में प्रवीणता प्राप्त की थी ।वह इन भाषाओं में समान अधिकार के साथ काव्य, गद्य ,कथा, साहित्य, इतिहास, भाषा विज्ञान और पाठ्यपुस्तक इत्यादि की रचना किए। उनकी हिंदी भाषा में लिखित ग्रंथों में प्रमुख हैं भागवत रहस्य, हिंदी सरल व्याकरण, जातीय इतिहास, श्री दुर्गा जी इत्यादि। राजस्थान की मेदपाटी भाषा में प्रणवीर प्रताप, मेघदूत का मेदपाटी भाषा में रूपांतरण, शकुंतला, गंगा लहरी, करुणा लहरी, मोहरीमोगरी, मालविकाग्निमित्रम् ,भक्तामरस्तोत्र, अमर वाणी आदि रचनाएं प्रमुख हैं। संस्कृत भाषा में विरचित ग्रंथों में पाणिनीय प्रवेशिका ,भाषा विज्ञान की रूपरेखा ,संस्कृत पाठावलिः, कृष्णचरितम्, आत्मचरित, चित्रकूटदर्शनम् ,गीतामृतम्, अभिनव काव्यप्रकाश आदि महत्वपूर्ण रचनाएं हैं।

कभी की इन रचनाओं से प्रतीत होता है कि प्रौढ पांडित्य संपन्न यह कवि बहुमुखी प्रतिभा से विशिष्ट व्यक्तित्व का धनी था। महाराणा मेवाड़ फाउंडेशन ट्रस्ट ने हारीत ऋषि पुरस्कार, राजस्थान संस्कृत अकादमी जयपुर के द्वारा माघ पुरस्कार से इस महान विभूति को पुरस्कृत किया। आजीविका के रूप में गिरधारी लाल व्यास ने अध्यापक होना स्वीकार किया। अपनी कुशल शिक्षण पद्धति व विषय के प्रगाढ ज्ञान से सुदीर्घ छात्र समुदाय को उपकृत किया। विक्रम संवत् 2072 कार्तिक मास में आधुनिक संस्कृत साहित्य जगत का यह सूर्य अस्त हो गया पर उसकी रचना किरणें आज भी संस्कृत साहित्य जगत को उपकृत करती हैं।

अभिनव काव्यप्रकाश गिरधारी लाल व्यास की प्रौढतम साहित्य शास्त्रीय रचना है।

1.5.2 गिरधारी लाल शर्मा का सौंदर्य सिद्धांत—

सङ्गीत, काव्य, चित्र आदि की तरह सूर्य और चन्द्र के उदय आदि प्राकृतिक दृश्यों में लोगों का चित्त एक विलक्षण अर्थ (-सौन्दर्य) का आलोचन करके आनन्द का अनुभव करता है ।इन दिनों, पाश्चात्य विद्वानों तथा हम लोगों में, जिन्होंने पाश्चात्य शास्त्रों का परिशीलन किया है, 'ईस्थैटिक' इस नाम का नया विद्या प्रस्थान सुविदित है। उसी का अनुवाद प्रायः 'सौन्दर्यशास्त्र' किया जाता है। इस शास्त्र का मुख्य प्रतिपाद्य, (शाब्दिक) व्युत्पत्ति की दृष्टि से ऐन्द्रिय प्रत्यक्ष का आस्वाद्य विषय-विशेष है, किन्तु प्रवृत्ति (व्यवहार) की दृष्टि से 'स्वलक्षण" की भाँति, अतुलनीय, अनिर्वाच्य जैसा (होने पर) भी समालोचना के योग्य, अर्थकार से अवच्छिन्न अतिशय-विशेष, जिसे दूसरे शब्द में 'चमत्कार' कहते हैं, 'सौन्दर्य' है, ऐसा कह सकते हैं। आचार्य गिरधारी लाल शर्मा भी दोष निरूपण में यह मानते हैं कि दोष सौंदर्य के वि घातक होते हैं।सौन्दर्य का निर्णय कैसा और किसके आधार पर हो तथा रूप कैसे, किसलिए सर्जित होते हैं, इस प्रकार चिन्तन से, तर्कशास्त्र में जिस प्रकार नाना विद्याओं की एकरूपता है उसी प्रकार, यहाँ कला आदि तत्त्व के सम्बन्ध में मानना चाहिए। आचार्य गिरधारी लाल काव्य में सौंदर्य का प्राण भूत तत्व रस ही मानते हैं, क्योंकि वे आचार्य मम्मट के काव्यशास्त्र को ही अपना आदर्श मानते हैं। वह काव्य के प्राण भूत तत्व रस के प्रति दोषों को अत्यंत विघातक मानते हैं ।इसलिए काव्य सौंदर्य का संरक्षण करने के लिए दोषहान पर विशेष जोर देते हैं। अपने अभिनव काव्य प्रकाश ग्रंथ के द्वितीय खंड में काव्य में निर्दोषता के महत्व को अत्यंत मार्मिकता के साथ प्रस्तुत किया है।

शरीरं सुन्दरमपि श्वित्रेण स्यादसुन्दरम् ।
अन्यो गुणोऽस्तु वा मास्तु महान् निर्दोषतागुणः ।
सुनिर्मितं काव्यमधि दोषयुक्तं न शोभते ॥

वस्तुतः सदोषं सुन्दरमपि काव्यमुद्वेजयति सभ्यान्। अतएव दोषलक्षणं कृतमस्ति-'उद्वेगजनको दोषः सभ्यानामिति । यद्यपि गुण और अलंकार काव्य सौंदर्य के संपादक तत्व हैं परंतु इन से भी ज्यादा महत्वपूर्ण है कि काव्य में दोष ना हो। यद्यपि दोष के लक्षण में काव्यप्रकाशकार आचार्य मम्मट से अभिनवकाव्यप्रकाशकार की सम्मति नहीं है तथापि काव्यसौंदर्य के प्राण भूतत्व रस के विषय में कोई भी विमति भी नहीं है।

1.5.3 गिरधारी लाल शर्मा का रस सिद्धांत—

आचार्य पंडित गिरधारी लाल ने रस के विषय में सम्यक् निरूपण किया है । यद्यपि ध्वनि के विषय में कवि ने तीन उन्मेष में लिखा तथापि तीनों उन्मेष में लिखे गए श्लोक रस संबंधित श्लोक की तुलना में न्यून है। रस प्रसंग के वर्णन में व्यभिचारी भाव के विषय में लिखा है कि व्यभिचारी भावों का दो प्रकार से विभाग किया जा सकता है। कुछ व्यभिचारी शरीर के भाव हैं और कुछ व्यभिचारी मानस के भाव हैं ।इस तरह शरीर के भाव और मन के भाव के भेद से दो भेद व्यभिचारी के स्पष्ट रूप से किए हैं। शारीरभावानाम् नामानि परिगणयन् (1) ग्लानि (2) मद (3) श्रम (4) आलस्यम् (5) मोह (6) जड़ता (7) निद्रा (8) अपस्मार (9) सुप्ति (10) प्रबोध (11) व्याधि (12) उन्माद (13) मरण' एते त्रयोदशभावाः शारीराः भावाः सन्ति। शेषाः विंशतिभावाः मानसाः सन्ति ।' यद्यपि भरतः एतान् सर्वान् भावान् मानसान् एव अङ्गीकरोति तथापि ग्रंथेऽस्मिन् विभागद्वयम् कृतम्।

इस प्रकार तेरा भाव शरीर के और शेष 20 भाव मन के बताए गए हैं जबकि भरत इन सभी 33 व्यभिचारी भावों को मानस रूप में ही स्वीकार करते हैं।

अत्र केचन शारीरा मानसाः केचनोदिताः।
परं ते मानसा एव भरतादिभिरी रीताः । अभिनव काव्यप्रकाश 3/360
आलस्यमोहजडता निद्रापरस्मारसुप्तयः ।
प्रबोधो व्याधिरून्मादो मरणं च त्रयोदश॥ तदेव 3/361-62
मन्यमानीऽपि शारीरान्मानसान्भरतोऽब्रवीत् ।
शिष्टा वै विंशतिर्भावा विबुधैर्मानसा मताः ॥ तदेव 3/362-363

20 मानस व्यभिचारिभाव में से भी शंका और त्रास का अंतर भाव स्थाई भाव में करते हैं। इसी प्रकार दैन्य और विषाद का अंतरभाव निर्वेद में, धृति और हर्ष भी कवि के मत में सामान्य अर्थ के बोधक ही हैं इसलिए उनको एक ही स्वीकार कर मानस भावों की संख्या 15 ही हो जाती है। इस प्रकार संपूर्ण रूप से व्यभिचारी भाव की संख्या 28 ही कवि को अभिमत है।

इत्थं शङ्कात्रासौ हि नोचितो व्यभिचारिषु ।
भयशब्देन निर्वाहात्स्थायिनेति विपश्चितः ।
दैन्यं विषादो निर्वेदः समानार्थाः कथञ्चन ।
शान्तस्य स्थायिभावेन निर्वदेन गतार्थता ॥
तथैव धृतिहर्षो च समानार्थावुदीरितौ ।
निर्वेदः शमसाम्राज्ये निर्विण्णः श्वसिति क्वचित् ।।

1.6 सारांश

इस पाठ में बिंदुवार दिए गए आधुनिक काव्य शास्त्रियों के जीवन परिचय एवं आधुनिक काव्यशास्त्र में उनके द्वारा दिए गए योगदान के विवरण से आप संस्कृत साहित्य के प्रमुख आधुनिक काव्य शास्त्रियों के जीवन को जान सके हैं। साथ ही उनके कार्यों की चर्चा से उनके द्वारा किए गए विविध

प्रकार के संस्कृत काव्य शास्त्रीय योगदान से भी परिचित हो सके हैं। इन सब चर्चाओं से निष्कर्ष रूप में यह बात सामने आती है कि जितनी गौरवशालिनी संस्कृत काव्यशास्त्र की पुरातन परंपरा रही है उतनी ही उज्जवल व समृद्धि आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र की परंपरा भी बन रही है।

हमने इस अध्याय में विविध काव्य शास्त्रियों के ग्रंथों का सामान्य परिचय प्राप्त किया है जो कि हमको संस्कृत के आधुनिक काव्य शास्त्र के विविध आयामों से परिचित करवाता है। इस पाठ के अध्ययन से हम यह भी जान पाए हैं कि किस तरह काल का प्रभाव काव्य और काव्यशास्त्र पर भी देखने को मिलता है विभिन्न कवियों और काव्य शास्त्रियों की रचना धर्मिता पर काल का प्रभाव होता है यह हम आधुनिक काव्यशास्त्र की श्रृंखला के अध्ययन से जान पाए हैं। एक बात विशेष रूप से सामने आती है कि संस्कृत का परंपरागत पूर्व का काव्यशास्त्र आधुनिक रचनाकारों द्वारा निर्मित काव्यशास्त्र की आधार भूमि है अतः आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र की जो आधार भूमि है वह अत्यंत सुदृढ़ है इसलिए आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र के छात्रों को बहुआयामी चिंतन का अवसर इस पाठ के अध्ययन के उपरांत प्राप्त होता है।

1.7 शब्दावली

सर्जन	-	रचना \लेखन
प्रकृत ग्रन्थ	-	जिस ग्रन्थ की चर्चा की जा रही हो
कवितावनिता	-	कविता रूपी नायिका
ह्लाद	-	सुख\आनन्द
चर्वणा	-	रसानुभव की प्रक्रिया
उद्गार	-	हृदय से निकलने वाले भाव
अभिषिक्त	-	बैठाया गया
मर्मज्ञ	-	तत्त्वज्ञ
स्वोपज्ञ	-	स्वयं के द्वारा रचित
अभिनन्द्य	-	अभिनन्दन करके

1.8 अभ्यासार्थ प्रश्न- उत्तर

बोध/अभ्यास प्रश्न-

1. सौंदर्य दर्शन विमर्श किसकी रचना है?

उत्तर.आचार्य गोविंद चंद्र पांडे की

2.रस शब्द का प्रयोग किन अर्थों में हुआ है?

उत्तर.श्रृंगार आदि रस, विष, वीर्य, गुण इत्यादि अर्थ में।

3.प्रोफेसर चंद्रमौली द्विवेदी पिता का नाम क्या था?

उत्तर.पंडित अंबिका प्रसाद द्विवेदी।

4.रसवसु मूर्ति के लेखक कौन हैं?

उत्तर.प्रोफेसर चंद्रमौली द्विवेदी।

5.आचार्य लाल शर्मा का जन्म कब हुआ था?

उत्तर.चैत्र मास कृष्ण पक्ष एकादशी तिथि संवत 1950 को।

6.आचार्य गिरधारी लाल शर्मा के अनुसार व्यभिचारी भाव की संख्या कितनी अभिमत है?

उत्तर.28

1.9 उपयोगी पुस्तकें

1.रसवसुमूर्ति- प्रोफेसर चंद्रमौली द्विवेदी- समग्या प्रकाशन वाराणसी

2. संस्कृत काव्यशास्त्र का आलोचनात्मक इतिहास- रीवा प्रसाद द्विवेदी -कालिदास संस्थान वाराणसी 2007

3. संस्कृत साहित्य का समग्र इतिहास -राधावल्लभ त्रिपाठी- न्यू भारतीय बुक कॉरपोरेशन 2018

4. सौंदर्य दर्शन विमर्श- आचार्य गोविंद चंद्र पांडे- राका प्रकाशन इलाहाबाद प्रथम संस्करण 2003

5. अभिनव काव्यप्रकाश- गिरधर लाल व्यास

4.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पंडित गिरधरलाल व्यास का जीवन परिचय एवं रस सिद्धांत पर विस्तार से प्रकाश डालिए।

2. प्रोफेसर चंद्रमौली द्विवेदी के रस विषयक अभिमत को विस्तार के साथ समझाइए।

3. आचार्य गोविंद चंद्र पांडे के सौंदर्य सिद्धांत पर विस्तार से प्रकाश डालिए।

4. प्रोफ़ेसर चंद्रमौली द्विवेदी एवं आचार्य गोविंद चंद्र पांडे का जीवन परिचय एवं रचना परिचय एक काव्य शास्त्री के रूप में उपस्थापित करें।

इकाई-02 अलंकार एवं चतुर्धाम सिद्धान्त

प्रोफेसर रेवा प्रसाद द्विवेदी, प्रोफेसर राधावल्लभ त्रिपाठी

इकाई की रूप रेखा

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 प्रोफेसर रेवा प्रसाद द्विवेदी

- 2.3.1 प्रोफेसर रेवा प्रसाद द्विवेदी का परिचय
- 2.3.2 रेवा प्रसाद द्विवेदी का अलंकार सिद्धान्त
- 2.3.3 रेवा प्रसाद द्विवेदी का चतुर्धाम सिद्धान्त
- 2.3.4 रेवा प्रसाद द्विवेदी का काव्यशास्त्रीय वैशिष्ट्य

2.4 प्रोफेसर राधावल्लभ त्रिपाठी

- 2.4.1 प्रोफेसर राधावल्लभ त्रिपाठी का परिचय
- 2.4.2 राधावल्लभ त्रिपाठी का अलंकार सिद्धान्त
- 2.4.3 राधावल्लभ त्रिपाठी का काव्य शास्त्रीय वैशिष्ट्य

2.5 सारांश

2.6 शब्दावली

2.7 अभ्यास प्रश्न उत्तर

2.8 उपयोगी पुस्तकें

2.9 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

संस्कृत साहित्य की विविध विधाओं में वर्तमानकालीन आचार्यों ने विपुल साहित्य का सर्जन किया है। काव्यकर्त्ता पूर्वकृत ग्रन्थों के अध्ययन से शाखाभ्यास कर अपनी प्रतिभा के द्वारा काव्यरचना करता है। आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र में प्राचीन परंपरागत संस्कृत काव्यशास्त्र का एवं वेद मूलक अन्य शास्त्रों का गहन मनन चिन्तन करके नवीन उपस्थापन करने वाले मनीषी महामहोपाध्याय आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी एवं इसी परंपरा को अत्यंत आधुनिक कलेवर प्रदान करते हुए काव्यशास्त्र के ग्रंथों का पूर्ण करने वाले आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी इस युग की महान विभूति हैं। ललित काव्य विधाओं का प्रणयन एवं अनुकूल काव्यशास्त्र की रचना का अद्भुत संगम इन आधुनिक विद्वानों में सहज देखने को मिलता है। महामुनि भरत से प्रारंभ होने वाली संस्कृत काव्यशास्त्र की परंपरा को भामह, दंडी, रुद्रट कय्यट, आनंदवर्धन, कुंतक आदि बहुतेरे आचार्यों ने आगे बढ़ाया है। अनेक ग्रंथ लिखे हैं। अनेक काव्य शास्त्रीय संप्रदायों की स्थापना हुई है । काव्य की आत्मा या प्राणभूत तत्व के रूप में रस, अलंकार, रीति, औचित्य, वक्रोक्ति, ध्वनि आदि को प्रतिष्ठापित किया गया है। इन सब का सूक्ष्म दृष्टि से आधुनिक संदर्भ में अवलोकन करते हुए विकासोन्मुखी प्रवृत्ति को लेकर चलने वाले आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी एवं आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी ने काव्य सिद्धांतों को नए रूप में परिभाषित किया है। हम इस पाठ में इन दोनों महनीय आचार्यों के काव्यशास्त्र विषयक विभिन्न मतों का सुगमता से ज्ञान प्राप्त करेंगे।

अर्वाचीन संस्कृत साहित्य में जिस प्रकार विद्वान् आचार्यों ने काव्य की अन्यान्य विधाओं यथा- नाटक, खण्डकाव्य, महाकाव्य आदि में ग्रन्थ रचनाएँ की हैं, उसी प्रकार काव्यशास्त्र की पूर्ववर्ती परम्परा के अनुरूप 20 वीं शताब्दी (वर्तमान तक) के भी विभिन्न विद्वान् काव्यशास्त्र विचक्षणों ने काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों की रचना की है। किन्हीं विद्वानों ने काव्यशास्त्र के किसी एक विषय तथा कतिपय ने लगभग सम्पूर्ण विषयों पर अपनी मौलिक अवधारणाओं को अभिव्यक्त किया है। प्रस्तुत इकाई में हम आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी एवं आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी के द्वारा काव्यशास्त्र को दिए गए अवदान एवं उनके ग्रंथों के विषय में अध्ययन करेंगे।

2.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप—

- ❖ प्रो. रेवा प्रसाद द्विवेदी का परिचय तथा अलंकार सिद्धान्त के बिषय में जान सकेगें।
- ❖ प्रो. रेवा प्रसाद द्विवेदी का चतुर धाम सिद्धान्त एवं काव्यशास्त्रीय वैशिष्ट्य के बिषय में जान सकेगें।
- ❖ प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी का परिचय तथा अलंकार सिद्धान्त के बिषय में जान सकेगें।
- ❖ प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी का काव्यशास्त्रीय वैशिष्ट्य के बिषय में जान सकेगें।

2.3 प्रोफेसर रेवा प्रसाद द्विवेदी

2.3.1 प्रोफेसर रेवा प्रसाद द्विवेदी का परिचय

रेवा प्रसाद द्विवेदी (22 अगस्त 1935 - 22 मई 2021) संस्कृत के विद्वान, कवि, लेखक, शिक्षक और आलोचक थे। उनकी मूल रचनाओं में महाकाव्य और गीत, नाटक और गद्य के रूप में कविता शामिल है। उन्होंने छद्म नाम "सनातन" के तहत नया साहित्य लिखा, जिसका अर्थ है 'शाश्वत'।

रेवा प्रसाद द्विवेदी संस्कृत साहित्य के लब्धप्रतिष्ठ महाकवि, नाटककार तथा समीक्षक हैं। इनका जन्म 22 अगस्त 1935 ई० में मध्य प्रदेश राज्य के सीहोर (जनपद) के ग्राम नादनेर में हुआ था। इनके पिता का नाम पंडित नर्मदा प्रसाद दुबे था। इनका मूल निवास स्थान कड़ा, इलाहाबाद के निकट था। किन्तु कालांतर में ये मध्यप्रदेश के स्थाई निवासी हो गए। इनके पिता ज्योतिषाचार्य एवं संस्कृत के प्रकांड विद्वान थे।

इन्होंने संस्कृत में एम.ए., साहित्याचार्य, पीएचडी एवं डिलीट किया ये 1959 1971 ई. तक मध्य प्रदेश में रीडर रहे। 1971-1990 तक हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी में संस्कृत के प्रोफेसर, विभागाध्यक्ष तथा संकायप्रमुख रहें । ये काव्यशास्त्र मर्मज्ञ एवं सहृदय कवि हैं। इनकी विविध शास्त्रों में अप्रतिहत गति है। इनकी अनेक रचनाएं हैं- तीन महाकाव्य उत्तरसीताचरितम्, स्वातन्त्र्यसंभवम् तथा कुमारविजयम् । अन्य काव्य शतपत्रम्, मतान्तरम्, शरशय्या, संस्कृतीरकम, प्रतीक्षा इत्यादि ।

'स्वातन्त्र्यसंभवम्' आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी द्वारा रचित एक महाकाव्य है। इसमें 75 सर्ग हैं तथा 6064 श्लोक हैं। सन् 1857-2011 तक का भारतीय इतिहास में वर्णित है। 1 से 13 सर्ग तक पंडित मोतीलाल नेहरू का वर्णन है। 14 से 75 सर्गों तक का इतिहास कवि के जीवन काल की घटित घटनाओं पर आधारित है।

'स्वातन्त्र्यसंभवम्' स्वातंत्र्य का अर्थ वही है जो शैवशास्त्र में है। स्वातंत्र्य काश्मीर की शैवदर्शन में मोक्ष के लिए प्रयुक्त परिभाषा है। स्वातन्त्रयस्य संभवः जन्म महिमातिशयश्च यत्र वर्णितः तत् काव्यम् स्वातन्त्र्यसम्भवम् अर्थात देशभक्त सेनानायकों का देश को स्वतंत्रता प्राप्त कराने में प्रकट किए गए महिमातिशय अपूर्व पराक्रम का वर्णन जिसमें है वह 'स्वातन्त्र्यसंभवम्' काव्य है।

काव्य में एक और स्वाधीनता संग्राम का चित्रण है तो दूसरी और व्यक्तिगत स्वातंत्र्य अर्थात् मोक्ष का। इन्होंने इसमें महारानी लक्ष्मीबाई, कमलानेहरू, मोतीलालनेहरू, लाल बहादुर शास्त्री, श्रीमती इंदिरा गांधी की जीवन की झांकियों को प्रमुखता से चित्रित किया है।

'काव्यालङ्कारकारिका', 'साहित्यशारीरकम्', 'नाट्यानुशासनम्' (१ से ५ उन्मेष - नाट्यानुशासनम्, भरतदर्शनम्, नाट्यशारीरकम्, कलासमाधिः तथा रसभोगः), 'सौन्दर्यपञ्चाशिका' तथा 'अलं ब्रह्म' के रचयिता प्रोफेसर रीवा प्रसाद द्विवेदी का साहित्य के शास्त्रीय पक्ष में भी बहुत बड़ा योगदान है।

2.3.3 रेवा प्रसाद द्विवेदी का चतुर्धाम सिद्धान्त -

चतुर्धाम सिद्धांत—

आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी अपने अभिनव काव्य शास्त्रीय चिंतन के लिए जाने जाते हैं। काव्यशास्त्र के संबंध में उनका चतुर्धाम सिद्धांत अत्यंत लोकप्रिय है।साहित्यशारीरकम नामक ग्रंथ में उन्होंने विशेष रुप से साहित्य के चतुर्धाम सिद्धांत पर चर्चा की है। साहित्य में रेवा प्रसाद द्विवेदी के चतुर धाम सिद्धांत का आधार आचार्य राजशेखर की काव्यमीमांसा में काव्य पुरुष के पीछे पीछे भागती हुई

साहित्यविद्यावधू द्वारा विभिन्न ना प्रदेशों में ग्रहण किए गए वेशभूषा इत्यादि के आधार पर बनी रीति वृत्ति के स्वरूप को माना जा सकता है।

प्रथम धाम—

आचार्य द्विवेदी के अनुसार प्रथम धाम काञ्ची धाम है, जहां के आचार्य दंडी थे। आचार्य भरत का भी उधर ही अधिक प्रचार-प्रसार दिखाई पड़ता है। अतः काव्यशास्त्र की दृष्टि से उन्होंने इसे काव्यशास्त्र के प्रथम धाम के रूप में माना है।

द्वितीय धाम—

द्वितीय धाम के रूप में शारदा पीठ कश्मीर का वर्णन किया गया है। शारदा पीठ या शारदा धाम के नाम से जाने जाने वाले कश्मीर को आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी ने भामह,बामन,उद्भट ,आनंदवर्धन, अभिनवगुप्त, क्षेमेंद्र, कुंतक और मम्मट की जन्मभूमि, कर्मभूमि, विद्याभूमि, तपोभूमि होने के कारण द्वितीय धाम माना है।

तृतीय धाम—

महाराज भोजदेव के नाम से विख्यात धारा नगरी को तृतीय धाम के रूप में स्वीकार किया है। धारा नगरी महाकालेश्वर धाम के नाम से भी प्रसिद्ध है। इस धाम के प्रमुख आचार्य धनक धनंजय भोज देव आदि हैं।

चतुर्थ धाम—

चतुर्थ धाम के रूप में भगवान विश्वेश्वर एवं मां अन्नपूर्णा की भूमि, ज्ञान भूमि के नाम से प्रसिद्ध काशी को बताया है। काशी में श्री अप्पयदीक्षित, पंडितराज जगन्नाथ और विश्वेश्वर पंडित हुए हैं। स्वयं को भी इसी परंपरा का आचार्य मानते हुए रेवा प्रसाद द्विवेदी बताते हैं कि इसी चतुर्थ धाम में मेरा भी निवास है।

आचार्य द्विवेदी आगे कहते हैं कि हमारी स्थापना है कि 'काव्य एक प्रातिभ वस्तु है, अत: उसे ज्ञानात्मक और इसीलिए गुणपदार्थ मानकर विचार करना उचित है धर्मधर्मिभाव और उनके संबन्ध का। ऐसा करने पर काव्य में धर्मधर्मिभाव तादात्म्य सम्बन्ध पर निर्भर रहेगा। अग्निपुराण में प्राप्त 'अहमागम' इस शास्त्र का आगम है, जिसे शृङ्गारवादी भोज से मान्यता प्राप्त है। 'अहंकार' का 'कार' स्वार्थक प्रत्यय है, अत: 'अहङ्कार' शब्द का अर्थ ठहरता है केवल 'अहम्'। यह 'अ' से 'ह' तक का एक प्रत्याहार है जो समग्र का द्योतक है। ब्रह्मरूप होने से जिसमें आनन्द की मात्रा रहती है, अतः आनन्द की अनुभूति कराने वाले सभी काव्यधर्मों की आत्मा यही तत्त्व है। क्योंकि इसे 'अलं' कहा गया है, अतः अलंकार ही काव्यात्मा है।

2.3.4 रेवा प्रसाद द्विवेदी का काव्यशास्त्रीय वैशिष्ट्य

आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी ने काव्यालंकारकारिका नामक अपने ग्रंथ में जो कि 1976 में प्रकाशित हुआ, अलंकार को ही काव्य की आत्मा घोषित किया है। अलंकार को काव्य की आत्मा मानने में आचार्य का तर्क है कि यदि रस को सहृदय का धर्म मानते हैं तो उसे काव्य की आत्मा नहीं कहा जा सकता। क्योंकि सहृदय और काव्य दोनों अलग-अलग शरीर हैं।अन्यकाय में स्थित वस्तु को अन्यकाय की आत्मा मानना तर्क और व्यवहार दोनों की दृष्टि से विरुद्ध कथन होगा। आचार्य द्विवेदी ने अपने इस ग्रंथ में काव्यशास्त्रीय विचार के दो केंद्र माने हैं-

१. प्रमेयनिष्ठ तथा

२. प्रमातृनिष्ठ

प्रमाता यानी सहृदय का प्रमातृचैतन्य। इसी प्रकार प्रमेय यानी विभावानुभावादि सामग्री, जिसमें काव्य, काव्याङ्ग और उनकी सभी विशेषताएँ आ जाती है। इन दोनों पक्षों में से किसी एक के अनुसार काव्यमीमांसा प्रस्तुत होती है तो न कोई आपत्ति आती न मर्यादा टूटती। असङ्गति इनके मिश्रण से उत्पन्न होती है।

इस ग्रन्थ में प्रमेय सामग्री को वाच्य भी माना गया और प्रतीयमान भी, किन्तु प्रतीयमान की प्रतीति के लिए प्रमाणव्यवस्था महर्षियों द्वारा निर्धारित ही मानी गई, ध्वनिवादी आचार्यों के समान नई व्यवस्था नहीं। ऋषियों ने प्रतीयमान की प्रतीति में जिस प्रमाण को उपयोगी बतलाया था वह था अनुमान। 'अनुमीयमान' को प्रतीयमान कहा जाता भी रहा। यह अनुमान हेतु से साध्य की सिद्धि की प्रक्रिया थी। इसमें प्रामाणिकत्व का विचार नहीं था। हेतु यदि अनिश्चित है तो उससे यदि कोई बात नहीं बनेगी तो वह है प्रतीयमान का प्रामाणिकत्व, न कि स्वयं प्रतीयमानत्व। इस तर्क के आधार पर व्यञ्जना और ध्वनि की आवश्यकता नहीं रहती। यह भी कहा गया है कि 'ध्वनि के विरुद्ध जो जो आपत्तियाँ खड़ी की गई है वैसा वास्तविक है और आचार्य आनंद वर्धन द्वारा किया गया उनका खंडन अमान्य है।

आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी का काव्यशास्त्र के अलंकार सिद्धांत के संबंध में प्रसिद्ध सिद्धांत अलं ब्रह्म का सिद्धांत है। उन्होंने सर्वाधिक महत्त्व की बात यह कही है कि शब्द जड़ है। शक्ति चेतनधर्म है। यदि शब्द में कोई शक्ति होती जैसे सूर्य में प्रकाश, तो, सारे संसार की भाषा एक ही होती। इसके ऊपर यह भी एक तथ्य प्रकाश में आया कि अलंकार का अर्थ है 'अलं तत्त्व' जैसे 'ॐ कार' का ॐ तत्त्व। 'अलं' पर्याय था 'ब्रह्म' का । अतः काव्य की आत्मा 'ब्रह्म' यह सिद्धान्त प्रकाश में आया। यह ऐसा सिद्धान्त है जिसे प्रकारान्तर से सभी आचार्यों ने स्वीकृति दे रखी है। जो चमत्कार है, वह आनन्द ही है और आनन्द ही है काव्य के सभी धर्मों का फल। फलत: यह सिद्धान्त आगमसंमत ही है कि 'काव्य की आत्मा है अलं तत्त्व' । यह सर्वथा नवीन खोज थी। इसी प्रकार अग्निपुराण के आधार पर काव्यशास्त्र के आगम की संज्ञा अलंकारागम निश्चित की गई, जिसके साथ न किसी संप्रदाय का विरोध है न दर्शनशास्त्र के मार्ग का।

अलं शब्द अग्निपुराण में ब्रह्म का पर्याय माना गया है । उसमें लगा 'कार' स्वार्थक प्रत्यय है यथा अहङ्कार में। अलङ्कार यानी अलं तत्त्व यानी ब्रह्मतत्त्व अतः काव्य शास्त्र को ब्रह्मविद्या कहा जा सकता है । ब्रह्म यानी आनन्द यानी रस इस प्रकार काव्यशास्त्र सीधे सीधे दर्शनशास्त्र की पंक्ति में पहुँचा मिलता है । आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी का काव्यशास्त्र स्थापना है कि 'काव्य एक प्रातिभ वस्तु है, अत: उसे ज्ञानात्मक और इसीलिए गुणपदार्थ मानकर विचार करना उचित है धर्मधर्मिभाव और उनके संबन्ध का। ऐसा करने पर काव्य में धर्मधर्मिभाव तादात्म्य सम्बन्ध पर निर्भर रहेगा। अग्निपुराण में प्राप्त 'अहमागम' इस शास्त्र का आगम है, जिसे शृङ्गारवादी भोज से मान्यता प्राप्त है। 'अहंकार' का 'कार' स्वार्थक प्रत्यय है, अत: 'अहङ्कार' शब्द का अर्थ ठहरता है केवल 'अहम्' । यह 'अ' से 'ह' तक का एक प्रत्याहार है जो समग्र का द्योतक है। ब्रह्मरूप होने से जिसमें आनन्द की मात्रा रहती है, अतः आनन्द की अनुभूति कराने वाले सभी काव्यधर्मों की आत्मा यही तत्त्व है। क्योंकि इसे 'अलं' कहा गया है, अतः अलंकार ही काव्यात्मा है।

2.4 प्रोफेसर राधावल्लभ त्रिपाठी

2.4.1 प्रोफेसर राधावल्लभ त्रिपाठी का परिचय—

राधावल्लभ त्रिपाठी का जन्म १५ फरवरी सन् १९४९ (फाल्गुन कृष्ण पक्ष तृतीया, संवत् २००५ विक्रमी) को मध्यप्रदेश के राजगढ़ जिले में पं. गोकुल प्रसाद त्रिपाठी तथा श्रीमती गोकुल बाई के द्वितीय पुत्र के रूप में हुआ। पं. गोकुल प्रसाद त्रिपाठी संस्कृत एवं हिन्दी साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान्, कवि तथा समीक्षक थे। पिता के साहित्यिक अभिरुचि की प्रबल छाप शिशु राधावल्लभ पर पड़ी। डॉ. गोकुल प्रसाद त्रिपाठी मध्यप्रदेश शासन के उच्चतर शिक्षा विभाग में कार्यरत रहते हुए सन् १९७८ में शासकीय महाविद्यालय, छतरपुर से सेवानिवृत्त हुए।

बालक राधावल्लभ की अवस्था मात्र तीन वर्ष ही थी तभी माता का देहावसान हो गया। माता गोकुल बाई का असामयिक निधन तथा शासकीय सेवा में होने से पिता का बार बार स्थानान्तरण शिशु राधावल्लभ के लिए कष्टकर थे। पिता के साथ रहते हुए भी बालक राधावल्लभ ने ८-१० साल की आयु से ही लेखन एवं अध्ययन को अपना अवलम्ब बनाया। उनकी यह साधना विकसित होकर आज विशाल कल्पवृक्ष के रूप में हमारे पास है जिससे अगणित संस्कृत काव्यशास्त्र प्रेमी उपकृत हो रहे हैं।

पिता पं. गोकुल प्रसाद त्रिपाठी ने ज्येष्ठ पुत्र हरिवल्लभ के साथ ही राधावल्लभ को भी विज्ञान एवं गणित आदि की शिक्षा की ओर अग्रसर किया। प्राथमिक शिक्षा के समय से ही राधावल्लभ अपनी प्रखर मेधा एवं अध्ययन प्रवणता के लिए विद्यालय एवं आस-पास के क्षेत्र में प्रसिद्ध हो गए थे। उन्होंने सन् १९६५ में मध्यप्रदेश की माध्यमिक शिक्षा (Higher Secondary) परीक्षा में विज्ञान विषय के साथ ८२.७० प्रतिशत अंक अर्जित कर प्रदेश में प्रथम स्थान प्राप्त किया। विज्ञान एवं गणित में उनकी अप्रतिहत गति एवं अध्ययन के प्रति समर्पण को देखकर सभी लोग उनके वैज्ञानिक होने की कल्पना करते थे। पिता भी उन्हें इस ओर अग्रसर होते देख प्रसन्नता का अनुभव कर रहे थे किन्तु समुद्र की लहरें समुद्र की गोद में ही विश्राम लेती हैं, राजहंस अनन्त आकाश को नापकर ही शान्ति पाता है, चातक की प्यास समुद्र जल नहीं, स्वाती की बूँद ही मिटा पाती है। किशोर राधावल्लभ का मन विज्ञान एवं गणित विषयों के अध्ययन में नहीं रमा भारतीय परम्परा की अनन्तर एवं ममतामयी गोद के लिए आतुर उनका मन विज्ञान से विमुख हो कर संस्कृत अध्ययन के लिए उन्मुख हो उठा।

भारतीय विचार धारा विद्या को पूर्व जन्म का अर्जित आत्मस्थ कोश मानती है। राधावल्लभ त्रिपाठी इसके साक्षात् उदाहरण हैं। विज्ञान विषय का इतना उत्कृष्ट ज्ञान उन्हें कालान्तर में महान् चिकित्सक या अभियन्ता बना सकता था। उनके बड़े भाई श्रीहरिवल्लभ त्रिपाठी विज्ञान का अध्ययन कर प्रसिद्ध अभियन्ता बने तथा अनुज श्रीओमप्रकाश त्रिपाठी विज्ञान विषय कर चिकित्सक के रूप में विख्यात हुए किन्तु राधावल्लभ को तब तक संस्कृत भाषा और उसके निहितार्थ का ज्ञान हो चुका था।

राधावल्लभ त्रिपाठी जी का विवाह 27 मई सन 1974 को सत्यवती जी के साथ संपन्न हुआ। राधावल्लभ त्रिपाठी देश के शीर्षस्थ आचार्यों में गिने जाते हैं। उन्होंने प्रमुख रूप से सागर विश्वविद्यालय को अपने कार्य क्षेत्र के रूप में चुना। सागर विश्वविद्यालय में रहते हुए उन्होंने देश एवं विदेश के अनेक विश्वविद्यालयों में शिक्षण संस्थानों को अपनी सेवाएं दी। वह यूजीसी के रिसर्च फेलो, व्याख्याता ,सहायक आचार्य ,आचार्य एवं कुलपति राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान नई दिल्ली एवं श्री लाल बहादुर शास्त्री

राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ नई दिल्ली के पद को अलंकृत कर चुके हैं। आचार्य त्रिपाठी जी के अनेक व्याख्यान विदेश के विश्वविद्यालयों एवं कार्यक्रमों में आयोजित किए गए हैं।

सागरिका ,नाट्यम् ,मध्य भारती, दूर्वा, संस्कृत विमर्श आदि पत्रिकाओं के संपादन का भी गौरव आचार्य त्रिपाठी को जाता है। आचार्य त्रिपाठी को शैक्षणिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों के विकास एवं निरंतरता के लिए अनेक अध्ययन केंद्रों व परिषदों की स्थापना का भी श्रेय जाता है। नाट्यपरिषद, मुक्त स्वाध्याय पीठ, पाली प्राकृत अनुसंधान केंद्र, नाट्यशास्त्र अनुसंधान केंद्र ,महिला अध्ययन केंद्र, व्यवसायिक अध्ययन केंद्र, शास्त्रानुशीलन केंद्र स्थापना और विभिन्न व्याख्यान मालाओं के आयोजन के लिए आचार्य त्रिपाठी जी याद किए जाते हैं।

2.4.2 राधावल्लभ त्रिपाठी का अलंकार सिद्धांत

आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी आधुनिक युग के प्रखर चिंतक ,कवि, समीक्षक और काव्य शास्त्रीय आचार्य हैं। त्रिपाठी के अलंकार शास्त्रीय ग्रंथ अभिनवकाव्यालंकारसूत्र में त्रिपाठी के अलंकार सिद्धांत तथा का पूर्ण ज्ञान प्राप्त हो जाता है। आचार्य त्रिपाठी ने काव्य का लक्षण "लोकानुकीर्तनं काव्यम् " ऐसा किया है जिसका अर्थ है लोक का अनुकीर्तन करना ही काव्य है।

अनुकीर्तन पर यहाँ यह शंका स्वाभाविक है कि लक्षण में 'अनुकीर्तन' की आवश्यकता आखिर क्या थी ? उन्हें यदि लक्षण में 'लोक' अभीष्ट था तो पण्डितरा की भाँति "लोकार्थप्रतिपादकः शब्दः काव्यम् " जैसा कोई लक्षण बना सकते थे।

आचार्य त्रिपाठी जी की अवधारणा इस विषय में भी नयी है। 'अनुकीर्तन' से उन्होंने काव्योपयोगी शब्द और अर्थ का ग्रहण तो किया ही है, अनून्मील अनुदर्शन, अनुभव और अनुव्याहरणरूप अनुकीर्तन की चार अवस्थाओं को भी इस शब्द से ग्रहण किया है। यहाँ अनुकीर्तन शब्द के प्रयोग से त्रिपाठी जी को चार मत अभीष्ट हैं

१. लोक का पूर्व में और काव्य का पश्चात में होना।

२. निर्दुष्ट, सगुण, सालंकार, और रसाभिव्यंजक शब्द और अर्थ।

३. पूर्णता रूप अलंकार।

४. अनून्मीलन, अनुदर्शन, अनुभव और अनुव्याहरण रूप अनुकीर्तन की 4 अवस्थाएं।

'अनुकीर्तन' शब्द का उल्लेख यहाँ लाघव के लिये किया गया प्रतीत होता है। अनु पश्चात्, कीर्तनम् कथनम् अर्थात् पूर्व से विद्यमान लोक का कथन या वर्णन करना। 'लोक' रूप काव्य वस्तु की पूर्ववर्तिता स्वयं सिद्ध है। काव्य के प्रसंग में पूर्व में विद्यमान लोक का कथन शब्दार्थ द्वारा ही संभव होगा। काव्योपयोगी निर्दुष्ट, सगुण, सालंकार और रसाभिव्यंजक शब्द सूत्र में उपात्त काव्य के सामर्थ्य से प्राप्त हो जाते हैं। इस प्रकार यह लक्षण पूर्वचार्यों की परम्परा के काव्य लक्षण की विशेषताओं को अंतर्भूत कर नवीन स्वरूप को भी प्रकट करता है।

कवि के मानस में काव्य का प्रथम उन्मेष' अनून्मीलन' है (तस्य कवयितुर्मानसे प्रथम उन्मेषो नामानून्मीलनम्) । उन्मिपित वस्तु का कवि की चेतना में साक्षात्क 'अनुदर्शन' है (उन्मिषितायास्तस्याः कवयित्रा स्वान्तश्चेतसि दर्शनमेवानुदर्शनम्) । अनु वस्तु-रूप का अथवा शब्दार्थ का आविष्कार अनुभव

है (अनुदृष्टायास्तस्या वर्णना वस्तुनो रूपस्य शब्दार्थयोर्वाऽऽविष्कारोऽनुभवः) उस अनुभूत स्फुट शब्दों का कथन ही अनुव्याहरण है (अनुभूतायास्तस्याः स्फुटकथनमनुव्याहरणम्)।

इस प्रकार सारांश रूप में कहें तो अनुकीर्तन शब्द से कवि को काव्य की समस्त रचना प्रक्रिया का ग्रहण करना अभीष्ट है। प्रथमतः वस्तु का उन्मेष, उन्मीलित का दर्शन, दृष्ट का अनुभव और तब अनुभूत का वर्णन सम्भव होता है, अतः ग्रन्थकार ने इन चारों के संबंध को रचनाप्रक्रिया कहा है। इस प्रसंग को डॉक्टर त्रिपाठी के अलंकार सिद्धांत से जोड़ने के लिए निम्नलिखित चार सूत्र दृष्टव्य हैं।

अनुकीर्तनं चतुर्विधम्।। १.१.७।।

तेनास्य पूर्णता।। १.१.८।।

पूर्णता चालङ्कारः।। १.१.९।।

तेन अलङ्कार एव काव्यम्।। १.१.१०।।

अर्थात् अनुकीर्तन (उपर्युक्त भेदों से) चार प्रकार का है। उस (चार प्रकार के अनुकीर्तन) से काव्य में पूर्णता आती है। यह 'पूर्णता' ही अलङ्कार है और इस प्रकार 'अलंकार' ही काव्य है। त्रिपाठी जी द्वारा "लोकानुकीर्तनं काव्यम्" रूप काव्य का तटस्थ लक्षण कहा गया था। "अलङ्कार एव काव्यम्" उनके द्वारा प्रतिपादित काव्य का स्वरूप लक्षण माना जाना चाहिए। कहाने का आशय यह है कि काव्य के शब्द अर्थ आदि समस्त उपादान अनुभूतिकाल में गौण हो जाते हैं। वास्तव में 'अलङ्कार' ही काव्यत्व को प्राप्त करता है। यहाँ यह प्रश्न उठना भी स्वाभाविक है कि यदि ' अलङ्कार' ही काव्य है तब 'अनुकीर्तन' को काव्य क्यों कहा गया है?

यह सर्वविदित तथ्य है कि शब्दार्थ के बिना किसी भी वस्तु का अनुकीर्तन करना सम्भव नहीं है। अतः ऐसी परिस्थिति में शब्दार्थ का ही काव्यत्व स्वीकार करना उचित है। यह स्पष्ट है की'अलङ्कार' का काव्यत्व स्वीकार करना उचित प्रतीत नहीं होता।

सामान्यता देखा जाता है कि शास्त्रकार तटस्थलक्षण में उपाय' रूप में तटस्थतत्त्व का उल्लेख करते हैं। वह भी स्वरूप तत्त्व को बताने के लिये ही किया जाता है। जिस प्रकार पद का सामान्य लक्षण 'वर्णसमूह: पदम्' किया जाता है किन्तु 'भवति' आदि पदों की प्रतीति के समय इन वर्णों की पृथक् प्रतीति न होकर पदरूप में ही होती है, उसी प्रकार 'पदसमूहो वाक्यम्' कह कर जिज्ञासु को वाक्य का स्वरूप समझाया अवश्य जाता है किन्तु वाक्य की प्रतीति के समय पदसमूह की प्रतीति नहीं होती। इस इस तरह से काव्यगत शब्दार्थ आदि समस्त तत्व असत् हैं। अतः काव्य में अलंकार का तरीका काव्य प्रसिद्ध होता है।अनु कीर्तन से अलंकार लब्ध है और अनुकीर्तन लोक में विद्यमान काव्य वस्तु का ही संभव है।अतः लोक रूप काव्य वस्तु के अनुकीर्तन से प्राप्त होने वाला अलम् भावात्मक जो अलंकार है अर्थात् जो पूर्णता रूप है वही वास्तव में काव्य का स्वरूप है। इस प्रकार उक्त अध्ययन से राधावल्लभ त्रिपाठी के अलंकार सिद्धांत को समझा जा सकता है। यही उनका सौंदर्य सिद्धांत भी है।

2.4.3 राधावल्लभ त्रिपाठी का काव्य शास्त्रीय वैशिष्ट्य

आधुनिक संस्कृत कविता, गद्य एवं काव्यशास्त्र में अद्वितीय प्रतिभा विलसित डॉ राधा वल्लभ त्रिपाठी बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी हैं।अध्ययन अध्यापन के क्षेत्र में अनुसंधान के क्षेत्र में निरंतर संलग्न डॉक्टर त्रिपाठी की लेखनी हिंदी एवं संस्कृत दोनों भाषाओं में समान मान से चल रही है। संस्कृत

भाषा में राधावल्लभ त्रिपाठी की लेखनी दो रूपों में कीर्ति प्राप्त कर रही है- 1.काव्यशास्त्र लेखन 2.संस्कृत कविता लेखन।

संस्कृत महाकवि के रूप में डॉ. त्रिपाठी के लहरोदशकम् (सहरीकाव्य), 'गीतधीवरम्' (गीतिकाव्य), 'प्रेक्षणकसप्तकम्' (एकाङ्कीसंग्रह), 'अभिनवशुकसारिका' (कथा) आदि काव्य संपूर्ण साहित्य समाज में समादृत हैं। एक काव्यशास्त्री के रूप में राधावल्लभ त्रिपाठी की हिन्दी भाषा में दो पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं- "भारतीय काव्यशास्त्र की परम्परा" तथा "भारतीय साहित्यशास्त्र और साहित्य"। आचार्य त्रिपाठी जी की शास्त्र-चिन्तन की सहज भाषा संस्कृत रही है। अतएव 'अभिनवकाव्यालङ्कारसूत्रम्' नाम से एक नवीन संस्कृत काव्यशास्त्र का वर्तमान वैश्विक परिप्रेक्ष्य के अनुकूल प्रणयन हो पाया है।

संस्कृत काव्यशास्त्र का लगभग तीन सहस्त्र वर्षों का इतिहास है,जो इसकी गत्यात्मकता तथा अनवरत विकासयात्रा का जीवंत प्रमाण है। भरतमुनि के 'नाट्यशास्त्र' से प्रारम्भ हुई यह सुधीर यात्रा १७ वीं शताब्दी में पण्डितराज जगन्नाथ कृत 'रसगङ्गाधर तक आते-आते पूर्ण रूप से विकास को प्राप्त हो चुकी थी। किन्तु पं. जगनाथ के उत्तरवर्ती काल में संस्कृतकाव्यशास्त्र में किसी मौलिक सिद्धान्त की स्थापना का प्रयत्न नहीं पाया जाता, हालांकि कई काव्यशास्त्र उपलब्ध अवश्य होते हैं। २० वीं शताब्दी में संस्कृत साहित्य ने आधुनिकता का कलेवर ओढ़ा। आधुनिक संस्कृत साहित्य में न केवल विषयों के वर्णन में वैविध्यता का प्रवेश हुआ है अपितु विधाओं में चलन आई हैं, साथ ही काव्य निर्माण के प्रयोजन भी परिवर्तित हो गये हैं। अतः काव्यशास्त्र में भी इस तरह से विधान की आवश्यकता प्रतीत होती है कि नित नए

साहित्य में हो रहे नये प्रयोगों की सार्थकता के आकलन हेतु नवीन मापदण्ड प्रस्तुत किए जा सकें। आचार्य त्रिपाठी का 'अभिनवकाव्यालङ्कारसूत्रम्' अलंकारशास्त्रीय ग्रन्थ इसी आवश्यकता की पूर्ति करता है। यह ग्रन्थ तीन अधिकरणों में विभक्त हैं, जिनका पुनः अध्यायों में विभाजन किया गया है। ग्रन्थकार ने विषयों के स्पष्टीकरण हेतु सूत्र लिखकर स्वयं वृत्तिभाग भी लिखा है। इन अध्यायों में वर्णित काव्यशास्त्रीय विषयों का संक्षिप्त परिचय निम्नानुसार है।

काव्यलक्षण—

डॉ. राधावल्लभ त्रिपाठी के अनुसार "काव्य' से आशय छन्दोबद्ध या पद्यात्मक रचना से ही न होकर , इसमें गद्य को वे समस्त विधाएं भी समाहित हैं, जिन्हें साहित्य कहा जाता है। काव्य लक्षण इस प्रकार है- 'लोकानुकीर्तनं काव्यम्' अर्थात् लोकानुकीर्तन ही काव्य है। 'लोक' शब्द 'लोक' धातु में 'घञ्' प्रत्यय करके निष्पन्न होता है। यहाँ 'लोक' से तात्पर्य स्थावरजङ्गमात्मक संसार मात्र से न होकर कविचेतना के द्वारा विभाव्यमान समस्त भुवन लोक से है।' यह लोक तीन प्रकार का होता है- आधिभौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक। इन तीनों का समग्र समुल्लास ही जीवन है और वही साहित्य में प्रतिफलित होता है- "स च लोकस्त्रिविधः । आधिभौतिक-आधिदैविक-आध्यात्मिकश्च त्रयाणां च सकलः समुल्लासो जीवनम्। तच्च साहित्ये प्रतिफलति। '

यहाँ अनुकीर्तन की चार अवस्थाएं बतलाई गई हैं- अनून्मीलन, अनुदर्शन, अनुभव तथा अनुव्याहरण।' 'अनून्मीलन' से तात्पर्य कविमानस में जीवन के प्रथम उन्मेष से है। जीवन के इस उन्मेष का कवि के द्वारा अपनी रचना-प्रक्रिया में दर्शन ही 'अनुदर्शन' है। अनुदृष्ट स्थितियों के निरूपण के लिये

शब्द और अर्थ के द्वारा वस्तु तथा रूप का आविष्कार 'अनुभव' है तथा अनुभूत दशाओं का शब्दों से कथन 'अनुव्याहरण' है।

काव्य-लक्षण निरूपण के बात में डॉ. त्रिपाठी कहते हैं कि अनुकीर्तन से आधिभौतिकादि तीन रूपों वाला विश्व काव्य से परिपूर्ण रूप से व्यक्त होता है, यही काव्य की परिपूर्णता है और यही अलङ्कार है। अत एव अलङ्कार ही काव्य है- "तेनास्य पूर्णता। पूर्णता चालङ्कारः । तेन अलङ्कार एव काव्यम्।" इस प्रकार डॉ. त्रिपाठी ने प्राचीनाचार्यों के काव्य-लक्षणों को परिष्कृत करके अपना काव्य लक्षण प्रस्तुत किया है।

काव्यप्रयोजन—

"प्रयोजनं विना मन्दोऽपि न प्रवर्तते" इस न्याय को ध्यान में रखकर ही डॉ. काजी काव्य का प्रयोजन प्रस्तुत करते हैं- **"मुक्तिस्तस्य प्रयोजनम्"** उनके अनुसार आवरण भंग हो जाना ही मुक्ति है। और और संकुचित प्रमातृत्व ही आवरण है। कवि एवं सहृदय रूप दोनों प्रमाता के चैतन्यसंकोच को आवरण कहा गया है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि काव्य के द्वारा कवि एवं सहृदय का चेतना का संकोच नष्ट हो जाता है और उनको मुक्ति की प्राप्ति होती है।

काव्य कारण—

आचार्य त्रिपाठी ने संस्कार जन्या एवं जागृता के भेद से प्रतिभा को दो प्रकार की बताते हुए काव्य का हेतु प्रतिभा को माना है, जो कि जागृत हो— **"जागरिकता प्रतिभा तस्य कारणम्"।** यहां जागरण का अर्थ घटना के अनुकूल शब्दार्थ उपस्थिति ही है। गुरु का उपदेश, लोक की शिक्षा, अभ्यास ,कवि गोष्ठियां, सत्संगति आदि जागरण के प्रति हेतु होते हैं।

काव्य-भेद—

डॉ. राधावल्लभ त्रिपाठी ने काव्य के ४ भेद माने हैं। **"चतुर्विधं तत् । उत्तमोत्तमम्, उत्तम, मध्यमम्, अवरञ्च"।"** डॉक्टर त्रिपाठी के अनुसार इन काव्य भेदों का आधार प्राचीन परंपरागत आधारों से भिन्न है। जीवन के सर्वाङ्गीण रूप का निरूपण करने वाला महावाक्यात्मक काव्य 'उत्तमोत्तम' है, यथा- 'रामायण', 'महाभारत', 'रघुवंश', 'उत्तररामचरित' आदि। जिसमें जीवन के एक पक्ष का (एकदेश का) प्रदर्शन हो वह काव्य उत्तम है। जैसे भारवि, माघ, श्री हर्ष आदि के महाकाव्य एवं प्रोफेसर रेवा प्रसाद द्विवेदी का उत्तरसीताचरितम् आदि।

वस्तु विशेष या मनःस्थिति विशेष को प्रकट करने वाला काव्य 'मध्यम' होता है", यथा- भल्लट आदि कवियों की अन्योक्तियाँ। पदार्थमात्र में पर्यवसित होने वाला शब्दाडम्बर से युक्त काव्य 'अधम' होता है।

काव्य के इन ४ प्रकारों के अनुसार ही कवि भी क्रमशः ४ प्रकार के माने गये हैं- सिद्ध-कवि, साधक-कवि, आभ्यासिक कवि और घटक कवि।

ग्रन्थ तीसरे अधिकरण में काव्य को दो मुख्य भागों में विभक्त किया गया पठनीय एवं दर्शनीय अथवा पाठ्य एवं दृश्य । इन विषयों के अतिरिक्त डॉ. त्रिपाठी ने शब्दव्यापार व उसको वृत्तियों, अत के स्वरूप व उसके भेदों आदि का भी विशद विवेचन किया है।

2.5 सारांश

आधुनिक संस्कृत साहित्य का काल 19वीं शताब्दी के साथ आरंभ होता है यह संस्कृत ही नहीं समस्त भारतीय साहित्य में एक नए युग के सूत्रपात का काल है। वारेन हास्टिंग्स के द्वारा संस्कृत के अध्ययन और संस्कृत के ग्रंथों के अंग्रेजी अनुवाद को प्रोत्साहन देना पश्चिमी जगत् से संस्कृत के पंडितों और रचनाकारों के संवाद का एक कारण बना प्रतीत होता है। इसके द्वारा संस्कृत साहित्य में आधुनिकता के अवतरण को भी स्फूर्ति मिली। योरोप से सम्पर्क और नवीन राजनीतिक चेतना ने संस्कृत कविता के क्षेत्र में नये वातायन खोल दिये। पारम्परिक विद्या में दीक्षित पण्डितों ने नये युग और नयी विधाओं का चुनौती के भाव से साक्षात्कार किया और रचना की नयी धरती भी खोजी।

उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दियों में संस्कृत बड़ी संख्या में ऐसी रचनाएँ महाकाव्य, खंडकाव्य, कहानियाँ और नाटक लिखे गये, जो इस नवजागरण और नयी चेतना को प्रतिबिंबित करते हैं। श्रीश्वरविद्यालङ्कार के दिल्लीमहोत्सव महाकाव्य तथा विजयिनी काव्य, राजराज वर्मा का आङ्गूलसाम्राज्यम् महाकाव्य, उर्वीदत्त शास्त्री का एडवर्डवंश महाकाव्य तथा सुलतानजहाँविनोदमहाकाव्यम्, केरल वर्मा का विशाखविजय, भूदेवचरितम्, नारायण चन्द्र का इडनचरितम् तथा परीक्षितचरितम् आदि ऐसे ही महाकाव्य हैं। उन्नीसवीं शताब्दी का सामाजिक, धार्मिक व सांस्कृतिक परिदृश्य इन महाकाव्यों में प्रकट हुआ है। इसके साथ ही उन्नीसवीं शताब्दी का संस्कृत साहित्य नवीन वैचारिक संघर्षो तथा भूमंडलीय चुनौतियों का भी सामना करता है। पण्डिता क्षमाराव जैसी संवेदनशील कवि के अवतरण के साथ संस्कृत साहित्य में नये वातायन खुले। इस तरह विपुल काव्य रचना के साथ साथ नूतन दृष्टि से काव्य शास्त्र की रचना भी स्वाभाविक है। इस इकाई में हमने आधुनिक काव्यशास्त्र के दो महान स्तंभों आचार्य प्रोफेसर रेवा प्रसाद द्विवेदी एवं आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी के जीवन व उनके काव्य सिद्धांतों से विषय में जानकर आधुनिक काव्य शास्त्र का सार्थक तत्व जाना है।

आज के काव्यशास्त्र का मन्त्र है काव्य है अलङ्कृतार्थसंवित्ति, अलङ्कार है अलम् अर्थात् ब्रह्म। जिससे ब्रह्मानुभव प्राप्त हो वह संवित्ति है काव्य। बीच में है भी हम मुख्य केन्द्र को तो पकड़े हुए थे, किन्तु अनेक परिभाषाओं में भरतमुनि के समय से ही भटकते आ रहे थे। कभी हमने इसे रस कहा, कभी गुण कहा, कभी उपमादि कहा। किन्तु, इन दोनों सहस्राब्दियों में हम यह कहते ही आए कि काव्यत्व के लिए चमत्कार अनिवार्य है और चमत्कार को आनन्द आह्लाद, रस, शोभा, सौन्दर्य आदि अनेक पर्यायों में कहते आए। सर्वथा 'सद्यः परनिर्वृति' को हमने काव्यत्व के लिए अनिवार्य घोषित कर रखा था। इस तरह अलं ब्रह्म के सिद्धांत को आचार्य द्विवेदी हमारे सम्मुख रखते हैं।

संस्कृत काव्यशास्त्र का लगभग तीन सहस्त्र वर्षों का इतिहास इसकी गत्यात्मकता तथा अनवरत विकासयात्रा का प्रमाण है। भरतमुनि के 'नाट्यशास्त्र' प्रारम्भ हुई यह यात्रा १७ वीं शताब्दी में पण्डितराज जगन्नाथ कृत 'रसगङ्गाधर तक आते-आते पूर्ण रूप से विकसित हो चुकी थी। किन्तु पं. जगन्नाथ के उत्तरवर्ती काल में संस्कृतकाव्यशास्त्र में किसी मौलिक सिद्धान्त की स्थापना का प्रयत्न नहीं पाया जाता, हालांकि कई काव्यशास्त्र उपलब्ध अवश्य होते हैं। २० वीं शताब्दी में संस्कृत साहित्य ने आधुनिकता का कलेवर ओढ़ा। आधुनिक संस्कृत साहित्य में न केवल विषयों के वर्णन में वैविध्यता का

प्रवेश हुआ है अपितु विधाओं में चलन आई हैं, साथ ही काव्य-निर्माण के प्रयोजन भी परिवर्तित हो गये हैं। आधुनिक संस्कृत कवि मुक्त-कण्ठ से उद्घोष करता है-

न यशसे न धनाय, शिवेतरक्षतिकृतेऽपि च नैव कृतिर्मम ।
इयमिमां भारतांवनि संस्कृतिं सुरगर्वी व निषेवितुमुद्गता ।।

इस स्थिति में एक नवीन काव्यशास्त्र की आवश्यकता प्रतीत होती है, जो आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी प्रतिभा बल से निकलता है। इस पाठ में बिंदुवार दिए गए आधुनिक काव्यशास्त्र के दो महान स्तंभों आचार्य प्रोफेसर रेवा प्रसाद द्विवेदी एवं आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी के क जीवन परिचय एवं आधुनिक काव्यशास्त्र में उनके द्वारा दिए गए योगदान के विवरण से आप संस्कृत साहित्य के प्रमुख आधुनिक काव्य शास्त्रियों के जीवन को जान सके हैं। साथ ही उनके कार्यों की चर्चा से उनके द्वारा किए गए विविध प्रकार के संस्कृत काव्य शास्त्रीय योगदान से भी परिचित हो सके हैं। इन सब चर्चाओं से निष्कर्ष रूप में यह बात सामने आती है कि जितनी गौरवशालिनी संस्कृत काव्यशास्त्र की पुरातन परंपरा रही है उतनी ही उज्जवल व समृद्धि आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र की परंपरा भी बन रही है।

हमने इस अध्याय में विविध काव्य शास्त्रियों के ग्रंथों का सामान्य परिचय प्राप्त किया है जो कि हमको संस्कृत के आधुनिक काव्य शास्त्र के विविध आयामों से परिचित करवाता है। इस पाठ के अध्ययन से हम यह भी जान पाए हैं कि किस तरह काल का प्रभाव काव्य और काव्यशास्त्र पर भी देखने को मिलता है विभिन्न कवियों और काव्य शास्त्रियों की रचना धर्मिता पर काल का प्रभाव होता है यह हम आधुनिक काव्यशास्त्र की श्रृंखला के अध्ययन से जान पाए हैं। एक बात विशेष रूप से सामने आती है कि संस्कृत का परंपरागत पूर्व का काव्यशास्त्र आधुनिक रचनाकारों द्वारा निर्मित काव्यशास्त्र की आधार भूमि है अतः आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र की जो आधार भूमि है वह अत्यंत सुदृढ़ है इसलिए आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र के छात्रों को बहुआयामी चिंतन का अवसर इस पाठ के अध्ययन के उपरांत प्राप्त होता है।

2.6 शब्दावली

उत्तरवर्ती	-	बाद का
सूत्रपात्	-	आरंभ
स्फुट	-	स्पष्ट
शब्दाडंबर	-	शब्दों की संरचना
प्रयोजन	-	लक्ष्य
लोक	-	चराचर दृश्यमान जगत
विलसित	-	विभूषित या युक्त
जिज्ञासु	-	जानने का इच्छुक
गौण	-	अप्रधान
उन्मेष	-	प्रकट होना
अनुव्याहरण	-	अनुभूत का स्पष्ट रूप से कथन करना
व्यंजना	-	शब्द की एक शक्ति

2.7 अभ्यासार्थ प्रश्न- उत्तर

बोध/अभ्यास प्रश्न-

1.आचार्य रेवाप्रसाद द्विवेदी का जन्म कहां हुआ?

उत्तर. मध्य प्रदेश के सीहोर जनपद के नादनेर ग्राम में।

2.प्रोफेसर राधावल्लभ त्रिपाठी का जन्म कब हुआ?

उत्तर. 15 फरवरी 1949

3. रेवा प्रसाद द्विवेदी के तीन ग्रंथों के नाम लिखिए?

उत्तर. काव्यालंकारकारिका, साहित्यशारीरकम् और नाट्यानुशासनम्।

4. राधावल्लभ त्रिपाठी के पिताजी का नाम क्या था?

उत्तर. पंडित गोकुल प्रसाद त्रिपाठी।

5.आचार्य रेवाप्रसाद द्विवेदी के चतुर्धाम सिद्धांत में चतुर्धाम कौन कौन से हैं?

उत्तर. प्रथम धाम कांची, द्वितीय धाम शारदा पीठ कश्मीर, तृतीय धाम धारानगरी, चतुर्थ धाम काशी।

6. आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी का काव्य लक्षण क्या है?

उत्तर. लोकानुकीर्तनं काव्यम्।

7. आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी ने काव्य का प्रयोजन किसे माना है?

उत्तर. मुक्ति को।

8. आचार्य राधा बल्लभ त्रिपाठी के काव्य शास्त्रीय ग्रंथ का नाम लिखिए?

उत्तर. अभिनवकाव्यालंकारसूत्रम्।

2.8 उपयोगी पुस्तसकें

1-संस्कृत साहित्य का समग्र इतिहास चतुर्थ खंड -आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी ,न्यू भारतीय बुक कॉरपोरेशन प्रथम संस्करण 2018

2- संस्कृत काव्यशास्त्र का आलोचनात्मक इतिहास- महामहोपाध्याय रेवा प्रसाद द्विवेदी, कालिदास संस्थान वाराणसी 2007

3- साहित्यशारीरकम् - रेवा प्रसाद द्विवेदी -संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी

4-अभिनवकाव्यालंकारसूत्रम्- प्रोफेसर राधावल्लभ त्रिपाठी

5- राधा बल्लभ की समीक्षा परंपरा-रमाकांत पांडे- ईस्टर्न बुक लिंकर्स दिल्ली प्रथम संस्करण 2013

2.9 निबन्धामत्मपक प्रश्न

1.आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डालिए।

2.आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी जी के काव्य शास्त्रीय योगदान पर विचार कीजिए।

3.आचार्य रेवाप्रसाद द्विवेदी जी के चतुर्धाम धाम सिद्धांत पर प्रकाश डालिए।

4.आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी जी जीवन एवं कृतित्व पर विस्तार से लिखिए।

5.आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी जी के काव्य लक्षण को विस्तार से समझाइए।

6. आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी जी का काव्यशास्त्र योगदान विषय पर निबंध लिखिए।

इकाई-03 काव्य में सत्यता का सिद्धान्त
डॉ. ब्रह्मानन्द शर्मा

इकाई की रूप रेखा

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 डॉ. ब्रह्मानन्द शर्मा

3.3.1 जीवन परिचय

3.3.2 डॉ. ब्रह्मानन्द शर्मा की प्रमुख रचनाएं

3.3.2.1 वस्त्वलंकारदर्शनम्

3.3.2.2 अभिनव रसमीमांसा

3.3.2.3 रसालोचनम्

3.3.2.4 काव्यसत्यालोकः

3.4 काव्य में सत्यानुभूति का सिद्धान्त

3.5 काव्यगत सत्य के भेद

3.5.1 प्रकृतिगत सत्य

3.5.2 प्राणगत सत्य

3.5.3 हृदय गत सत्य

3.5.4 आध्यात्मिक सत्य

3.6 संस्कृत काव्यशास्त्र में काव्य का लोकसत्य के साथ सम्बन्ध

3.7 सत्यगत सूक्ष्मता का विवेचन

3.8 भावविवेचनम्

3.9 सारांश

3.10 शब्दावली

3.11 अभ्यास प्रश्न उत्तर

3.10 उपयोगी पुस्तकें

3.12 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

काव्यशास्त्रीय सुदीर्घ वो समृद्ध परंपरा में काव्य के तात्विक स्वरूप पर गहन विचार हुआ है, जिसके फलस्वरूप काव्य में अलंकार ,रस ,रीति, ध्वनि, वक्रोक्ति , औचित्य आदि तत्वों के आधार को लेकर के विविध संप्रदायों की स्थापना हुई है। जिस तरह काव्य प्रतिभा के नव नवोन्मेष के कारण नए-नए रमणीय रूपों में प्रकट होता है उसी तरह आचार्यों के प्रतिभा विलास से संस्कृत काव्यशास्त्र भी नए नए आयाम प्राप्त कर रहा है। आचार्य ब्रह्मानंद शर्मा जी का सत्य अनुभूति का सिद्धान्त इसी श्रंखला में एक नवोन्मेष है। जिस तरह अलंकार सिद्धांत में अलंकार को काव्य की आत्मा रस सिद्धांत में रस को काव्य की आत्मा रीति सिद्धांत में रीति को काव्य की आत्मा एवं औचित्य आदि के सिद्धांत में भी औचित्य को काव्य की आत्मा स्वीकार किया गया है उसी तरह सत्यता के सिद्धांत में काव्य की आत्मा सत्यता को स्वीकार किया गया है , आचार्य ब्रह्मानंद शर्मा जी के मत में सत्यानुभूति ही काव्य की आत्मा है।

सत्य सबको प्रिय होता है, सूक्ष्म रूप में यह सत्य अनुभूति का विषय होता है। काव्यगत सत्य भी भौतिक रूप नहीं है, अपितु ज्ञान रूप ही है, परंतु भौतिक पदार्थों के उदाहरण से इस सत्य का समर्थन किया जाता है। भौतिक पदार्थ तीन रूपों में प्राप्त होते हैं। कठोर रूप में, द्रव रूप में और वाष्प रूप में ।कठोर रूप से द्रव रूप की प्राप्ति होती है और द्रव रूप से वाष्प रूप की प्राप्ति होती है। जैसे कि जल पूर्व में हिमरूप कठोर होता है ताप के प्रभाव से फिर द्रव रूप हो जाता है और फिर उष्णता के योग से वाष्प के रूप को प्राप्त करता है। इस प्रकार भौतिक प्रक्रिया को देखकर सूक्ष्मता के प्रकारों की प्राप्ति होती है प्रक्रिया की दृष्टि से सूक्ष्मता के प्रकारों में प्रभाव कारिता का अतिशय दृष्टिगोचर होता है ।यही प्रभाव कारिता ही काव्य में चमत्कार उत्पन्न करती है। काव्य में इस चमत्कार के दो तत्व हैं-

एक तो सत्यगत सूक्ष्मता और दूसरा उसकी अनुभूति के लिए चित्तगत तीव्रता उत्पन्न होना। सत्य की अनुभूति के लिए चित्त की तीव्रता होना या उसकी प्रतीति होना अनुभूति का विषय है। सत्य की सूक्ष्मता के लिए चित्त में तीव्रता की प्रतीति जो की अनुभूति रूप होती है, काव्य में सत्यानुभूति के नाम से जानी जाती है।

विज्ञान आदि विषयों में भी सत्यगत सूक्ष्मता की स्थिति होती है, पर यह अनुभूति बुद्धि प्रयत्न से जन्य है। बुद्धि का प्रयत्न चमत्कार की अनुभूति के विरुद्ध शक्ति के रूप में कार्य करता है विज्ञान इत्यादि में भी सत्य की प्रतीति के लिए उन्मुख होने के बाद जहां बुद्धि प्रयत्न में शिथिलता आ जाती है और मुहूर्त भर में सत्यता की सूक्ष्मता की प्रतीति होती है, वहां पर भी चमत्कार की संभावना रहती है। काव्य में सत्य गत सूक्ष्मता की प्रतीति हृदय के समक्ष स्वतः ही उपस्थित होती है, प्रयत्न की आवश्यकता नहीं होती। जिसका कारण भी कवि प्रतिभा होती है। यही चमत्कार का बीज है। सत्यानुभूति को यथार्थानुभूति भी कहा जा सकता है। जैसे -

ग्रीवाभंगाभिरामं मुहरनुपतति स्पन्दने बद्ध दृष्टिः,
पश्चार्धेन प्रविष्टः शरपतनभयाद् भूयसा पूर्वकायम् ।
दर्भैरर्धावलीढैः श्रमविवृतमुखभ्रंशिभिः कीर्णवर्त्मा
पश्योदग्रप्लुतत्वाद्वियति बहुतरं स्तोकमुर्व्यां प्रयाति ।। अभिज्ञानशाकुंतलम्

यहां दौड़ते हुए भयभीत मृग के सूक्ष्म धर्मों का वर्णन किया गया है, यह सत्य की अनुभूति, यथार्थता और यथार्थता के अवबोध से भिन्न है।

3.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप सत्यता के काव्य शास्त्रीय सिद्धांत सिद्धांत से परिचित हो सकेंगे।

- ❖ काव्य में सत्य अनुभूति के सिद्धांत का स्वरूप जान सकेंगे।
- ❖ प्राणगत आदि सत्य अनुभूति के भेदों से अवगत हो सकेंगे।
- ❖ आचार्य ब्रह्मानंद शर्मा के जीवन से परिचित हो सकेंगे।
- ❖ काव्य में सत्य की अनुभूति करने की दृष्टि प्राप्त कर सकेंगे ।

3.3 डॉ. ब्रह्मानन्द शर्मा

3.3.1 डॉ. ब्रह्मानंद शर्मा का जीवन परिचय—

संस्कृत के लब्ध प्रतिष्ठित आचार्य ब्रह्मानंद शर्मा का जन्म राजस्थान के श्रीगंगानगर में 11 फरवरी 1923 ईस्वी को हुआ। राजस्थान में ही डूंगर महाविद्यालय बीकानेर से अपनी उच्च शिक्षा अर्जित कर आचार्य शर्मा ने राजस्थान के अनेक महाविद्यालयों में अध्यापन कार्य किया और अनवरत संस्कृत भारती की सेवा करते हुए राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान के निदेशक पद पर विराजमान हुए। आचार्य ब्रह्मानंद शर्मा का सामान्य जीवन परिचय जितना लघु काय है उतना ही अधिक विस्तृत उनका कृतित्व परिचय है।

पीएचडी उपाधि प्राप्त करने के लिए ब्रह्मानंद शर्मा ने "संस्कृत साहित्य में सादृश्य मूलक अलंकारों के विकास "पर अत्यंत उत्कृष्ट शोध प्रबंध की रचना की। डॉ• ब्रह्मानंद शर्मा, साहित्य शास्त्र एवं दर्शनशास्त्र के गहन अध्येता थे और इन शास्त्रों के निष्णात विद्वान होकर उन्होंने ग्रंथों की रचना प्रारंभ की।

डॉक्टर ब्रह्मानंद शर्मा को संस्कृत के काव्य शास्त्र के क्षेत्र में आधुनिक समाजवादी दर्शन को अपनाकर अपने ग्रंथों में नया काव्यशास्त्र प्रस्तुत करने के लिए जाना जाता है। आचार्य शर्मा विचारों के आडंबर व पाखंडों का त्यागकर तत्व की गवेषणा के आह्वान के लिए प्रयत्न करते रहे हैं।

3.3.2 डॉ. ब्रह्मानंद शर्मा की प्रमुख रचनाएं –

डॉ० ब्रह्मानन्द शर्मा ने संस्कृतकाव्यशास्त्र को दो ग्रन्थ दिए 1. वस्त्वलङ्कारदर्शनम् 2. अभिनवरसमीमांसा 3. रसालोचनम् 4. काव्यसत्यालोक। इसकी अतिरिक्त उन्होंने संस्कृत काव्य जगत को अपने अनेक शोध पत्रों व रचनाओं से भी उपकृत किया है। डॉक्टर ब्रह्मानंद शर्मा को संस्कृत के आधुनिक काव्यशास्त्र में नवीन और उद्भावनाओं के लिए इसलिए भी विशेष रूप से स्मरण किया जाता है क्योंकि उन्होंने 'सरस्वती का विषय कभी विराम नहीं लेता' इस पूर्व आचार्यों की वाणी को सफल

किया है, और साहित्य शास्त्र के संप्रदाय के क्षेत्र में भी एक नवीन संप्रदाय की दृष्टि दे करके एक नई दिशा प्रदान की है।

3.3.2.1 वस्त्वलंकारदर्शनम्–

इस ग्रंथ में डॉ शर्मा ने अलंकार के विषय में अपने दो महत्वपूर्ण विचार प्रस्तुत किए हैं। प्रथम विचार यह कि अलंकार रस के अभाव में भी काव्य के शोभा वर्धक होते हैं। अतः प्राचीन आचार्यों का यह सिद्धांत कि रस की स्थिति होने पर ही अलंकार काव्य के शोभा वर्धक होते हैं, कहना उचित नहीं होगा। रस के आयोग की स्थिति में काव्य को मूर्ति के समान निष्प्राण भी यदि माना जाए तो जैसे पुष्पमाला इत्यादि निष्प्राण प्रतिमा के भी सौभाग्य वर्धक होते हैं उसी तरह अलंकार भी रस से पूर्णता निरपेक्ष होकर काव्य शोभा को बढ़ाने के साधन होते हैं।

अलंकारों के विषय में ब्रह्मानंद शर्मा का दूसरा विचार है कि अलंकार वस्तु जगत से सीधे संबंधित हैं क्योंकि अलंकार अर्थ रूप होते हैं।

वस्त्वलङ्कारदर्शनम् में शर्मा जी ने पहले तो 'अलंकार' शब्द की वामनाभिमत करण और भाव अर्थ की व्युत्पत्तियाँ दीं। अलङ्कार्य के रूप में रस की प्रतिष्ठा की और अलङ्कार को प्रातिभ वस्तु माना। वाच्यार्थ की यथार्थता, स्वभावोक्ति, तर्कमूलक अलङ्कार, विरोधमूलक अलङ्कार लोकनिययममूलक अलंकार, शब्दालङ्कार, स्वभावोक्ति, अर्थान्तरन्यास, काव्यलिङ्ग + अनुमान, परिकर, विरोधालङ्कार, विभावना, विशेषोक्ति, अन्योन्य, असंगति, धर्मविपरीतता, व्याघात, विशेष, अधिक, विषम, यथासंख्य, सार, सम्बन्धमाला, एकावली, सम तथा परिवृत्ति अलंकार पर विचार दिए।

3.3.3.2 अभिनव रसमीमांसा–

इस ग्रंथ में रस के संबंध में यद्यपि कोई नया तथ्य नहीं बताया गया है तथापि रस सूत्र की व्याख्या के लिए अभिनव पद्धति अपनाई गई है। ग्रंथ कर्ता स्वयं इस तथ्य को स्वीकार करते हैं कि भरत के रस सिद्धांत में कोई भी तथ्यात्मक परिवर्तन संभव नहीं है ,परंतु युग चेतना के प्रभाव के कारण उसकी मीमांसा में थोड़ा बहुत परिवर्तन अवश्य किया जा सकता है।

3.3.3.3 रसालोचनम्–

यह भी एक रस अनुभूति प्रक्रिया की समालोचना विषय काव्य शास्त्रीय ग्रंथ है।

3.3.3.4 काव्यसत्यालोकः–

सत्य की अनुभूति को ही काव्य की आत्मा के रूप में प्रतिस्थापित करने वाला यह आचार्य ब्रह्मानंद जी के द्वारा प्रतिपादित अद्वितीय ग्रंथ है आचार्य ब्रह्मानंद जी का कहना है की जिस सत्य की शास्त्रों में ज्ञान के रूप में प्रतिष्ठा है काव्य में वही जान तत्व अनुभूति के रूप में प्रतिष्ठित होता है।

काव्यसत्यालोक में आचार्य शर्मा जी ने सर्वप्रथम मंगलाचरण के समय श्रम को देवता मानकर एक नए देवता की वंदना की है और यह देवता सर्वव्यापक है। समस्त संसार का अस्तित्व श्रम और श्रमिकों पर ही निर्भर करता है- श्रमं तु प्रथमं वन्दे श्रमिकं च ततः परम्।

'श्रमश्रमिकरूपेण प्रतिष्ठा जगतो मता' । सत्यालोक-ग्रन्थ के निर्माण के लिए शर्माजी ने ध्वन्यालोककार ध्वनिकार को भी प्रणाम किया। भूमिका बाँधते हुए कहा 'सत्यं हि शरण मम' (व०द०३)। 'सत्य' सभी को हुआ करता है प्रिय। वही प्रकृष्टता से युक्त हो जाता है जब उसमें सूक्ष्मता आ जुटती है। शास्त्र में इसी सत्य को कहा जाता है ज्ञान और इसी को काव्य में कहा जाने लगता है अनुभूति। सत्य रहता है आश्रित लोक पर, क्योंकि सत्य की सिद्धि लोक से ही होती है। कवि का कर्त्तव्य है कि वह लोकाश्रित सत्य की रक्षा रखे। लोकसत्य के ही कारण काव्य रसनीय होता है। उसकी रक्षा न रहने पर वही नीरस ठहरता है।

काव्यसत्यालोक में कुल पाँच उद्योत है। प्रथम उद्योत में सत्य का निरूपण है, द्वितीय उद्योत में सत्य में सूक्ष्मता के आधान का विवेचन है, तृतीय में विवेचन है 'अलङ्कार' का सूक्ष्मताधायक सभी तत्त्व अलंकार कह गए है। शर्मा जी ने काव्य में अलंकार को अङ्ग से पृथक् नहीं माना 'शरीराद्धि पृथग्घारो नेयं स्थितिरलङ्कृतेः' । तृतीय उद्योत में व्यंजना की सिद्धि की है। अलंकार के ध्वनित्व को अमान्य कर केवल वाच्यत्व रूप ही स्वीकार किया है। अर्थात् इन के मत में अलंकार ध्वनि नहीं होती। आचार्य की यह दोनों मान्यताएं प्राचीन परंपरा से भिन्न हैं। चतुर्थ उद्योग में भावयोग का निरूपण किया गया है। भावयोग को चेतना का परिणाम माना गया है। भावयोग के विधान के आधार पर सत्य के रूप की कल्पना की गई है। सत्य सर्वत्र साधारण रूप से विद्यमान रहता है। सत्य धनवान और निर्धन दोनों प्रकार के समाज में साधारण रूप से विद्यमान रहता है। अतः सत्य के विद्यमान रहने से और साधारण रूप से विद्यमान रहने से इस संदर्भ में रस और उसकी निष्पत्ति की विवेचना की गई है।

आचार्य अभिनव गुप्त द्वारा शांत रस को रस मानना आचार्य शर्मा को अभिमत प्रतीत नहीं होता। इसी उद्योत में गुणों का भी निरूपण किया गया है, जिसमें केवल दो गुण माधुर्य और ओज को ही स्वीकार किया गया है, और प्रसाद गुण का अंतरभाव सत्य में ही मान लिया गया है। अंतिम पंचम उद्योत में काव्यलक्षण, काव्यभेद,एवं काव्य प्रयोजनों का निरूपण किया गया है। आचार्य शर्मा के अनुसार काव्य के तीन भेद होते हैं-

1. **उत्तम काव्य**— जिस काव्य में सत्य की अनुभूति का तारतम्य चरम पर होता है वह उत्तम काव्य है। उत्तम का उत्तमत्व सत्य की तारतम्यता पर निर्भर करता है।
2. **मध्यम काव्य**— मध्यम काव्य में, वर्णित पदार्थों पर सहृदय का विश्वास डगमगाता है।
3. **अधम काव्य**— जिस काव्य में बौद्धिक सिद्धांतों की प्रधानता होती है और अनुभूति तत्व अप्रधान रह जाता है, वह अधम काव्य कहा गया है।

आचार्य शर्मा के अनुसार काव्य का अपना कोई प्रयोजन नहीं होता है । उनके अनुसार आर्थिक क्षेत्र में शोषक वर्ग के द्वारा किए जा रहे शोषण से शोषित वर्ग का मोक्ष ही काव्य का उद्देश्य हो सकता है इस प्रकार का डॉक्टर ब्रह्मानंद शर्मा का काव्य चिंतन सामाजिक क्रांति की भाव भूमि पर आश्रित प्रतीत होता है।

3.4 काव्य में सत्यानुभूति का सिद्धांत

पूर्व आचार्यों की तरह काव्यसत्यालोक नामक ग्रंथ में डॉक्टर ब्रह्मानंद शर्मा को काव्य सिद्धांत के रूप में सत्य अनुभूति की प्रतिष्ठापना करने का श्रेय जाता है, जिससे एक अभिनव काव्य शास्त्रीय परंपरा का बीज वपन होता है सत्यानुभूति को काव्य की आत्मा स्वीकार करने वाले डॉ0 ब्रह्मानन्द शर्मा ख्याति प्राप्त कवि हैं। शब्दार्थ में सत्य के रमणीय प्रतिपादन को उन्होंने काव्य की संज्ञा दी है।

शब्दार्थवर्तिसत्यस्य सुन्दरं प्रतिपादनम्।
काव्यस्य लक्षणं ज्ञेयम् सत्यस्यमात्र विशेषता।

काव्यसत्यालोक के माध्यम से डा0 ब्रह्मानन्द शर्मा ने एक नवीन तत्त्व को संस्कृत काव्यशास्त्रीय परम्परा में समाहित किया है। काव्यसत्यालोक में पाँच उद्योत है। प्रथम उद्योत में सत्य का निरूपण है। द्वितीय उद्योत में सत्य में सूक्ष्मता विवेचन है। तृतीय उद्योत में अलंकार तथा चतुर्थ उद्योत में भावयोग तथा पंचम उद्योत में काव्यलक्षण, काव्यभेद, काव्यप्रयोजन की समीक्षा है। प्रथम उद्योत में सत्य का निरूपण-

लोको मूलं हि सत्यस्य, लोके सत्यं प्रतिष्ठितम्
लोकाधारस्ततो रक्ष्यः, कविनाऽभिनिवेशिना ॥
लोकसत्येऽनुरागश्चेत् काव्यस्य रसनीयता ।
तत्रैव तदभावे च तस्य नीरसता मता।।

इससे यह स्पष्ट है कि सत्य की अनुभूति के दो तत्व हैं- एक सत्य और दूसरा उसमें निहित सूक्ष्मता। काव्य का यह सत्य लोक से संबंधित है ।इस लोकसत्य को काव्य में कवि प्रतिभा से उपस्थित किया जाना ही चमत्कार है। कवि प्रतिभा का विषय लोक है। लोक से ही कवि प्रतिभा इस सत्य का ग्रहण करती है। लोक से सत्य के ग्रहण करने में कवि का अनुकरणात्मक व्यापार होता है, ऐसा मत आचार्य को अभीष्ट नहीं है। कवि अपनी प्रतिभा से लोकसत्य को आत्मसात करता है और आत्मसात करने के उपरांत उस लोकसत्य का प्रकाशन काव्य के रूप में करता है। यही कारण है कि काव्य को कवि की सृष्टि कहते हैं और विधाता की सृष्टि से विलक्षण बताकर उसका उत्कर्ष बताते हैं । लोक में दो तत्व पाए जाते हैं एक तो भूत द्रव्य दूसरा मनुष्य इन दोनों का लोकसत्य में अंतर्भाव हो जाता है।मनुष्य में पुनः प्रधान रूप से तीन तत्व हैं -प्राण, हृदय और बुद्धि। बुद्धि की प्रवृत्ति प्रधान रूप से भूत द्रव्यों के प्रति होती है। भूत द्रव्य बुद्धि का विषय हैं। यह प्रवृत्ति विषय अनोखी प्रवृत्ति कहलाती है। इस प्रवृत्ति का लोक में प्राधान्य है। यही जीवन का यथार्थ है। इसके बिना प्रवृत्ति आत्मा की प्रवृति होती है और यह कदाचित ही पाई जाती है। इसलिए यह जीवन का आदर्श मात्र है। इतना जानना चाहिए प्राण और हृदय यह दो तत्व

जीवन में कर्म के प्रेरक हैं और उन से अनुप्राणित बुद्धि होती है। प्राण से अनुप्राणित बुद्धि से प्रवृत्त जो विषय वह प्राणगत सत्य है। हृदय से अनुप्राणित बुद्धि से प्रवृत जो विषय वह हृदयगत सत्य कहलाता है। इससे भिन्न जो लोक में विद्यमान सत्य है वह प्रकृति का सत्य कहलाता है। आचार्य ब्रह्मानंद शर्मा अपनी सत्य के सिद्धांत के अनुसार काव्य की परिभाषा इस प्रकार से करते हैं-

शब्दार्थयो साहित्यस्य विवेचनम्।
सत्यमयं गतं काव्येऽयं च शब्दस्य सस्थितिः |
शब्दार्थयोहि सद्भावादस्य साहित्यस्ता ||१०||

काव्य में सत्यता की अभिनव कल्पना करते हुए पूर्व आचार्यों की तरह ही शब्दार्थोभय के साहित्य को उन्होंने काव्य माना है। आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी के मत का उन्होंने खंडन भी किया है-

शब्दः काव्यद्बहिर्भूत एतद् द्विवेदिनां मतम् ।
शब्दरूप विचारे हि काव्ये तन्नोपपद्यते ॥ ११ ॥

3.5 काव्यगत सत्य के भेद

प्रकृतिगत सत्य, प्राणगत सत्य , हृदयगत सत्य एवं आध्यात्मिक सत्य के भेद से काव्य में सत्य के चार प्रकार बताए गए हैं। सत्य निरूपण नामक प्रथम उद्योत में सत्य के प्रकारों की काव्य की दृष्टि से विवेचना की गई है।

3.5.1 प्रकृतिगत सत्य–

प्रकृति में उन सभी जड़ पदार्थों का अंतर भाव हो जाता है जिनकी हमारे परितः स्थिति है। इस प्रकार न केवल अरण्य नदी पर्वत आदि का अपितु यंत्रालय वायुयान इत्यादि का भी ग्रहण प्रकृति के अंतर्गत हो जाता है ।इस प्राकृतिक सत्य के साथ हमारा अत्यधिक संबंध है। प्रकृति के अंतर्गत सभी उन जड़ पदार्थों का आप ग्रहण कर सकते हैं जो हमारे चारों ओर विद्यमान हैं। एक शंका होती है यहां पर की प्रकृति से छेड़छाड़ करके मानव ने जिन वस्तुओं या पदार्थों का रूप बदल दिया है। जिनको कृतिम के रूप में जाना जाता है क्या उनको भी प्रकृति में अंतर भावित किया जाएगा अथवा नहीं? इसके समाधान में ग्रंथकार लिखते हैं कि हमारे सम्मुख दिखाई देने वाली यह संपूर्ण सृष्टि प्रकृति विकृति रूपा ही है। वास्तविक दृष्टि से यह प्रकृति अव्यक्त रूपा है और उसी प्रकृति का यह विकार है। सांख्यकारिका के मत को दिखाकर इस बात की पुष्टि की गई है। इस प्रकार से चाहे वह रेलगाड़ी का वर्णन हो ,पशु पक्षियों का वर्णन हो, जो भी आधुनिक जगत में वर्तमान है उसका सब चीजों का प्रकृति में ही अंतर भाव होता है इसी प्रकृति के सत्य के साथ हमारा संबंध है ।

लोको मूलं हि सत्यस्य, लोके सत्यं प्रतिष्ठितम्
लोकाधारस्ततो रक्ष्यः, कविनाऽभिनिवेशिना ॥
लोकसत्येऽनुरागश्चेत् काव्यस्य रसनीयता ।
तत्रैव तदभावे च तस्य नीरसता मता।।

3.5.2 प्राणगत सत्य

प्राण गत सत्य आर्थिक सत्य भी कहलाता है सभी प्रकार के सत्य में प्राण गत सत्य का ही प्राधान्य होता है । प्राणों को धारण करने के लिए अन्न, जल इत्यादि की आवश्यकता होती है इसलिए प्राण भूख प्यास इत्यादि अनुभव करते हैं।यही कारण है कि प्राणों की अन्य, जल इत्यादि के प्रति प्रवृत्ति होती है। यद्यपि व्यापक दृष्टि से ज्ञान के विषय भूत सभी पदार्थों का अर्थ में ही अंतर भाव होता है, परंतु फिर भी हमारे को यहां पर प्राण धारण के लिए अपेक्षित पदार्थों के लिए ही अर्थ पद का व्यवहार करना होता है ।सत्य तो यह है कि प्राण धारण के लिए अपेक्षित अर्थों की प्राप्ति जिससे होती है उसको अर्थ पद से व्यवहार किया जाता है। इसलिए अर्थ के प्रति प्राणों की प्रवृत्ति होती है यस निर्विवाद सिद्ध है। यह प्रवृत्ति एक बार आचरण कर लेने पर विराम को प्राप्त कर लेती है ऐसा भी नहीं है। अपितु अर्थ संग्रह के प्रति इस प्रवृत्ति का विस्तार होते जाता है। हमें तो इस अर्थ से प्राणों की तृप्ति होती है परंतु अतिशय की अवस्था में अहंकार के साथ इसके संबंध की स्थापना हो जाती है। समाज में अर्थ संबंधी यह सत्य आर्थिक सत्य कहलाता है। और यहां अर्थ श्रम जन्य ही है। श्रम की स्थिति और श्रमिक की स्थिति भी यहीं पर युक्त है। वास्तविकता यह है कि श्रम से उत्पन्न होने वाले अर्थ का विपुल भाग धनिक में स्थित होता है। धन में तो धनी की स्थिति होती है परंतु उस धन के उत्पादक श्रम में धनी की स्थिति नहीं होती है। इस प्रकार श्रमिक को श्रम के अनुरूप धन की प्राप्ति से वंचित होना पड़ता है। यही धनिकों के द्वारा श्रमिकों का शोषण है। यहां पर धनिक शोषक हैं और श्रमिक शोषित हैं। इसी कारण से समाज में विषमता और संघर्ष की स्थिति उत्पन्न होती है। यही वर्ग संघर्ष के नाम से जाना जाता है। प्राणों की प्रेरणा से उत्पन्न होने वाले इस संघर्ष में प्राण के साथ-साथ हृदय का भी योग है। इस सत्य के साथ हमारे प्राणों का संबंध है और इस सत्य का समाज में प्राधान्य है।

प्राणा मूलं हि लोकस्य प्राणाश्चैते अर्थमाश्रिताः।

अर्थोन्मुखानि भूतानि अर्थस्यातः परास्थितिः।।

अर्थस्यास्य श्रमो मूलम्, युक्ताऽस्यात् श्रमे स्थितिः ।

चित्रं जगति वैषम्यं, यदश्रमेऽस्य संस्थितिः ||8||

कृतोऽस्याध्यात्मयादत्वमाभास्य स्फुटा स्थितिः ।

आभासमेनमाश्रित्य धनिकैर्धनग्रहः ||9||

सत्य की उपस्थिति इसी अर्थ के रूप में काव्य में पायी जाती है। इसी कारण से अर्थ ही काव्य का स्वरूप है, किंतु इस अर्थ का बोध शब्द द्वारा होता है और शब्द से अनुविद्ध रहता है इसलिए शब्द भी काव्य का स्वरूप होता है ।इस प्रकार से शब्द एवं अर्थ दोनों ही सम्मिलित रूप से काव्य का स्वरूप हैं और साहित्य शब्द की अन्वर्थनामा प्रतीति होती है।

3.5.3 हृदय गत सत्य–

हृदयगत तत्वों से समाज में हमारे संबंधों की स्थिति है यह संबंध तीन प्रकार के होते हैं रक्त संबंध से आश्रित ,साहचर्य संबंध के आश्रित और मान्यता संबंध के आश्रित इन्हीं संबंधों से परिवार समाज इत्यादि की संघटना संरचना संभव हो पाती है समाज में न केवल राष्ट्रीयता की धर्म की स्थिति संभव होती है अभी तो ज्ञान की स्थिति भी समाज में ही संभव होती है, समाज में संबंधों की स्थापना हृदय तत्व के कारण ही होती है। यह सामाजिक संबंध प्रधानतया तीन प्रकार के होते हैं -रक्त तत्व के आश्रित संबंध जिन्हें हम रक्त संबंध कहते हैं। साहचर्य तत्व के आश्रित संबंध और मान्यता की समानता पर आश्रित संबंध ।इन्हीं संबंधों के द्वारा समाज में परिवार इत्यादि विभिन्न समुदायों की उत्पत्ति होती है। इन समुदायों में देश रूपी समुदाय और धर्म रूपी समुदाय का व्यापकता की दृष्टि से अत्यधिक महत्व है। देश रूपी समुदाय में मान्यता इत्यादि के समानता के साथ-साथ स्थान विशेष का भी योग होता है। देश के साथ जो संबंध होता है वह राष्ट्रीयता पद से संबोधित किया जाता है ।यह राष्ट्रीयता जीवन का यथार्थ है पर इसकी प्रभाव कारिता अर्थ की प्रभाव कारिता से कम ही है। धर्म तत्वों की प्रभाव कारिता राष्ट्रीय प्रभाव कारिता के समान जानी जानी चाहिए। परिवार इत्यादि की जो प्रभाव कारिता है वह अर्थ तत्व की तुलना में अधिक है। समाज में अर्थ तत्व की प्रधानता होने पर धर्म तत्व की जो स्थिति है वह आवरण रूप ही है ।इस आवरण में धर्म की अर्थ आवरण के रूप में ही स्थिति है।

इस प्रकार बहुत ही तर्कपूर्ण रीति से हृदयगत सत्य की काव्य में उपस्थिति आचार्य ने बताई है। समाज में हृदय तत्वों और प्राण तत्व का युक्तियुक्त विवेचन किया है ।समाज का तो समुदायों में अन्य तत्वों के साथ प्राण तत्व की भी उपस्थिति है अन्य तत्वों की अपेक्षा यह तत्व अधिक बलशाली है। अतः इसकी स्थिति से अन्य समुदायों में परिवर्तन देखा जाता है समाज में धर्म इत्यादि पर अर्थ की संघटना का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है इसी सत्य की अनुभूति को हार्दिक अनुभूति कहा गया है।

3.5.4 आध्यात्मिक सत्य–

आध्यात्मिक सत्य इस लोक में व्यक्ति विशेष में ही निहित है न कि समाज में। व्यक्तिगत रूप से भी आध्यात्मिक सत्य की स्थिति विरलतर ही पाई जाती है। आध्यात्मिक सत्य इस लोक में व्यक्ति विशेष में ही होता है समाज में नहीं। अर्थात् यह व्यक्तिगत ही है समाजगत नहीं। ऐसे व्यक्ति अत्यंत विरल होते हैं जिनमें आध्यात्मिक सत्य की स्थिति पाई जाती है ।यदि ब्रह्म सत्यं जगत् मिथ्या वाला सिद्धांत कहा जाए तो केवल ब्रह्म ही वह तत्व है जिसमें सत्य विद्यमान है ।इसलिए ब्रह्म निष्ठ व्यक्ति में ही

आध्यात्मिक सत्य रह सकता है। समाज में आध्यात्मिक सत्य के स्थान पर आध्यात्मिक सत्य के आभास की ही स्थिति बहुधा मिलती है। यह इसलिए है क्योंकि समाज प्रधान रूप से अर्थनिष्ठ है। समाज का धनाढ्य वर्ग भी अर्थ निष्ठ ही है। धनाढ्य वर्ग के द्वारा श्रमिक वर्ग का शोषण ही लक्ष्य होता है। कहीं कहीं आवरण के द्वारा यह लक्ष्य दिखाई नहीं देता ।यह आवरण अर्थावरण या अर्थ विरोधी तत्वों से हो सकता है। अर्थ से भिन्न तत्व हृदय के आश्रित होते हैं।धर्म, राष्ट्रीयता आदि अर्थ विरोधी तत्व हैं इनमें अर्थ विरोधी तत्व की अर्थात आत्मतत्व की विशेष प्रभाव कारिता होती है। आत्म तत्व में भी दो तत्व हैं एक मूल तत्व दूसरा तद्गत बाहरी स्वरूप। मूल आध्यात्मिक तत्व अर्थ का आवरण नहीं हो सकता इसलिए बाहरी स्वरूप से ही अर्थ का आवरण बनाया जाता है यह बाह्य रूप ही अध्यात्म का आभास कहलाता है। समाज में आध्यात्मिक शक्ति का दर्शन बड़ी मुश्किल से होता है। विषय का विवेचन आध्यात्मिक शक्ति के अंतर्गत किया गया है।

3.6 संस्कृत काव्यशास्त्र में काव्य का लोकसत्य के साथ संबंध

संस्कृत के काव्यशास्त्र में काव्य का लोक सत्य के साथ संबंध स्वीकार किया गया है। डॉक्टर ब्रह्मानंद शर्मा ने नाट्यशास्त्र सेइस बात के प्रमाण के रूप में स्वीकार किया है-

यानि शास्त्राणि ये घर्मा यानि शिल्पानि या क्रिया ।
लोकधर्मप्रवृत्तानि तानि नाट्य प्रकीर्तितम् ।।

--नाट्यशास्त्रम्

साहित्य शास्त्र के औचित्य संप्रदाय और रस संप्रदाय भी अपनी औचित्य भावना से यही संबंध स्थापित करते हैं ।औचित्य संप्रदाय के अनुसार व्यवहारौचित्य औचित्य का एक प्रमुख प्रकार है। इसके अनुसार काव्यगत वर्णन का लोक व्यवहार के साथ साम्य अपेक्षित है। इसी से औचित्य की प्रतीति होती है। काव्यगत वर्णन का लोक व्यवहार के साथ साम्य ही वास्तव में काव्य का लोक सत्य के साथ संबंध है । रस सिद्धांत के निरूपण में भी औचित्य के महत्व को स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया गया है रस निरूपण के संबंध में आचार्य मम्मट के काव्यप्रकाश में दिया गया यह कथन अत्यंत महत्वपूर्ण है-

कारणान्यथ कार्याणि सहकारीणि यानि च,
रत्यादेः स्थायिनो लोके तानि चेन्नाट्यकाव्ययोः।
विभावा अनुभावास्तत्कथ्यन्ते व्यभिचारिणः,
व्यक्तः स तैर्विभावाद्यैः स्थायी भावो रसः स्मृतः ॥काव्यप्रकाश

इससे यह स्पष्ट है कि रस में विभावादिगत औचित्य में लोक व्यवहार की अनुकूलता सर्वथा अपेक्षित है। यही अनुकूलता ही वास्तविक रूप से काव्य में लोकसत्य का प्रकाशन है।

काव्य में सत्या अनुभूति की व्याख्या करते हुए आचार्य ने बताया है कि सत्य की अनुभूति ही यथार्थ की भी अनुभूति है। जितनी सूक्ष्म सत्य अनुभूति होती है उतनी ही सूक्ष्म यथार्थ अनुभूति भी होती है और

यही अनुभूति की सूक्ष्मता चमत्कारी होती है। यही चमत्कार का अतिशय उत्पन्न करने वाली जो सत्य अनुभूति है वही काव्य की आत्मा है।

यह कहा जा सकता है कि समाज के सत्य का विवेचन अर्थशास्त्र ,समाजशास्त्र इत्यादि का विषय ह। काव्यशास्त्र में इस विषय का विवेचन करना उचित नहीं है। इसके उत्तर में डॉ शर्मा लिखते हैं कि भाव का विवेचन भी मनोविज्ञान का विषय है, फिर भी रस विवेचन में उसकी परम उपयोगी स्थिति यह बताने के लिए पर्याप्त है कि समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र आदि विषय भी काव्यशास्त्र गत विवेचन के लिए सर्वथा उपयुक्त हैं। काव्य में सत्या अनुभूति की व्याख्या करते हुए आचार्य ने बताया है कि सत्य की अनुभूति ही यथार्थ की भी अनुभूति है जितनी सूक्ष्म सत्य अनुभूति होती है उतनी ही सूक्ष्मा यथार्थ अनुभूति भी होती है और यही अनुभूति की सूक्ष्मता चमत्कारी होती है। यही चमत्कार का अतिशय उत्पन्न करने वाली जो सत्य अनुभूति है वही काव्य की आत्मा है।

सत्यम प्रियम हि सर्वस्य
सौक्ष्मेणास्य प्रकृष्टता।
शास्त्रे ज्ञानमिदं प्रोक्तम्
काव्येअनुभूतिरिष्यते ।।

3.7 सत्यगत सूक्ष्मता का विवेचन-

सौक्ष्म्यं सत्यगतं काव्ये पूर्वं यत्प्रतिपादितम्।
उपाया बहवस्तस्य सकीर्त्यन्ते समासतः॥१७॥
प्राधानं सूक्ष्मधर्माणाम् सादृश्यञ्च समर्थनम्।
प्राधानञ्च निमित्तस्य विरोधश्चाविरोधत ॥१८॥
व्यापारस्य विशेषो हि व्यन्जनासंज्ञया मत |
भावानामपि योगश्चेत्युपाया अत्र सम्मता ॥१६॥
काव्ये सत्यानुभूतिर्या सा न हेया कदाचन।
इयमात्मा हि काव्यस्य रसेऽपीयं समीहिता ॥ २०॥

प्रथम उद्योगत में सत्य की विवेचना करने के अनंतर द्वितीय उद्योत में ब्रह्मानंद शर्मा सत्य की सूक्ष्मता का विवेचन प्रस्तुत करते हैं। सूक्ष्मता विचार के लिए सूक्ष्मता का आधान करने वाले काव्यगत उपायों पर विचार करना चाहिए। लोकगत सत्य के सूक्ष्म धर्मों का ग्रहण करना प्रथम उपाय है। इस प्रसंग में आचार्य ने रस सूत्र के व्याख्याता आचार्यों के मत को अपनी व्यक्ति का आधार बनाया है। आचार्य ब्रह्मानंद शर्मा के सूक्ष्मता विषयक किस्मत को समझने के लिए हमें काव्यप्रकाश में दिए गए रस सूत्र के चारों व्याख्यानों को पढ़ने की आवश्यकता है।

आचार्य कामत ने रस की अनुभूति सत्य की अनुभूति का एक प्रकार विशेष है सत्य की सूक्ष्मता के भाव योग से इसकी निष्पत्ति होती है। इसलिए भाव योग ही यहां पर विचारणीय है। भाव योग के

भली-भांति जान के लिए भाव का परिज्ञान भी आवश्यक है इसलिए आचार्य ने भाऊ के विषय में भी विवेचन प्रस्तुत किया है।

3.8 भावविवेचनम्

आचार्य ब्रह्मानंद शर्मा के द्वारा भाव की परिभाषा इस प्रकार दी गई है-

चेतनापरिणामा ये ते भावा इति मे मतिः ।
उद्भवे हेतुतामेषाम् विषया यान्त्यनेकदा।।

यह भाव चेतना के परिणाम विशेष हैं अथवा चित्तवृत्ति विशेष हैं। इस प्रकार आचार्य ने प्राचीन आचार्यों के द्वारा किए गए विवेचन का आधार लेकर के ही एक नई दृष्टि से उनको प्रस्तुत किया है।

3.9 सारांश

प्राचीन आचार्यों द्वारा किए गए काव्य के तीन भेदों को सत्य की अनुभूति के आधार पर तीन ही भागों में बांटना और उसी उत्तम, मध्यम ,अधम नाम से बांटना, यह आचार्य ब्रह्मानंद शर्मा का बहुत बड़ा कौशल है। जिस प्रकार आचार्य क्षेमेंद्र ने औचित्य को सर्व सिद्धांतों में प्रतिष्ठित कराया, जिस तरीके से औचित्य की सर्वत्र आवश्यकता अनुभव कराई, उसी तरह आचार्य ब्रह्मानंद शर्मा ने भी काव्य में सत्यता के सिद्धांत की व्यापकता को महसूस कराया है।

आधुनिक काव्य शास्त्र को अपने अनुपम चिंतन से प्रसूता भी सत्या लोग इत्यादि ग्रंथ रत्नों को प्रदान करने वाले ब्रह्मानंद शर्मा का यह योगदान न केवल आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र को अभी तो संपूर्ण संस्कृत काव्यशास्त्र की परंपरा को उपकृत करने वाला है ।समाज की संबंध मूलक व्यवस्था का आधार दिखाते हुए संबंधों को तीन भागों में बांटना यह आचार्य शर्मा की बड़ी सूक्ष्म दृष्टि का ही परिणाम है।

इस प्रकार इस पाठ में हमने काव्य में सत्य अनुभूति के सिद्धांत के प्रणेता डॉक्टर ब्रह्मानंद शर्मा का जीवन परिचय व उनका कृतित्व परिचय जानने के साथ-साथ उनके द्वारा प्रतिस्थापित सत्यानुभूति के सिद्धांत पर विस्तार से जानकारी प्राप्त की है। डॉक्टर ब्रह्मानंद शर्मा आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र में बहुत प्रतिष्ठित आचार्य हैं सत्यानुभूति को काव्य की आत्मा बता कर डॉ शर्मा ने काव्यशास्त्र के चिंतकों के समक्ष चिंतन का एक नया आयाम जोड़ा है। ब्रह्मानंद शर्मा की सबसे बड़ी खूबी यह है कि उन्होंने प्रायःसभी प्राचीन आचार्यों को अपने मत के साथ एकरूप दिखलाने की चेष्टा की है।

लोक के संबंधों को तीन भागों में बांटना हो, या फिर सत्य को विविध प्रकारों में प्रदर्शित करना हो या सत्य की सूक्ष्म अनुभूति के विषय का प्रकाशन करना हो, डॉक्टर ब्रह्मानंद शर्मा का चिंतन नितांत ही अद्वितीय है। साक्षात् सामाजिक सरोकारों से काव्य के जुड़े होने का विवेचन अत्यंत गंभीर व प्रभावोत्पादक है।

3.10 शब्दावली

अलंकार	-	शोभा बढ़ाने वाला(आभूषण)
सद्भाव	-	विद्यमानता
अभिनव	-	नवीन
परितः	-	चारों ओर
प्रकृति	-	जिससे उत्पत्ति होती है
विकृति	-	जो किसी से उत्पन्न होता है
सत्यानुभूति	-	सत्य को महसूस करना
आवरण	-	ढकने वाला

3.11 अभ्यास प्रश्न उत्तर

प्रश्न 1 -आचार्य ब्रह्मानंद शर्मा का जन्म कहां हुआ था?

उत्तर- राजस्थान के श्रीगंगानगर में।

प्रश्न 2- आचार्य ब्रह्मानंद शर्मा की दो रचनाओं के नाम लिखिए।

उत्तर- वस्त्वलंकारदर्शनम् और काव्य सत्यलोकः।

प्रश्न 3- काव्यसत्यालोक में कितने उद्योत हैं?

उत्तर - पाँच उद्योत ।

प्रश्न 4- ब्रह्मानंद शर्मा के अनुसार काव्य के कितने भेद होते हैं?

उत्तर- तीन भेद।

प्रश्न 5- ब्रह्मानंद शर्मा के अनुसार काव्य का अपना प्रयोजन क्या होता है?

उत्तर- ब्रह्मानंद शर्मा के अनुसार कार्य का अपना कोई प्रयोजन नहीं होता।

प्रश्न 6- काव्यगत सत्य के भेदों के नाम लिखिए।

उत्तर- प्रकृतिगत सत्य, प्राणगत सत्य,हृदयगत सत्य एवं आध्यात्मिक सत्य।

प्रश्न 7 समाज में हमारे संबंध के कितने प्रकार होते हैं?

उत्तर- तीन प्रकार के होते हैं।

रक्त संबंध के आश्रित संबंध,मान्यता संबंध के आश्रित संबंध और साहचर्य संबंध के आश्रित संबंध।

3.12 उपयोगी पुस्तकें

1-संस्कृत साहित्य का समग्र इतिहास चतुर्थ खंड -आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी ,न्यू भारतीय बुक कॉरपोरेशन प्रथम संस्करण 2018

2- संस्कृत काव्यशास्त्र का आलोचनात्मक इतिहास- महामहोपाध्याय रेवा प्रसाद द्विवेदी, कालिदास संस्थान वाराणसी 2007

3- रसालोचनम् -डॉक्टर ब्रह्मानंद शर्मा, प्रथम संस्करण

3.13 निबंधात्मक प्रश्न

प्रश्न 1-डॉ.ब्रह्मानंद शर्मा के जीवन परिचय एवं कृतित्व परिचय पर प्रकाश डालिए।

प्रश्न 2- काव्य में सत्यता के सिद्धांत को विस्तार से प्रतिपादित कीजिए।

प्रश्न 3 काव्यगत सत्य के भेदों की समीक्षा कीजिए

प्रश्न 4- डॉक्टर ब्रह्मानंद शर्मा के अनुसार काव्य के कितने भेद होते हैं प्रत्येक भेद की विवेचना कीजिए

प्रश्न 5- काव्यगत सत्य का लोक के साथ संबंध को विस्तार पूर्वक समझाइए।

इकाई-04 अन्य आधुनिक काव्यशास्त्री
छज्जू राम शर्मा, रामप्रताप वैदिक, रहसबिहारी द्विवेदी, अन्य प्रमुख

इकाई की रूप रेखा

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 पं.छज्जूराम शर्मा -
  4.3.1 छज्जू राम शर्मा का जीवन परिचय
  4.3.2 पं.छज्जूराम शर्मा की रचनाएं
  4.3.3 आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र में योगदान
4.4 रामप्रताप वैदिक -
  4.4.1 रामप्रताप वैदिक का जीवन परिचय
  4.4.2 रामप्रताप वैदिक की रचनाएं
  4.4.3 आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र में योगदान
4.5 रहसबिहारी द्विवेदी -
  4.5.1 रहसबिहारी द्विवेदी का जीवन परिचय
  4.5.2 रहसबिहारी द्विवेदी की रचनाएं
  4.5.3 आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र में योगदान
4.6 अन्य प्रमुख आधुनिक काव्यशास्त्री -
  4.6.1 प्रो० शिवजी उपाध्याय
  4.6.2 पं. गिरिधरलाल शास्त्री
  4.6.3 आचार्य रमाशङ्कर तिवारी
  4.6.4 आचार्य चण्डिका प्रसाद शुक्ल
  4.6.5 नित्यानंद शास्त्री
  4.6.6 कृष्णमाधव झा
  4.6.7 सीताराम शास्त्री
  4.6.8 जगन्नाथ पाठक
4.7 सारांश
4.8 शब्दावली
4.9 अभ्यासार्थ प्रश्न-उत्तर
4.10 उपयोगी पुस्तकें
4.11 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 - प्रस्तावना

संस्कृत साहित्य की विविध विधाओं में वर्तमानकालीन आचार्यों ने विपुल साहित्य का सर्जन किया है। काव्य की रचना कवि के आन्तरिक भावों एवं संवेगों के प्रस्फुटित होने तथा बौद्धिक विकास के परिणाम स्वरूप होती है। काव्यसर्जन के लिए हृदयगत भावों का प्रस्फुटन, विषय गत सामग्रियों की उपस्थिति, भावाभिव्यक्ति करने में समर्थ परिष्कृत भाषा, विषय प्रतिपादन के निमित्त कवि की प्रवृत्ति इत्यादि समस्त तत्त्वों की उपस्थिति अनिवार्य होती है। इन समस्त तत्त्वों में से किसी एक के भी अभाव में काव्यरचना सम्भव नहीं होती। काव्यकर्त्ता पूर्वकृत ग्रन्थों के अध्ययन से शाखाभ्यास कर अपनी प्रतिभा के द्वारा काव्यरचना करता है।

अर्वाचीन संस्कृत साहित्य में जिस प्रकार विद्वान् आचार्यों ने काव्य की अन्यान्य विधाओं यथा- नाटक, खण्डकाव्य, महाकाव्य आदि में ग्रन्थ रचनाएँ की हैं, उसी प्रकार काव्यशास्त्र की पूर्ववर्ती परम्परा के अनुरूप 20 वीं शताब्दी (वर्तमान तक) के भी विभिन्न विद्वान् काव्यशास्त्र विचक्षणों ने काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों की रचना की है। किन्हीं विद्वानों ने काव्यशास्त्र के किसी एक विषय तथा कतिपय ने लगभग सम्पूर्ण विषयों पर अपनी मौलिक अवधारणाओं को अभिव्यक्त किया है।

प्रस्तुत इकाई में छज्जू राम शर्मा, रामप्रताप वैदिक और रहसबिहारी द्विवेदी जी का जीवन परिचय, उनकी रचनाएं, एवं संस्कृत काव्यशास्त्र में उनके योगदान के विषय में प्रकाश डाला गया है, एवं अन्य प्रमुख आधुनिक काव्यशास्त्रीयों का सामान्य परिचय, काव्यशास्त्रीय समीक्षा ग्रन्थों को सम्मिलित किया गया है। मौलिक रचनाकारों की अन्यान्य मौलिक कृतियों का भी परिचय तथा उनमें विवेचित सामग्री का प्रस्तुतीकरण किया गया है। टीका ग्रन्थों तथा समीक्षा ग्रन्थों के रचनाकारों तथा कृतियों में विवेचित विषय सामग्री का परिचय मात्र दिया गया है, परन्तु मौलिक कृतियों के महत्त्वपूर्ण तथ्यों का विवेचन किया गया है।

4.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप-

- ❖ छज्जू राम शर्मा के व्यक्तित्व, कृतित्व व आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र में उनके योगदान को जान सकेगें।
- ❖ रामप्रताप वैदिक के व्यक्तित्व, कृतित्व व आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र में उनके योगदान को जान सकेगें।
- ❖ रहसबिहारी द्विवेदी के व्यक्तित्व, कृतित्व व आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र में उनके योगदान को जान सकेगें।
- ❖ अन्य प्रमुख आधुनिक काव्यशास्त्रियों के संस्कृत काव्यशास्त्र में योगदान को जान सकेगें।

4.3- पं.छज्जूराम शर्मा (१८९५-१९७८ ई.)

4.3.1 जीवन परिचय-

बीसवीं शताब्दी के काव्यशास्त्रीय चिन्तकों में अग्रगण्य महामहोपाध्याय पं.छज्जूरामशास्त्री का जन्म वर्तमान हरियाणा राज्य के करनाल जनपद में स्थित रितोली ग्राम में वि. संवत् १९५२ (सन् १८९५ ई.) में एक नैष्ठिक गौड ब्राह्मण परिवार में हुआ। आपके पिताश्री का नाम पं. मोक्षराम तथा माँ का नाम मामकी देवी था। आपके अग्रज का नाम मूलचन्द्र था। इनकी प्रारंभिक शिक्षा इनके चाचा पं. शिवदत्त के

सानिध्य में हुई। थानेसर निवासी पं. गरुडध्वज ने भी इन्हें दीक्षा दी थी। आचार्य छज्जूराम शास्त्री ने लगभग 40 वर्ष तक जींद, लायलपुर, महेन्द्रगढ़ तथा कुरुक्षेत्र नगरों के महाविद्यालयों में प्रधानाध्यापक रहते हुए अध्यापन कार्य किया। सन् 1920 ई० में गोवर्धन मठाधीश जगद्गुरु शङ्कराचार्य श्रीभारती कृष्णतीर्थ ने आपको 'विद्यासागर' पदवी से समलंकृत किया। 'संस्कृतेतिहास' नामक ग्रन्थ पर सन् 1960 ई० में विश्वविद्या प्रतिष्ठान, बम्बई द्वारा इन्हें 'महामहोपाध्याय' की उपाधि प्रदान की गई। अखिल भारतीय संस्कृत प्रचारक मण्डल की ओर से संस्कृत सेवा के लिए इन्हें तत्कालीन मुख्यमंत्री द्वारा (5000 रूपये के पुरस्कार से) पुरस्कृत किया गया था। सन् 1961 ई० में आकाशवाणी दिल्ली में शास्त्री जी वेदों पर भाषण दिया करते थे। तथा उसी समय भारतीय विद्याभवन, दिल्ली में सम्मानित प्राध्यापक भी थे। इनसे सम्बन्धित विवरण प्रकृत ग्रन्थ की निम्न कारिकाओं में भी प्राप्त होता है।

श्रीगणेशं नमस्कृत्य मामकी नाम मातरम्।
पितरं मोक्षरामहं मूलचन्द्रं च सोदरम् ॥
जिन्दपुर्या रविक्रोशे जामणीग्राम सन्निधौ
महामहोपाध्यायेन विद्यासागरशास्त्रिणा।
गौड़पण्डितवर्येण छज्जूरामेण शर्मणः ।
साहित्यसारमादाय साहित्यागम-विस्तरात्।
साहित्यविन्दुः क्रियते साहित्यज्ञान वृद्धये ॥

आचार्य छज्जूराम शास्त्री के पुत्र का नाम जीवनराम शास्त्री था, जो पिता की ही भाँति संस्कृत विद्या के ज्ञाता थे तथा उन्होंने अपने पिता जी के ग्रन्थों का सम्पादन भी किया। जीवनराम शास्त्री की पत्नी का नाम कलावती है, जो गृहस्थ महिला हैं। जीवनराम शास्त्री जी के पुत्र का नाम दीपक शास्त्री है, जो अपने पिता के ईकलौते पुत्र हैं तथा इनकी पाँच पुत्रियाँ हैं, दीपक शास्त्री की पत्नी का नाम मीनाक्षी है तथा इस दम्पति के पुत्र का नाम उज्ज्वल है। आचार्य छज्जूराम शास्त्री का पूरा परिवार वर्तमान में 4/65, बगीची माधव दास (लालकिला के पास) दिल्ली में निवास करता है। परन्तु दैवीय विडम्बना है कि आचार्य शास्त्री द्वारा रचित एक भी साहित्य इनके घर में मौजूद नहीं है। इनके समय निर्धारण के सम्बन्ध में यद्यपि कठिनाईयों का सामना करना पड़ा, तथापि येन-केन प्रकारेण इनकी प्रथम पौत्री रजनी (भद्रा) के द्वारा इनके देहावसान के वर्ष का पता चल जाने के बाद निर्विवादतः इनका समय सन् 1905 ई० से लेकर सन् 1979 ई० तक निर्धारित किया गया है।

4.3.2 पं.छज्जूराम शर्मा की रचनाएं-

आचार्य छज्जूरामशास्त्री ने सोलह कृतियों का प्रणयन किया जिनके नाम हैं— सुल्तानचरितम् (महाकाव्य) दुर्गाभ्युदयनाटकम्, छज्जूरामायणम्, कुरुक्षेत्रमाहात्म्यम्(कुरुक्षेत्राष्टकम्), कर्मकाण्डपद्धतिः, साहित्यबिन्दुः, मूलचन्द्रिका (न्यायमुक्तावली टीका), सरला (न्यायदर्शनटीका), सारबोधिनी (निरुक्तटीका), साधना (लघुसिद्धांतकौमुदी व्याख्या), परीक्षा अथवा विद्यासागरी (काव्यप्रकाशटीका), विबुधरत्नावली (पद्यबद्ध संस्कृतसाहित्येतिहास), परशुरामदिग्विजयम्, प्रत्यक्षज्यौतिषम्।

4.3.3 संस्कृत काव्यशास्त्र में योगदान-

पं. छज्जूराम शास्त्री संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान थे। आचार्य छज्जूरामशास्त्री-प्रणीत एकमात्र अलंकारशास्त्रीय ग्रंथ साहित्यविन्दु का प्रकाशन सन् १९०१ ई. में हुआ। वस्तुतः यह संस्कृतकाव्यशास्त्र

का एक छात्रोपयोगी संस्करण है, जिसमें आचार्य ने, विवादों एवं शास्त्रार्थों का परिहार करते हुए, सरलमार्ग से अलंकारशास्त्र के सिद्धान्तों का बोध कराया है। ग्रंथ का अधिकांश आचार्य का स्वोपज्ञ योगदान है, परन्तु कहीं-कहीं प्राचीन आचार्यों को भी उद्धृत किया गया है। उदाहरणार्थ दोष-प्रकरण में सारे उदाहरण श्रीहर्ष-प्रणीत नैषधमहाकाव्य से ही लिए गए हैं।

साहित्यबिन्दु नामक ग्रन्थ पाँच बिन्दुओं में विभक्त है, जिसके प्रथम बिन्दु में काव्यलक्षण, काव्यफल, काव्यनिर्माण समय, काव्यकारण, काव्यभेद, रूपक लक्षण, रूपक भेद, नाटक लक्षण, पूर्वरङ्ग लक्षण, नान्दी लक्षण, प्रस्तावना लक्षण, विष्कम्भक-प्रवेशक लक्षण, विदूषक लक्षण, नाट्योक्ति लक्षण, काव्य-संहार प्रशस्ति-लक्षण, भाषा विभाग, श्रव्यकाव्य, महाकाव्य, खण्डकाव्य तथा चम्पू काव्यादि का लक्षण प्रस्तुत किया गया है। द्वितीय बिन्दु में शब्दार्थत्रैविध्य, वाचक, लाक्षणिक, व्यञ्जक लक्षण, अभिधा, लक्षणा, व्यञ्जना लक्षण, रस लक्षण, रस में प्रमाण, विभावानुभावव्यभिचारि लक्षण, रस-भेद, रसाभास तथा भावशान्त्यादि का विवेचन किया गया है। तृतीय बिन्दु में काव्यदोष लक्षण, काव्य दोष भेद, वाक्य दोष, अर्थ दोष, रस दोष तथा अदोषत्वोंदि का विवेचन किया गया है। चतुर्थ बिन्दु में रीति-भेद, रीति-लक्षण, गुण-विभाग, माधुर्य, ओज और प्रसाद तथा इन्हीं तीनों में अन्य का अन्तर्भाव तथा माधुर्यादि गुण व्यञ्जक विषयों का विवेचन किया गया है। अन्तिम पञ्चम बिन्दु में अलङ्कारों का लक्षणोदाहरण-पूर्वक विवेचन किया गया है।

इस प्रकार साहित्यबिन्दु परम्परया प्राप्त संस्कृत काव्यशास्त्र के समस्त विवेच्य विषयों एवं प्रमेयों का संस्पर्श करता है। आचार्य छज्जूरामशास्त्री ने अत्यन्त प्रसाद-मधुर भाषा में, प्राध्यापकोचित शैली में गूढातिगूढ साहित्य शास्त्रीय सिद्धान्तों की व्याख्या की है जिसके कारण यह ग्रंथ अत्यन्त लोकप्रिय रहा है। बीसवीं शती ई. का तो यह एक प्रतिनिधिभूत ग्रंथ रहा है छात्रों एवं प्राध्यापकों के लिए।

यह ग्रन्थ इस सदी का महत्त्वपूर्ण आलङ्कारिक ग्रन्थ है। प्रकृत ग्रन्थ में नाट्यशास्त्रीय एवं काव्यशास्त्रीय (उभय) विषयों का विवेचन है। यह ग्रन्थ चार भागों में विभक्त है। कारिका, वृत्ति, उदाहरण और उदाहरण विवरण। इनमें कारिका, वृत्ति और विवरण लेखक के स्वरचित हैं, किन्तु उदाहरण कहीं-कहीं अन्य ग्रन्थों से भी संग्रहीत हैं। प्रस्तुत कृति पाँच बिन्दुओं में विभक्त है, जिसके प्रथम बिन्दु में 36 कारिका, द्वितीय में 33, तृतीय में 10, चतुर्थ में 10 तथा अन्तिम पञ्चम बिन्दु में 41 कारिकाएँ हैं। इस प्रकार ग्रन्थ में कुल 130 कारिकाएँ हैं। इलाहाबाद विश्वविद्यालय के डॉ० आनन्द श्रीवास्तव द्वारा लिखे गये प्रबन्ध अर्वाचीन संस्कृत काव्यशास्त्र में इनका उल्लेख किया गया है।

4.4 रामप्रताप वैदिक

4.4.1 जीवन परिचय-

संस्कृत काव्यशास्त्र के आधुनिक युग में चमत्कारसम्प्रदाय के रूप में नवीन संप्रदाय का प्रतिपादन करने वाले, चमत्कारविचारचर्चा नामक ग्रंथ की रचना से संस्कृत काव्यशास्त्र की आधुनिक परंपरा में विशिष्ट स्थान प्राप्त करने वाले मूर्धन्य काव्यशास्त्री प्रो० रामप्रताप वेदालङ्कार का जन्म बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में हरियाणा प्रांत में हुआ है।

संस्कृत के प्राचीन आचार्यों की तरह ही रामप्रताप वेदालङ्कार अपने जीवन वृत्त के विषय में अपने संप्रदाय स्थापक ग्रंथ चमत्कार विचार चर्चा में मौन ही रहे हैं।

आचार्य रामप्रताप वेदालङ्कार ने अपनी प्रारंभिक शिक्षा पूर्ण कर संस्कृत शास्त्रों का गहन अध्ययन करते हुए संस्कृत साहित्य में उच्च शिक्षा प्राप्त की। आपको संस्कृत के साथ-साथ हिंदी,

अंग्रेजी, पंजाबी आदि अनेक भाषाओं का ज्ञान था आचार्य रामप्रताप शारदा आदि प्राचीन लिपियों के भी विशेष जानकार रहे हैं।

अपनी रोचक व गंभीर अध्यापन शैली के कारण छात्र समुदाय में अत्यंत लोकप्रिय आचार्य राम प्रताप वेदालङ्कार ने अपने शिक्षक जीवन के विविध सोपानो के क्रम को पार करते हुए जम्मू विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग में आचार्य एवं अध्यक्ष पद को सुशोभित किया आचार्य रामप्रताप को संस्कृत के आधुनिक काव्यशास्त्र जगत में उनके व्यक्तिगत परिचय से अधिक उनके अपूर्व काव्य शास्त्रीय प्रतिपादन के लिए जाना जाता है। संस्कृत के प्राचीन काव्य शास्त्रीय आचार्यों की चमत्कार विषयक अवधारणा को संप्रदाय रूप में विकसित करने वाले आचार्य के रूप में हमें आचार्य रामप्रताप वेदालङ्कार का वास्तविक जीवन परिचय उपलब्ध होता है।

4.4.2 संस्कृत काव्यशास्त्र में योगदान

डॉ० रामप्रताप वेदालङ्कार ने 'चमत्कारविचारचर्चा' नामक नवीन ग्रन्थ की रचना की। 'चमत्कार' काव्य और कलाओं का सर्वमान्य और सर्वाधिक महत्त्व का तत्त्व है। चमत्कार का लक्षण आपने इस प्रकार बनाया- 'चमत्करोति यः काव्ये चमत्कारः स उच्यते।२.३६। इसमें 'रसे सारश्चमत्कार' का पुराना मत पल्लवित किया गया है। इसमें विचार-नामक तीन अध्याय है और १६५ कारिकाएँ। २००४ में प्रथम बार प्रकाशित यह ग्रन्थ संस्कृतकाव्यशास्त्र का कदाचित् अभी तक का अन्तिम ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ की भूमिका भी कारिकाओं में ही लिखते हुए डॉ० प्रियतमचन्द्र शास्त्री ने लिखा- 'काव्यपुरुष और कवितावनिता का पुत्र होता है चमत्कार काव्यपुरुष की प्रतिष्ठा तब हुई जब उसमें चमत्कार प्रतिष्ठित हो गया। काव्य में चमत्कार न रहे तो वह वैसे ही शोभा नहीं देता जैसे आत्मा के विना शरीर। चमत्कार शब्द में भी रहता है और अर्थ में भी। फलतः पूरे काव्य में रहता है वह, क्योंकि काव्य भी शब्दार्थयुगल ही है। ब्रह्मा द्वारा उत्पादित जगत् जैसे लीन होता है ब्रह्मा में, वैसे ही रस आदि का समुदाय भी विलीन होता है चमत्कार में अर्थात् चमत्कार का ही एक अंश है रस। काव्य की आत्मा चमत्कार ही वही है सार। सही सम्प्रदाय चमत्कार का ही होना चाहिए।

प्रथम विचार के आरंभिक मङ्गल पद्य में 'चमत्कार' को हो संसार का उत्पादक माना और माना कि चमत्कार में जगत्कर्त्ता प्रभु ही आ समाया है। यह ठीक लिखा, किन्तु आगे श्री शास्त्री भावना में वह गए- 'चर और अचर चमत्कार में ही उतराते डूबते रहते हैं। यहाँ तक कि स्वयं चमत्कार भी चमत्कार में ही विलीन हो जाता है। 'चमत्कार' पद की निरुक्ति में लिखा 'चमत्कार का जो चक्य है उससे चित्त द्रवित हो उठता है चुट की बजाते ही'। तब जो ह्लाद अनुभव में आता है वह है प्रयोजन चमत्कार का। वस्तुतः चमत्कार आनन्द ही है उससे भिन्न नहीं चमत्कार उत्पन्न होता है उन्हीं हेतुओं से जिन्हें रुद्रट और मम्मट ने काव्य का उत्पादक बतलाया है अर्थात् 'शक्ति, निपुणता, और अभ्यास'। यह जो चमत्कार है उसे प्रकट करती है नवोन्मेषशक्ति की प्रज्ञा यानी प्रतिभा। प्रतिभा अकेली है कवियों का अमूल्य आभरण। इसके पश्चात् २२-३४ कारिका में चमत्कारी कवि की प्रशस्ति है।

द्वितीय विचार में चमत्कार का लक्षण उदाहरणों में घटाया। लक्षण दिया वह तत्त्व जिससे सहृदय पाठक को आनन्द की अनुभूति होती है। चमत्कार में विस्मय भी मिला रहता है। किसी वस्तु या व्यक्ति का आकर्षक सौन्दर्य भी चमत्कार पैदा करता है और उक्ति का सौन्दर्य भी, जिसमें सभी अलङ्कार आ जाते हैं जिनमें से कुछ के उदाहरण प्राचीन काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों से दिए। आगे कहा सुन्दर काव्य की चर्वणा से जो चमत्कार अनुभव में आता है वह अन्य सुखों से ऊँचा और अतीव विलक्षण होता है। दोषों से चमत्कार में कमी आती है। ईश्वर सभी भूतों के हृदय में विद्यमान है और उसकी परा शक्ति ही चमत्कार

है। कहते कहते शास्त्री जी कह ही पड़े चमत्कार के विना काव्य काव्य ही नहीं यानी पहले चमत्कार फिर काव्य। ठीक वैसा ही उद्गार जैसा अलंकार के विषय में कुन्तक का 'सालङ्कारस्य काव्यता'। परिभाषाएँ बनाने की क्रीडा तो हम भारतीयों को युगों से प्रिय रही है।

कुछ चर्चा सहृदय की फिर तृतीय विचार में शास्त्री जी अपनी भूमि कश्मीर पहुँच गए। कश्मीर शब्द का प्रयोग करते हुए उन्होंने विह्लण के स्वर में स्वर मिलाकर कहा- कश्मीरभूमि वह भूमि है जो है जन्मभूमि वैसे ही काव्य की जैसे केसर की। इसीलिए माँ शारदा वहीं जा बसी हैं। वह भारत का शीर्षभाग है। माँ शारदा अन्यत्र रहेंगी कहाँ मस्तिष्क को छोड़। इसीलिए वहीं हुए क्षेमेन्द्र जैसे कवि। मम्मट भी वहीं हुए। दोनों ने चमत्कार को महत्त्व दिया, किन्तु कोई चमत्कारसम्प्रदाय नहीं चलाया। हन्त । कुछ विद्वानों ने काव्यलक्षण में भी चमत्कार शब्द छोड़ रखा है। विश्वेश्वर और विश्वनाथदेव ने काव्य के चमत्कार पर आश्रित तीन भेद बतलाए-चमत्कारी, चमत्कारितर तथा चमत्कारितम। आगे ध्वनिवादी व्यवस्था का उल्लेख। अन्त में अन्य सभी साहित्यसंप्रदाय सिद्ध किए गए कारण और साध्य सिद्ध किया गया चमत्कार को माँ वाग्देवी को नम्रतापूर्वक प्रणाम कर शास्त्रीजी ने अपनी चमत्कारविचारचर्चा पूरी की। यहाँ विचारणीय बिन्दु है भेद का। जिसे आह्लाद और आनन्द, कहा जाता है उसे चमत्कार से नीचे की कोई सीढ़ी माना जा रहा है परन्तु ऐसा है नहीं।

4.5 - रहस बिहारी द्विवेदी

4.5.1 जीवन परिचय-

महामहोपाध्याय आचार्य हरिहरकृपालुद्विवेदी के भ्रातृव्य पं.रामाभिलाष द्विवेदी के पुत्र रहसविहारीजी का जन्म इलाहाबाद (उ.प्र.) जनपद के समहन ग्राम में २ जनवरी १९४७ ई. को हुआ। आपकी उच्च शिक्षा जबलपुर विश्वविद्यालय में सम्पन्न हुई। अर्वाचीन संस्कृत महाकाव्यों पर उत्कृष्ट शोधकार्य सम्पन्न कर आपने पीएच.डी. उपाधि प्राप्त की तथा शीघ्र ही अध्यापन कार्य से जुड़ गए। कुछ दिनों तक महाराजा कॉलेज छतरपुर में अध्यापन करने के बाद द्विवेदीजी रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर में स्थानापन्न हो गए जहाँ आप आचार्य एवं कलासंकाय के डीन पद पर अभिषिक्त हुए।। उन्हें वर्ष 2012 में संस्कृत के लिए राष्ट्रपति के सम्मान पत्र से सम्मानित किया गया था।

4.5.2 संस्कृत काव्यशास्त्र में योगदान-

आचार्य रहसविहारी द्विवेदी संस्कृत काव्यशास्त्र परम्परा के गहन अधीती, मुखर वक्ता तथा शास्त्रार्थप्रतिभा सम्पन्न विद्वान् हैं। संस्कृत काव्यशास्त्र के विभिन्न बिन्दुओं पर आप यथावसर अत्यन्त धीर-गम्भीर, अभिनवान्वेषण सम्पन्न शोधालेख प्रस्तुत करते रहे हैं। आपने रागकाव्य तथा राष्ट्रभक्ति-रस पर मौलिक चिन्तन किया है। अर्वाचीन संस्कृत महाकाव्यों पर किया गया आपका शोधकार्य अत्यन्त मौलिक एवं सारगर्भित है। इसमें लगभ ४० महाकवियों के व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व का सांगोपाङ्ग तत्त्वपरक समीक्षण किया गया है।

संस्कृत काव्यशास्त्रविषयक आपका ग्रंथ है- नव्यकाव्यतत्त्वमीमांसा प्रो. द्विवेदी ने काव्यप्रयोजन, काव्यलक्षण तथा काव्यहेतु पर विचार करते हुए आधुनिक परिवेश पर विशेष ध्यान केन्द्रित किया है। इसीलिए उनके काव्य प्रयोजनों में अनेक ऐसे प्रयोजन भी समरस हो गए हैं जो सामान्य जनों के होते हैं। वह लिखते हैं-

असन्तं मार्गमुत्सृज्य सन्तं गमयितुं जनम्।
हृदाह्लादिकया वाचा प्रज्ञावान् काव्यमङ्कते।।
कविकीर्ति पुरस्कार- स्वान्तः सुखसमीहया।

प्राक्कथावस्तुसंस्कारं सताञ्च चरिताङ्कनम् ॥
नव्यकाव्यविधोन्मेषं व्यङ्ग्योक्तिं विकृती तथा।
राष्ट्रभक्ति युगौचित्यं पर्यावरणचेतनाम् ॥
राष्ट्रस्वातंत्र्यवीराणां चरितञ्चार्च्यमीश्वरम् |
समुद्दिश्याऽधुना काव्यं कुर्वन्ति कवितल्लजाः॥

आचार्य द्विवेदी द्वारा वर्णित ये काव्य प्रयोजन विवरणात्मक हैं तथा काव्यशास्त्र की गरिमा एवं कवि की अलोकसामान्य व्यक्तित्व-प्रभा की दृष्टि से भी थोड़े शिथिल प्रतीत होते हैं। अनेक ऐसे काव्यप्रयोजन हैं जो मम्मटप्रोक्त प्रयोजनों में अन्तर्भूत हो सकते हैं। यदि प्रतिपाद्य वैशिष्ट्य को ही दृष्टि में रखकर काव्य प्रयोजन निश्चित किए जाएँ तो अनवस्थादोष उत्पन्न हो जाएगा। द्विवेदीजी काव्योपयोगी शब्दार्थ की प्रतिभामयी उपस्थिति, लोक एवं शास्त्र का नैपुण्य तथा विद्याज्ञान को काव्य का हेतु मानते हैं।'

इसी प्रकार लोकोत्तर हृदयाह्लाद तथा लोकोद्बोधन में संगत प्रज्ञावान् कवि की सवाक् को वह काव्य मानते हैं। काव्य के विशिष्ट भेदों- महाकाव्य, रागकाव्य, विमानकाव्य, दूतकाव्य, लहरीकाव्य, प्रगतिशीलकाव्य, स्तोत्रकाव्य, शतककाव्य, अनुकृतिकाव्य, अन्योक्ति काव्य, हाइकूकाव्य, तान्काकाव्य, सीजोकाव्य, लघुबिम्बकाव्य, लिपिरूपककाव्य तथा लघुवर्णकाव्य जैसे अभिनव प्रयुक्त काव्यों की परिभाषायें भी द्विवेदीजी ने गढ़ी हैं। वे प्रायः उपलब्ध तत्तत् वैदेशिक काव्यबन्धों के वैशिष्ट्य के आधार पर निबद्ध की गई हैं।

इसी तरह द्विवेदीजी ने उपन्यास, लघुकथा, बिम्बविधान, सौन्दर्यविधान, प्रतीकविधान, गीत, नभोनाट्य (रेडियो-रूपक) हास्य-व्यङ्ग्य, प्रक्षोभरस तथा राष्ट्रभक्ति रस को भी परिभाषित किया है। इनमें से अनेक तत्त्व तो पाश्चात्य काव्यशास्त्र से सम्बद्ध हैं अतः उसी परिप्रेक्ष्य में यथावत् ले लिए गए हैं। हाइकू, ले सीजो, तान्का, सानेट, प्रतीक आदि वैदेशिक काव्यतत्त्व हैं मूलतः। अतः उनके स्वरूप में कोई परिवर्तन किया भी नहीं जा सकता। प्रो. द्विवेदी द्वारा परिभाषित प्रायः अधिसंख्य काव्यतत्त्व प्रो.राजेन्द्रमिश्र एवं प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी द्वारा भी परिभाषित हैं। अतएव इन तीनों काव्यशास्त्रियों के लक्षणों की, गुण-दोषपुरस्सर समवेत समीक्षा होनी चाहिए।

आचार्य रहस विहारी द्विवेदी संस्कृत काव्यशास्त्र आधुनिक परम्परा के श्रेष्ठ कवि माने जाते है। 'नव्यकाव्यतत्त्वमीमांसा' आचार्य द्विवेदी कृत संस्कृत काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ हैं। आधुनिक परिवेश को केन्द्र मानकर आचार्य द्विवेदी ने काव्यप्रयोजन, काव्यलक्षण, काव्यहेतु, का निरूपण किया है। आचार्य द्विवेदी ने हाइकू, सीजो, तान्का आदि पाश्चात्य काव्यतत्त्व के आधार पर काव्य के विशिष्ट भेदों का विवेचन किया है।

प्रमुख कार्य

उन्होंने 1947 और 1970 के बीच रचित संस्कृत में 156 महाकाव्य कविताओं को सूचीबद्ध किया। अर्वाचीनसंस्कृत महाकाव्यानुशीलनम्(1981) 134 पृष्ठों में आधुनिक संस्कृत महाकाव्यों पर एक संस्कृत ग्रंथ, सागरिका समिति द्वारा सागर में प्रकाशित। साहित्यविमर्षः(2002) - भारतीय साहित्य पर शोध लेखों का एक संग्रह। संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित।

स्वस्तिसन्देशः

स्वरितसन्देशः

संस्कृतवाङ्मये विज्ञानम्

तीर्थभारतम् (2010) - भारतीय तीर्थ स्थानों पर कविता

पुरस्कार और सम्मान
संस्कृत के लिए राष्ट्रपति का सम्मान प्रमाणपत्र (2012)
उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान द्वारा वाल्मीकि पुरस्कार (2016)।

4.6 - अन्य प्रमुख आधुनिक काव्यशास्त्री

4.6.1 प्रो० शिवजी उपाध्याय-

साहित्यशास्त्र के मर्मज्ञ विद्वान् प्रो० शिवजी उपाध्याय का जन्म सन् 1943 ई० में ग्राम पण्डितपुर, जनपद मिर्जापुर, उत्तरप्रदेश में हुआ था। इनके पिता का नाम पं० सङ्कटाप्रसाद उपाध्याय तथा माता का नाम श्रीमती राजेश्वरी देवी था। प्रो० उपाध्याय सम्पूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी के साहित्य संस्कृति सङ्काय के अन्तर्गत साहित्य के विभागाध्यक्ष रहे हैं। इसके अतिरिक्त प्रो० उपाध्याय सन् 2000 से 2003 ई० तक इसी विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपति (Pro-Vice Chancelor) भी रहे। प्रो० उपाध्याय महान् कवि तथा दार्शनिक भी हैं। संस्कृत में अनेक शोध-पत्र और पुस्तकें विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं तथा प्रकाशनों से प्रकाशित हैं। प्रो० उपाध्याय विरचित शक्तिशतकम् तथा कुम्भशतकम् उत्कृष्ट काव्य हैं। इन दोनों काव्यों के कतिपय अंश का पठन-पाठन दिल्ली विश्वविद्यालय के संस्कृत विषय में बी० ए० आनर्स के पाठ्यक्रम में किया जाता है। विद्वान् आचार्य सन् 1943 से वर्तमान समय तक संस्कृत साहित्य की सेवा में तत्पर हैं।

साहित्यसन्दर्भ उपाध्याय जी की काव्यशास्त्रीय कृति है। यह ग्रन्थ सन् 1990 ई० में सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी से प्रकाशित है। जो छः अनुच्छेदों में विभक्त हैं। इसके प्रथम अनुच्छेद का नाम रसतत्त्वविमर्श है; जिसमें विद्वान् आचार्य ने रस के स्वरूप पर विचार-विमर्श किया है। काव्यस्वरूपविमर्श नामक द्वितीय, अनुच्छेद में काव्य के स्वरूप का निरूपण किया गया है। काव्येधर्मधर्मिभाव विमर्श: नामक तृतीय अनुच्छेद में काव्य को धर्मी और गुणादि को धर्म बतलाया गया है। साहित्यस्वरूपविमर्श नामक चतुर्थ अनुच्छेद में साहित्य के स्वरूप का विवेचन किया गया है। सौन्दर्यविमर्श नामक पञ्चम अनुच्छेद में सौन्दर्य के स्वरूप पर विचार-विमर्श किया गया है तथा योगदृशा रसबोधविमर्श नामक अन्तिम पष्ठ अनुच्छेद में योगशास्त्र की दृष्टि से रस पर अपने विचारों को विद्वान् आचार्य ने अभिव्यक्त किया है।

एतदतिरिक्त इस ग्रन्थ के परिशिष्ट में आचार्य ने मोक्ष तत्साधनविमर्श पर 21 (इक्कीस) कारिकाओं की रचना की है तथा इस पर वृत्ति भी लिखकर मोक्ष और उसके साधन का निरूपण किया है। इसी परिशिष्ट में ही आचार्य ने मीमांसायामितिकर्तव्यतया धर्मतत्त्वविमर्श पर 35 कारिकाएँ तथा उस पर वृत्ति लिखकर मीमांसा शास्त्र के धर्मतत्त्व पर विचार व्यक्त किये हैं। इस प्रकार इस परिशिष्ट की 56 कारिकाओं में आचार्य ने परम्परागत काव्यविचार की पुनर्प्रस्तुति के साथ नवीनरूप पर भी विचार किया है।

साहित्यसन्दर्भ इस सदी के ग्रन्थों में महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। वेदान्त तथा मीमांसा विषय से उपश्लिष्ट इस ग्रन्थ की 158 कारिकाओं में प्रो० उपाध्याय ने प्रमुख काव्यशास्त्रीय तत्त्वों का दार्शनिक दृष्टि से विवेचन किया है। विषय के सम्यक्त ज्ञान के लिए विद्वान् आचार्य ने स्वोपज्ञ कारिकाओं पर वृत्ति भी लिखी है।

4.6.2 पं. गिरिधरलाल शास्त्री

अभिनवकाव्यप्रकाश नामक काव्यशास्त्रीय ग्रंथ के प्रणेता पं. गिरिधरलाल शास्त्री का जन्म चैत्र कृष्णपक्ष की एकादशी संवत् १९५० (सन् १८९८ ई.) विक्रमी को मेवाड़ क्षेत्र के गादोली ग्राम में हुआ। उनकी

मृत्यु २२ नवम्बर, १९८५ ई. में हुई। इस प्रकार वह सत्तासी वर्ष जीवित रहे। शास्त्रीजी के विद्वान् पिताश्री पं० गोवर्धनलाल बागोर-नरेश श्री शक्तिसिंह के मुख्य सभापण्डित थे। इनकी माताश्री का नाम रत्नाबाई था। पं. गिरिधरलालजी ने पं. रामसुन्दरशास्त्री के श्रीचरणों में बैठकर शास्त्राध्ययन किया था।

क्षेत्रीय भाषा (मेवाड़ी) हिन्दी तथा संस्कृत में शास्त्रीजी ने प्रायः तीस ग्रंथों का प्रणयन किया जिनमें अभिनवकाव्यप्रकाश साहित्यशास्त्रीय कोटि का ग्रंथ है। दो खण्डों में प्रकाशित इस ग्रंथ में क्रमशः आठ एवं पाँच उन्मेष हैं। प्रथम खण्ड के उन्मेषों में काव्यलक्षण, शब्दशक्ति-विवेचन, भाव, रस, ध्वनि, गुणीभूत-व्यङ्ग्य, ध्वनिस्थापन तथा दृश्यकाव्यभेद निरूपित हैं। इसी प्रकार द्वितीय खण्ड में क्रमश: पददोष, वाक्यदोष, अर्थदोष, रसदोष तथा गुणदोष निरूपित हैं। शास्त्रीजी ने अलंकारों का निरूपण अपने ग्रंथ में नहीं किया है, यह विशेष तथ्य है। यद्यपि यह ग्रंथ परम्परा-पोषणमात्र में पर्यवसित है, तथापि कहीं-कहीं मौलिकता के भी दर्शन होते हैं। शास्त्रीजी ने पूर्ववर्ती आचार्यों का मत उपन्यस्त करते के अनन्तर अपना जो मन्तव्य उपस्थित किया है वही उनका मौलिक अवदान है। कवि को परिभाषित करते हुए शास्त्रीजी कहते हैं कि नवनवार्थ के उद्भाटयिता ही कवि है। इसी प्रकार ध्वनिरूप में परिवर्तित वैखरी वाक् को ही वह काव्यात्मा मानते हैं। काव्य प्रयोजनों में परमानन्दरूप परनिर्वृति पर उनका विशेष जोर है। स्थायिभावों की संख्या तो वह नौ ही स्वीकार करते हैं परन्तु व्यभिचारिभावों में पन्द्रह मानसभावों को भी उन्होंने स्वीकार किया है। अभिनवकाव्यप्रकाश, जैसा कि संज्ञामात्र से प्रकट है, आचार्य मम्मट प्रणीत काव्यप्रकाश का सिद्धान्तानुवर्तन करता है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यही है कि यह काव्यशास्त्र एवं नाट्यशास्त्र- दोनों का समवेत विवेचन करता है।

4.6.3 आचार्य रमाशङ्करतिवारी-

उत्तरप्रदेश राज्य के बलिया जनपद में १ जुलाई १९९५ ई. को जन्में डॉ. तिवारी ने प्रथमतः अंग्रेजी तथा हिन्दी में एम.ए. किया तथा हिन्दी में ही उन्होंने पीएच. डी. उपाधि प्राप्त की। संस्कृत विद्वानों के बीच डॉ. तिवारी की प्रतिष्ठा उनके सम्मानित समीक्षाग्रंथ कालिदास से हुई। कालान्तर में उन्होंने संस्कृत एवं हिन्दी में अन्य अनेक मानक कृतियाँ प्रस्तुत कीं। २४ परिच्छेदों में विभक्त काव्यतत्त्वविवेकः डॉ. तिवारी की संस्कृत काव्यशास्त्रीय कृति है जो कारिका एवं वृत्ति-पद्धति में लिखी गई है। डॉ. तिवारी अंग्रेजी काव्यशास्त्र के भी पारंगत विद्वान् हैं फलतः उनके संस्कृत काव्यशास्त्रीय विवेचन में तुलनात्मक समीक्षा का पुट आद्यन्त मिलता है। उन्होंने मुख्यतः काव्य के सामान्य पक्षों (काव्यस्वरूप, काव्यहेतु, काव्यप्रयोजनादि) का ही संस्पर्श किया है। तथा रीति, गुण, मार्ग, अलंकार आदि को छोड़ दिया है। भारतीय विद्या प्रकाशन, वाराणसी से १९९६ ई. में प्रकाशित यह ग्रंथ हमारी काव्यशास्त्रीय दृष्टि को विस्तृत बनाता है।

4.6.4 आचार्य चण्डिकाप्रसाद शुक्ल (जन्म २४ अगस्त १९२१ ई.)

विश्वविश्रुत इलाहाबाद विश्वविद्यालय के पूर्व आचार्य एवं संस्कृत विभागाध्यक्ष, साहित्य एवं व्याकरण के समन्वित प्रातिभ-विग्रह डॉ. चण्डिकाप्रसाद शुक्लजी का जन्म इलाहाबाद जनपद की मेजा तहसील में, गंगा तटवर्ती शुक्लपुर अटखरिया नामक गाँव में हुआ आपके पिताश्री पं. रामकिशोरशुक्लजी अत्यन्त परोपकारी, तपस्वी एवं लोकप्रख्यात दैवज्ञ थे। उन्हीं के पुण्य प्रभाव से आचार्य शुक्ल का सारस्वत-विग्रह अभिनन्द्य बन सका।

नैषधीयपरिशीलन पर शुक्लजी को इलाहाबाद विश्वविद्यालय की डी.फिल. उपाधि तथा आचार्य भोजदेव-प्रणीत शृङ्गारप्रकाश के समीक्षात्मक अध्ययन पर डी. लिट्, उपाधि मिली। बीसवीं शती ई. के मूर्द्धन्य संस्कृतज्ञ प्रो. वी. राघवन् स्वयमेव आपके डी.लिट्. शोधप्रबन्ध के परीक्षक थे। अन्यान्य अनेक

लोक एवं राज्यसम्मानों के अनन्तर आप महामहिम राष्ट्रपति सम्मान से अलंकृत हुए। प्रो. चण्डिकाप्रसाद शुक्लजी एक सहृदय रंगकर्मी, कोमलवाक् एवं तिक्ष्णवाक् आचार्य, प्रतिभाधुरीण कवि तथा उदारहृदय देशिक रहे हैं। उनके जैसा प्रभविष्णु एवं तरल अध्यापन-कौशल अन्यत्र मिलना कठिन है। वह अपने शिष्यों के लिए वात्सल्य-कल्पतरु जैसे रहे हैं।

अभिराजराजेन्द्र ने अपनी कृतियों में, अपने पूज्य पितृव्य आचार्य आद्याप्रसाद मिश्र के समकक्ष सर्वाधिक निष्ठा शुक्लजी के प्रति ही व्यक्त की है। मिश्रजी ने को विजयते नैव ज्ञातम् नामक एकांकी (रूपरुद्रीयम् में संकलित) में आचार्य शुक्ल को एक निर्णायक पात्र के रूप में भी प्रस्तुत किया है। अभिराजयशोभूषणम् में अपने स्वतंत्र मतों की व्याख्या करते हुए भूषणकार ने शुक्ल को ही उन मतों एवं सिद्धान्तों का उत्प्रेरक एवं उद्भावक माना है। आचार्य आचार्य अभिनव ने जैसी निष्ठा अपने साहित्यगुरु भट्टेन्दुराज के प्रति अथवा क्षेमेन्द्र ने जैसी निष्ठा अभिनव के प्रति व्यक्त की है, ठीक वैसी ही निष्ठा भूषणकार अभिराज आचार्य चण्डिकाप्रसादशुक्ल के प्रति व्यक्त करते हैं।

काव्यशास्त्र के क्षेत्र में आचार्य शुक्ल का विलक्षण योगदान है उनको ध्वन्यालोक-टीका दीपशिखा! यह टीका संस्कृत एवं हिन्दी उभयभाषाओं में प्रणीत है। संस्कृत में तो इसका स्वरूप प्राचीन सञ्जीवनी, सर्वङ्कषा आदि टीकाओं जैसा है, परन्तु हिन्दी भाषा में यह उन्मुक्त व्याख्या के रूप में है। इस टीका में आचार्य अभिनव द्वारा अन्यथा व्याख्यात तथा उन्हीं की देखादेखी महिमभट्ट, भोज, हेमचन्द्र एवं अन्यान्य आचार्यों द्वारा भी त्रुटिपूर्ण ढंग से वगत एवं प्रस्तुत 'ध्वनि' को आचार्य शुक्ल ने उसके यथार्थ परिप्रेक्ष्य में समझाया है, जो ध्वनिकार को अभीष्ट है। आचार्य अभिनव ने ध्वनि एवं सहृदयश्लाघ्य प्रतीयमानार्थ को एक मानकर तथा ध्वनि को पञ्चधा व्याख्यात कर, जिस प्रस्थान-विसंवादी प्रवाह का आरंभ कर दिया था, उसने आनन्दवर्धन के चिन्तन को ही विकृत कर दिया और उनके ध्वनिसिद्धान्त को मिथ्यावगति के कुहासे से आच्छादित कर दिया।

वस्तुतः आचार्य आनन्दवर्धन ध्वनि को समूचे ध्वन्यालोक में एक विशिष्ट काव्य-प्रकार ही मानते हैं, ऐसा काव्य-प्रकार जहाँ काव्यात्मभूत प्रतीयमानार्थ वाच्यार्थ का अतिशायी होता है-

यत्राऽर्थः शब्दो वा तमर्थमुपसर्जनीकृतस्वार्थौ।
व्यङ्क्तः काव्यविशेषः स ध्वनिरिति सूरिभिः कथितः॥

इस कारिका की व्याख्या करते हुए आचार्य शुक्ल ने बड़ी सरलता से ध्वनि को समझाया है। इससे आचार्य अभिनव की उस भ्रान्ति का सर्वथा निराकरण हो जाता है जो 'ध्वनि एवं प्रतीयमानार्थ' के ऐक्य (पर्यायत्व) में निहित है। दीपशिखाकार आचार्य शुक्ल कहते हैं- अयं भावः- काव्यसामान्ये यावानर्थसहायः शब्दविशेषरूपः शब्दसहायो वाऽर्थविशेषरूपोंऽशः प्राधान्येन व्यङ्ग्यमर्थ व्यनक्ति सोंऽशो ध्वनिरित्युच्यते स च सर्वस्य तस्य सामान्यकाव्यस्यात्मा भवति। एवं च वर्ण-पद-वाक्य-प्रबन्ध-प्रकृति प्रत्ययाद्यनन्तभेदभिन्नो ध्वनिः काव्यविशेषरूपः सन् काव्यसामान्ये स्वोपस्थित्या जीवितसञ्चारमिव कुर्वन् तत्राऽत्मपदवीं धारयति। यथा 'निःशेषच्युतचन्दनम् इत्यादिकाव्ये 'अधम' पदरूपेण स्थितो ध्वनिः सम्पूर्णस्यास्य आत्मा साररूपो भवति। सम्पूर्ण चैतत्काव्यं ध्वनिरूपेण परिणमयति- यथाऽत्मा तथा शरीरमिति न्यायेनेत्यर्थः - दीपशिखा

इस प्रकार आनन्दवर्धन की दृष्टि में ध्वनि एक 'काव्यप्रकार' अथवा 'काव्यविशेष' है' नदी-विशेष (गंगा) तरु-विशेष (कल्पद्रुम) अथवा पर्वत-विशेष (सुमेरु) की भाँति। परन्तु वह स्वयमेव व्यङ्ग्यार्थ अथवा प्रतीयमानार्थं नहीं है। ध्वनि प्रतीयमानार्थ का व्यञ्जक है न कि स्वयमेव व्यङ्ग्यार्थ! आचार्य अभिनव ने ध्वनि तथा व्यङ्ग्यार्थ को एक मानकर एक ऐसे भ्रम को प्रवर्तित किया जो पूरे ध्वन्यालोक में लोचन के माध्यम से व्याप्त होने के कारण, आनन्दवर्धन के मूल अभिप्राय को विकृत कर

देता है। ध्वनिकार कहना कुछ चाहते हैं परन्तु लोचनकार उसे 'कुछ और' ही समझाते हैं। दीपशिखाकार आचार्य शुक्ल ध्वन्यालोक की व्याख्या, आनन्दवर्धन के अभीष्ट मन्तव्य एवं दृष्टि के अनुसार करते हैं। उन्होंने लगभग एक हजार वर्षों चली आती ध्वन्यालोकाऽभिप्राय की उत्पथ परम्परा को पुनः सत्पथासीन किया है। तथा विद्वज्जगत् को उपकृत किया है।

4.6.5 नित्यानंद शास्त्री-

बीसवीं सदी के प्रथम चरण में प्रौढ़ और पाण्डित्य पूर्ण संस्कृत काव्य-रचना करने वाले प्राचीन परिपाटी के परिनिष्ठित कवियों में जोधपुर के पं० नित्यानन्द शास्त्री का नाम सुविदित है। इनकी विशिष्ट पहचान बनी इस प्रकार के चित्रकाव्यों की रचना जिनके प्रत्येक पद्य के प्रथमाक्षर को लेकर जोड़ें तो मूल रामायण (वाल्मीकीय रामायण के प्रथम काण्ड का प्रथम सर्ग) बन जाए, प्रत्येक पद्य के चतुर्थ चरण को अलग करें तो कालिदास के मेघदूत के पद्य का चतुर्थ चरण बन जाए। संस्कृत भाषा में ऐसे काव्यों की अलग श्रेणी चित्रकाव्यों के नाम से वर्गीकृत है जिसमें इस प्रकार के शब्द चमत्कार निहित हों। पं० नित्यानन्द शास्त्री ने अपने जीवनकाल में बड़ी संख्या में इस प्रकार के चित्रकाव्यों की रचना की थी। चौदह सर्गों का रामकथा काव्य "श्रीरामचरिताब्धिरत्नम्" उनकी विशिष्ट कृति के रूप में विद्वत्समाज में सुविदित है जिसके प्रत्येक पद्य के प्रथमाक्षर से मूलरामायण बन जाती है। इसी प्रकार "हनुमद्दूतम्" काव्य में पद्यों का चतुर्थ चरण कालिदास के मेघदूत काव्य का चतुर्थ चरण बन जाता है।

लघुच्छन्दोलंकारदर्पण में ग्रन्थकार का यह प्रयास है कि छात्रों और जिज्ञासुओं को छन्दों और अलंकारों का ज्ञान एक ही पुस्तक से प्राप्त हो जाय । प्रस्तुत ग्रन्थ को समग्र रूप से अथवा इससे चयनित प्रमुख छन्दों और अलंकारों के रूप में संस्कृत शिक्षा में यदि सम्मिलित में किया जाय तो छात्रों को सरलता से इन्हें जानने में सुविधा होगी। संस्कृत न जाननेवाले भी देवाराधन के समय संस्कृत श्लोकों का सस्वर पाठ किया करते हैं। उन्हें उन छन्दों, उनके उच्चारण और अर्थ से उत्पन्न सौख्य के प्रति जिज्ञासा होती है। इस दिशा में सर्वसामान्य लोग इस ग्रन्थ से लाभ उठा सकते हैं।

लघुच्छन्दोऽलङ्कारदर्पण ग्रन्थ का अपर नाम देवीस्तवः भी है। प्रस्तुत ग्रन्थ में 39 अलङ्ककारों तथा 40 छन्दों का प्रयोग हुआ है, जिनका विद्वान् आचार्य ने लक्षणोदाहरणपूर्वक प्रस्तुतीकरण भी किया है। इस सदी की चित्रकाव्यरूप यह पाण्डित्यपूर्ण रचना है, जिसमें पं० शास्त्री जी ने चमत्कारपूर्ण शब्दयोजना के माध्यम से प्रत्येक पद्य में एक अलङ्कार तथा एक छन्द का सुन्दर विन्यास किया है। इस ग्रन्थ के प्रकाशक, लेखक के दौहित्र श्रीओमप्रकाश आचार्य हैं। उनकी सूचना के आधार पर पंडित नित्यानंद शास्त्री का समय सन् 1889 ई० से सन् 1961 ई० तक निर्धारित किया जाता है।

4.6.6 कृष्णमाधव झा-

कृष्णमाधव झा का जन्म १०.४.१८९९ ई०, चैत्रशुक्ल प्रतिपत् सन् १३०६ (फसली) साल में हुआ था। आपके पिता बिट्ठो ग्रामवासी बुद्धिनाथ झा, जो गोवर्धन झा के नाम से प्रसिद्ध थे, कर्माहा बेहट मूलक उच्चवंश के वत्सगोत्र के श्रोत्रिय थे। आपकी माता भागेश्वरी देवी नरोने पूरे मूलक अवदात वंश के पराशर गोत्रीय भहरैल ग्रामवासी शिवनन्दन झा की कन्या थीं। मातृकुल में ही आपके बाल्यकाल का अधिक भाग बीता, अतः मातामह का प्रभाव आपके लोकव्यवहार में खान-पान में तथा आचार विचार में पर्याप्त मात्रा में देखा गया और आप इसे अपने श्रीमुख से भी यदा कदा वार्तालाप के क्रम में कहते रहे, साथ ही मातृकुल से लालित पालित होने के कारण उस गाँव से तथा उस गाँव के निवासी आम व्यक्तियों से भी आपका अधिक लगाव देखा गया। पं० कृष्णमाधव झा भी 20वीं शताब्दी की काव्यशास्त्रीय परम्परा के आचार्य हैं। इन्होंने अलङ्कारविद्योतनम् ग्रन्थ की रचना तो सन् 1970 ई० कर दी थी, परन्तु

इसका प्रकाशन सन् 2008 ई० में पुरी, उड़ीसा से हुआ है। यह अलङ्कारशास्त्रीय ग्रन्थ है, जिसमें 124 अलङ्काकारों का लक्षणोदाहरणपूर्वक विवेचन किया गया है। इस ग्रन्थ के सम्पादक डॉ० उदयनाथ झा हैं, जो लेखक के पौत्र हैं। पुस्तक के सम्पादक द्वारा दी गई सूचना तथा पुस्तक में लिखे गये इनके विवरण के आधार पर पं० कृष्णमाधव झा का समय सन् 1894 ई० से सन् 1985 ई० तक निर्धारित किया गया है।

4.6.7 पं० सीताराम शास्त्री-

विद्यामार्तण्ड श्रीमत्पण्डित सीताराम शास्त्री का जन्म फाल्गुन सुदी एकादशी- विक्रमी संवत् 1921 तदनुसार सन् 1865 ई० में जागवाश रियासत (शेखावटी) अलवर, राजस्थान में हुआ था। इनके पिता का नाम पं० मोती राम गौड़ था। ये गौड़ ब्राह्मण थे। पं० सीताराम शाखी दत्तक पुत्र थे। पं० सीताराम शास्त्री अपनी प्रारम्भिक शिक्षा-दीक्षा शेखावटी से प्राप्त कर संस्कृत शिक्षा के लिए काशी चले गये। वहीं से संस्कृत अध्ययन के उपरान्त विद्वत्ता के कारण काशी के पण्डितों द्वारा इन्हें विद्यामार्तण्ड की उपाधि प्रदान की गई। विद्या अध्ययन के अनन्तर वापस आकर 5 फरवरी सन् 1911-12 ई० में इन्होंने श्री हरियाणा शेखावटी ब्रह्मचर्याश्रम संस्कृत महाविद्यालय की स्थापना की, जो वर्तमान समय में महमगेट, भिवानी हरियाणा में पल्लवित पुष्पित हो रहा है। परन्तु जिस समय उन्होंने इसकी स्थापना की नींव रखी थी, उस समय वहाँ केवल एक वट वृक्ष था, जिसके नीचे बैठकर ये छात्रों को पढ़ाया करते थे। विद्यावाचस्पति दयाकृष्ण पन्त (प्राचार्य) ने उस वट वृक्ष (जो आज भी जीर्ण-सौर्ण अवस्था में वर्तमान है) तथा सीताराम शास्त्री के बारे में वट वृक्ष के पास लगे शिलापट्ट पर निम्नलिखित पद्य उत्कीर्ण करवाया है।

पं० सीताराम शास्त्री संस्कृत भाषा के अतिरिक्त अरबिक, परशियन भाषा के भी उद्भट ज्ञाता थे। इन्होंने छः ग्रन्थों की रचना की जो इस प्रकार हैं (1) साहित्योद्देश (2) साहित्यसिद्धान्त (3) श्रीगीताभगवद्भक्तिमीमांसा (4) निरुक्तभाष्य (5) सायदर्शन और (6) श्रीगृह्याग्नि प्रयोगमाला। इन प्रकाशित ग्रन्थों के अतिरिक्त पं० सीताराम शास्त्री द्वारा लिखित 1500 के लगभग हस्तलिखित पाण्डुलिपियाँ उनके आश्रम में मौजूद हैं, जिन्हें स्वयं मैंने भी देखा है। आश्रम की पुस्तकालयाध्यक्षा श्रीमती किरण शर्मा का कहना है कि समस्त विषयों यथा- वेद, व्याकरण, साहित्य, दर्शन, ज्योतिष तथा कृषि आदि पर लिखित ये समस्त पाण्डुलिपियाँ शास्त्री जी द्वारा लिखी गई हैं।

आश्रम में शास्त्री जी द्वारा विरचित 1 मीटर चौड़े तथा 70 मीटर लम्बे कपड़े पर लिखित यन्त्र भी है, जिसमें शास्त्री जी ने सचित्र अनेक तन्त्र-मन्त्र विद्याओं का उल्लेख किया है। संस्कृत के उद्भट विद्वान् पं० सीताराम शास्त्री का, मार्गशीर्ष शुक्ला षष्ठी विक्रमी संवत् 1994 तदनुसार सन् 1938 ई० में देहावसान हो गया।

"साहित्योद्देश" उनकी काव्यशास्त्रीय कृति है, जो पाँच भागों में विभक्त है। इसके प्रथम भाग का नाम पदार्थोदेश है। इसमें 13 पदार्थ शास्त्री जो ने बतलाये हैं- (1) काव्य (2) शब्द (3) अर्थ (4) वृत्ति (5) गुण (6) दोष (7) अलङ्कार (8) रस (9) भाव (10) स्थायिभाव (11) विभाव (12) अनुभाव और (13) व्यभिचारीभाव द्वितीय भाग का नाम काव्यभेद है। इसमें काव्य भेदों का विवेचन है। तृतीय भाग का नाम नाट्यपदार्थावभास है; जिसमें नाट्यतत्त्वों का विवेचन किया गया है। चतुर्थ भाग का नाम नाटक रचना प्रणाली है। इसमें भी नाट्य सम्बन्धी विषयों का ही विवेचन है। पञ्चम भाग का नाम परिशिष्ट सञ्चय है। इसमें सात परिशिष्ट हैं। प्रथम परिशिष्ट में ध्वनि के विशिष्ट नाम, लक्षणा तथा व्यञ्जना के विशिष्ट नाम का विवेचन है। द्वितीय परिशिष्ट में ध्वनि पदार्थ विज्ञान, तृतीय में गुणीभूतव्यङ्ग्यकाव्य

विज्ञान, चतुर्थ में लक्षणा विज्ञान, पञ्चम में व्यभिचारियों की सङ्ख्या का निरूपण है। षष्ठ परिशिष्ट चित्र परिशिष्ट है। इसमें लक्षणा, व्यञ्जना, नायक भेद, नायिका भेद, गुणीभूतव्यङ्ग्यकाव्य, , रस विभावादि तथा नाट्य पदार्थों का सचित्र वर्णन किया गया है। सप्तम परिशिष्ट उदाहरण का है, जिसमें समस्त उदाहरणों को दर्शाया गया है।

"साहित्यसिद्धान्त" ग्रन्थ के प्राक्कथन में पं० सीताराम शास्त्री का कथन है कि प्रकृत ग्रन्थ की रचना उन्होंने साहित्योद्देशनामक संस्कृत ग्रन्थ में विवेचित पदार्थों के विस्तृत व्याख्यान के निमित्त की है। साहित्योद्देश नामक प्रथम ग्रन्थ में साहित्यशास्त्र के जिन 13 पदार्थों का तथा काव्य के अन्य विभिन्न तत्त्वों का विवेचन पं० सीताराम शास्त्री ने सूत्रात्मक शैली में किया था, उसी का विवेचन इस ग्रन्थ में हिन्दी भाषान्तर के साथ विस्तार से किया है। इस ग्रन्थ में तीन प्रकरण हैं। इसके प्रथम प्रकरण का नाम उपोद्घात प्रकरण है। इसमें साहित्यशास्त्र, काव्य, काव्य के प्रयोजन, काव्य का कारण, विषय, काव्यलक्षण, विश्वनाथ के मत में काव्यलक्षण, विश्वनाथ का द्रविड़ प्रणायाम, काव्य के भेद, शब्द, अर्थ, वृत्ति, गुण, दोष, अलङ्कार, रस, भाव, स्थायीभाव, विभाव, अनुभाव, व्याभिचारीभाव आदि का विवेचन है।

इस प्रकार पं० शास्त्री ने अपने दोनों ग्रन्थों में काव्याङ्गो पर विचार-विमर्श किया है। यद्यपि शास्त्री जी ने अपने स्वोपज्ञ लक्षण एवं उदाहरण न प्रस्तुत कर, आचार्य मम्मट के ही दिये हैं, तथापि इन्होंने अपनी टिप्पणियों के द्वारा विषय को सुगमता से समझाने के लिए उसका स्पष्टीकरण किया है। साहित्यसिद्धान्त नामक ग्रन्थ में तो विद्वान् आचार्य ने विषयों पर विस्तारश: व्याख्यान किया है। अनेक तथ्यों का खण्डन-मण्डन करते हुए अपने तर्कों को उपस्थापित किया है।

4.6.8 जगन्नाथ पाठक-

प्रो० जगन्नाथ पाठक का जन्म सन् 1943 ई० में सासाराम, जिला-रोहतास, बिहार प्रान्त में हुआ था। आचार्य, एम्०ए० तथा पी-एच्०डी० की उपाधि से समलंकृत प्रो० पाठक गङ्गानाथ झा शोध संस्थान, इलाहाबाद (वर्तमान में राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान) के अवकाश प्राप्त आचार्य एवं प्राचार्य हैं। प्रो० पाठक ने उमरखय्याम की परम्परा को भारतीय परम्परा से संस्कारित किया तथा खय्याम की रुबाइयों से प्रेरित होकर संस्कृत में सहस्रसङ्ख्यक मुक्तकों की रचना की। कापिशायनी (1980-साहित्य अकादमी दिल्ली से पुरस्कृत), मृद्वीका- (1983- के० के० विडला फाउण्डेशन वाचस्पति पुरस्कार से पुरस्कृत), पिपासा (1987) आदि इनके प्रकाशित प्रमुख काव्यसंग्रह हैं। पत्रलेखा के पत्र, ध्वन्यालोक, ध्वन्यालोकलोचन और हर्षचरितम् आदि कृतियों का अनुवाद तथा संस्कृत वाङ्मय के बृहद् इतिहास के सप्तम खण्ड का सम्पादन भी प्रो० पाठक ने किया है। प्रो० पाठक सन् 43 ई० से वर्तमान समय तक संस्कृत सुरभारती की सेवा में सनद्ध हैं।

सौन्दर्यकारिका उनका काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ है। प्रस्तुत ग्रन्थ में सौन्दर्य को परिभाषित करते हुए उसके विविध पक्षों तथा विविध मतों का उदाहरण सहित विवेचन किया गया है। इस ग्रन्थ में आर्या छन्द में निबद्ध 102 कारिकाएँ हैं, जिनमें सौन्दर्य के स्वरूप का उद्घाटन किया गया है। इन कारिकाओं पर वृत्ति लिखकर विद्वान् ने विषयवस्तु को अधिक स्पष्ट करने का प्रयास किया है। इनका मत है कि ब्रह्म और सौन्दर्य दोनों एक ही हैं। इसका स्पष्टीकरण प्रो० पाठक की अधोलिखित कारिकाओं में होता है

मनुष्याणांसहस्त्रेषु कश्चिद् यज़ति सिद्धये ।
यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्वत: ॥

गीता के प्रस्तुत श्लोक के आधार पर प्रो० पाठक की अवधारणा है-

तप इति मत्वा यत्नः कार्यः सौन्दर्यसाधकैः सम्यक्।
नो चेल्लध्वी त्रुटिरपि प्रयत्नशीलं निपातयति।।
सौन्दर्यादुत्पद्यत एतत् सर्वं प्रतिष्ठिते च ततः।
अनुसंविशति च तस्मिन्निति सौन्दर्यास्थिता दृष्टिः।।

कवि ने ग्रन्थ की सम्पूर्ण कारिकाओं में सौन्दर्य के महत्व को प्रतिपादित किया है। उनका मत है कि यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड ही सौन्दर्य का विस्फुरण है। सम्पूर्ण पदार्थों की उत्पत्ति सौन्दर्य से होती है, सौन्दर्य में ही उनकी अवस्थिति रहती है तथा उनका पर्यवसान भी उसी में होता है। पुनः अथोलिखित कारिकाओं में प्रो० पाठक की मान्यताओं का स्फुट अवलोकन विमर्शनीय है

शब्दरश्च समंन क्रीडा किमपि काव्यमित्याहुः ।
सौन्दर्य किञ्चिदिव क्षणं स्पृशत्यादृता कविता ।।
सौन्दर्यस्यकला नु प्रत्यक्षीकर्तुमुच्यते करणम् ।
यत्र श्रीयंत्र रसो यत्र प्राणास्ततो नु कला ।।
कमलैनमि सपत्रैः पूर्णो घटः कलाक्षेत्रे
जीवनजलपरिकलितं तनुसौन्दर्य प्रकाशयति ।।
प्राणविंना न जीवनमेदं न तपो बिना उरित सौन्दर्यम् ।
निर्मित एवं शिल्पिभिरीशी बुद्धस्तपोनिष्ठः ।।
पुरारौ च मुरारौ च न भेदः परमार्थतः ।
तथापि परमां प्रीतिं करवै मुरवैरिणि ।
निर्माण यदधीनं महतः काव्यस्य लोकमान्यस्य ।
सौन्दर्य हि तदेकं सुधियामेतनु वक्तव्यम् ।

इस प्रकार इस कृति में विद्वान् आचार्य ने सौन्दर्य को ब्रह्मरूप में प्रतिष्ठित किया है तथा इसे कला और साहित्य का सर्वस्व बतलाया है। कवि का मन्तव्य है कि सौन्दर्य ही सम्पूर्ण सृष्टि में प्रतिभाषित हो रहा है। इसलिए उन्होंने सौन्दर्य को सर्वस्व मानते हुए अपनी समस्त कारिकाओं में सोदाहरण प्रस्तुत किया है। प्रस्तुत ग्रंथ सौंदर्य पिपासा युक्त जिज्ञासुओं को उसकी आध्यात्मिकता के साथ ज्ञान कराने वाला इस सदी का महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है।

इस प्रकार आधुनिक काव्यशास्त्रीय परम्परा के आचार्यों का संक्षिप्त परिचय एवं उनका आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्रीय परम्परा में योगदान को प्रस्तुत किया गया है।

4.7 सारांश

इस पाठ में बिंदुवार दिए गए आधुनिक काव्य शास्त्रियों के जीवन परिचय एवं आधुनिक काव्यशास्त्र में उनके द्वारा दिए गए योगदान के विवरण से आप संस्कृत साहित्य के प्रमुख आधुनिक काव्य शास्त्रियों के जीवन को जान सके हैं। साथ ही उनके कार्यों की चर्चा से उनके द्वारा किए गए विविध प्रकार के संस्कृत काव्य शास्त्रीय योगदान से भी परिचित हो सके हैं। इन सब चर्चाओं से निष्कर्ष रूप में यह बात सामने आती है कि जितनी गौरवशालिनी संस्कृत काव्यशास्त्र की पुरातन परंपरा रही है उतनी ही उज्जवल व समृद्ध आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र की परंपरा भी बन रही है।

हमने इस अध्याय में विविध काव्य शास्त्रियों के ग्रंथों का सामान्य परिचय प्राप्त किया है जो कि हमको संस्कृत के आधुनिक काव्य शास्त्र के विविध आयामों से परिचित करवाता है। इस पाठ के अध्ययन से हम यह भी जान पाए हैं कि किस तरह काल का प्रभाव काव्य और काव्यशास्त्र पर भी देखने

को मिलता है विभिन्न कवियों और काव्य शास्त्रियों की रचना धर्मिता पर काल का प्रभाव होता है यह हम आधुनिक काव्यशास्त्र की श्रृंखला के अध्ययन से जान पाए हैं। एक बात विशेष रूप से सामने आती है कि संस्कृत का परंपरागत पूर्व का काव्यशास्त्र आधुनिक रचनाकारों द्वारा निर्मित काव्यशास्त्र की आधार भूमि है अतः आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र की जो आधार भूमि है वह अत्यंत सुदृढ़ है इसलिए आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र के छात्रों को बहुआयामी चिंतन का अवसर इस पाठ के अध्ययन के उपरांत प्राप्त होता है।

4.8 शब्दावली

सर्जन	-	रचना \लेखन
प्रकृत ग्रन्थ	-	जिस ग्रन्थ की चर्चा की जा रही हो
कवितावनिता	-	कविता रूपी नायिका
ह्लाद	-	सुख\आनन्द
चर्वणा	-	रसानुभव की प्रक्रिया
उद्गार	-	हृदय से निकलने वाले भाव
अभिषिक्त	-	बैठाया गया
मर्मज्ञ	-	तत्त्वज्ञ
स्वोपज्ञ	-	स्वयं के द्वारा रचित
अभिनन्द्य	-	अभिनन्दन करके

4.9 अभ्यासार्थ प्रश्न- उत्तर

बोध/अभ्यास प्रश्न-

1. पं.छज्जूरामशास्त्री का जन्म किस प्रदेश में हुआ ?

उत्तर. पं.छज्जूरामशास्त्री का जन्म हरियाणा प्रदेश में हुआ।

2. पं.छज्जूरामशास्त्री जी को 'विद्यासागर' की पदवी किसने प्रदान की?

उत्तर. पं.छज्जूरामशास्त्री जी को गोवर्धन मठाधीश जगद्गुरु शङ्कराचार्य श्रीभारती कृष्णतीर्थ ने 'विद्यासागर' की पदवी प्रदान की।

3. साहित्यबिन्दु किसकी रचना है ?

उत्तर. साहित्यबिन्दु पं.छज्जूरामशास्त्री जी की रचना है।

4. चमत्कार को किस आचार्य ने काव्य की आत्मा स्वीकार किया ?

उत्तर. चमत्कार को डॉ० रामप्रताप वेदालङ्कार ने काव्य की आत्मा स्वीकार किया।

5. पं. गिरधारीलाल शर्मा के काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ का नाम बताइये।

उत्तर. पं. गिरधारीलाल शर्मा के काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ का नाम अभिनवकाव्यप्रकाश है।

6. नव्यकाव्यतत्त्वमीमांसा किसकी रचना है ?

उत्तर. नव्यकाव्यतत्त्वमीमांसा आचार्य रहसविहारी द्विवेदी की रचना है।

7. प्रो० शिवजी उपाध्याय रचित दो काव्यों के नाम बताइये।

उत्तर. प्रो० शिवजी उपाध्याय रचित दो काव्यों के नाम शक्तिशतकम् तथा कुम्भशतकम् हैं।

8. साहित्यसन्दर्भ किसकी रचना है ?

उत्तर. साहित्यसन्दर्भ प्रो० शिवजी उपाध्याय की रचना है।

9. सीताराम शास्त्री जी के 2 काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों के नाम लिखिये।

उत्तर. सीताराम शास्त्री जी के 2 काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों के नाम साहित्योद्देश एवं साहित्यसिद्धान्त है।

10. सौन्दर्यकारिका किसकी रचना है ?

उत्तर. सौन्दर्यकारिका प्रो० जगन्नाथ पाठक की रचना है।

4.10 उपयोगी पुस्तकें

1. साहित्यबिन्दु
2. नव्यकाव्यतत्त्वमीमांसा
3. साहित्यसन्दर्भ
4. सौन्दर्यकारिका
5. संस्कृत का अर्वाचीन समीक्षात्मक काव्यशास्त्र
6. आधुनिक संस्कृत काव्य परम्परा
7. संस्कृत साहित्य - बींसवी शताब्दी
8. संस्कृत काव्यशास्त्र का आलोचनात्मक इतिहास

4.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1. छज्जू राम शर्मा के व्यक्तित्व, एवं आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र में उनके योगदान पर प्रकाश डालिये।
2. आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र में पं० सीताराम शास्त्री का क्या योगदान है ?
3. आचार्य चण्डिकाप्रसाद शुक्ल का जीवन परिचय, एवं आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र में उनके योगदान पर प्रकाश डालिये।
4. रामप्रताप वैदिक के अनुसार चमत्कार शब्द की व्याख्या कीजिए।